भाकृअनुप
ICAR

उत्कृष्टता की ओर बढ़ते कदम

इक्षु

राजभाषा पत्रिका

वर्ष 8 अंक 1
जनवरी–जून, 2019

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

संस्थान द्वारा वर्ष 2018–19 में विकसित गन्ना की नई किस्में

कोलख 11203

कोलख 11206

कोलख 12207

कोलख 12209

इक्षु: राजभाषा पत्रिका

वर्ष 8 : अंक 1

जनवरी–जून, 2019

इक्षु

संरक्षक एवं प्रकाशक

अश्विनी दत्त पाठक

सम्पादक

अजय कुमार साह

सह–सम्पादक

मनोज कुमार त्रिपाठी

ब्रह्म प्रकाश

अभिषेक कुमार सिंह

कला एवं छायांकन

विपिन धवन

योगेश मोहन सिंह

अवधेश कुमार यादव

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान

लखनऊ–226 002

© भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अपने लेख एवं सुझाव भेजें :

संपादक, इक्षु एवं
प्रभारी, राजभाषा प्रकोष्ठ
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ–226 002
ई–मेल : ikshuiisr@yahoo.in

वर्ष 2019 : संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक	अध्यक्ष
डॉ. डी.आर. मालवीय	सदस्य
डॉ. वी.पी. सिंह	सदस्य
डॉ. (श्रीमती) राधा जैन	सदस्य
डॉ. महाराम सिंह	सदस्य
डॉ. ए.के. सिंह (कृषि अभियंत्रण)	सदस्य
डॉ. एस.आई. अनवर	सदस्य
डॉ. ए.पी. द्विवेदी	सदस्य
वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी	सदस्य
श्री अतुल सचान	सदस्य
श्रीमती आशा गौड़	सदस्य
श्री अभिषेक कुमार सिंह	सदस्य
डॉ. अजय कुमार साह	सदस्य सचिव

प्रकाशक
निदेशक
भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
रायबरेली रोड, पोस्ट : दिलकुशा, लखनऊ 226 002
फोन : 0522–2961318 फैक्स : 0522–2480738
ई–मेल : director.sugarcane@icar.gov.in
वेबसाइट : www.iisr.nic.in

मुद्रित : आर्मी प्रिंटिंग प्रेस, 33, नेहरू रोड, सदर कैण्ट, लखनऊ–226002, फोन : 0522–2481164

डॉ. अश्विनी दत्त पाठक
निदेशक

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

निदेशक की लेखनी से..........

गन्ना किस्म विकास में उत्साहजनक उपलब्धि के कारण वर्ष 2018–19 संस्थान के लिए स्वर्णिम वर्ष रहा। गत वर्ष संस्थान द्वारा विकसित गन्ने की चार उच्च उत्पादकता एवं रोगरोधी किस्में जैसे कोलख 11203 (अगेती) तथा कोलख 11206 (मध्य देरी) उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र के लिये; कोलख 12207 (अगेती) उत्तर–मध्य क्षेत्र के लिये; कोलख 12209 (मध्य देरी) उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के लिये व्यावसायिक गन्ना खेती के लिये संस्तुति की गयीं। संस्थान द्वारा पूर्व में विकसित कोलख 94184 किस्म पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं बिहार के जलभराव तथा बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में अत्यंत लोकप्रिय हो रही है।

बावक गन्ना–पेड़ी प्रणाली में 0.65 प्रतिशत से अधिक मृदा जैविक कार्बन की उपलब्धता के साथ पोषक तत्वों की संस्तुत मात्रा की आपूर्ति से गन्ना की लाभदायक उपज मिलती है; मृदा के इस जैविक कार्बन स्तर से अवशेष पुनर्चकरण तथा मृदा स्वास्थ्य तो सुधरता ही है, साथ ही लागत में कमी तथा अतिरिक्त उपज से लगभग रूपये 1000 करोड़ का अतिरिक्त वार्षिक लाभ भी मिलता है। यह परिणाम नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश की 100 प्रतिशत संस्तुत मात्रा को ड्रिप–फर्टिगेशन द्वारा प्रयोग करने पर पाया गया है। ड्रिप–फर्टिगेशन उपचारों में पारंपरिक रोपाई की तुलना में खरपतवारों का प्रकोप भी कम पाया गया। यह परिणाम हमें नयी ऊर्जा तथा उत्साह प्रदान करता है।

शोध उपरांत प्राप्त उपलब्धियों तथा विकसित तकनीकों को हम देश–भर के किसानों के साथ साझा करने में भी सफल हुये हैं। गत वर्श लगभग एक लाख से अधिक उन्नतशील किसानों ने संस्थान का भ्रमण किया। पीपीएफपी (पब्लिक–प्राइवेट–फार्मर पार्टनरशिप) मोड के अंतर्गत चल रही मुख्य परियोजनाओं के अंतर्गत विभिन्न किसानों के खेतों पर तकनीकों को प्रदर्शित किया गया। गत वर्ष डीएससीएल शुगर के साथ पीपीपी मोड में 8 गावों में चल रही परियोजना के अंतर्गत पेड़ी प्रबंधन, भूमि समतलीकरण, बीज उत्पादन कार्यक्रम, प्रजाति चयन, गहरी नाली में रोपाई, टपक सिंचाई, फर्टिगेशन के साथ अन्य हस्तक्षेप जैसे पशु पालन, दुग्ध उत्पादन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन व अन्य कुटीर उदयोग आरंभ किए गए। गत वर्ष तीन प्रक्षेत्र दिवस किसानों के खेतों पर तथा संस्थान में कई प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए जिसमें 1000 से अधिक किसानों को कृषि में व्यवसाय तथा उद्यमिता विकास पर प्रशिक्षण दिया गया।

संस्थान के उपरोक्त प्रयासों ने राष्ट्रीय स्तर पर अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। वर्ष 2018–19 में देश में 330 लाख टन तथा उत्तर प्रदेश में 118.3 लाख चीनी का रिकार्ड उत्पादन हुआ तथा साथ ही रिकॉर्ड चीनी परता (11.48 प्रतिशत) भी दर्ज की गई। संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका 'इक्षु' भी गन्ना सहित सभी धान्य, दलहनी, तिलहनी, बागवानी फसलों के उत्पादन एवं पशु पालन की उन्नत प्रौद्योगिकी के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि इक्षु का प्रस्तुत अंक किसानों तथा सभी वर्ग के पाठकों के लिए रोचक तथा ज्ञानवर्धक होगा।

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 30 जून, 2019

(अश्विनी दत्त पाठक)

डॉ. अजय कुमार साह
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी, प्रसार व प्रशिक्षण
संपादक (इक्षु) एवं प्रभारी, राजभाषा प्रभाग

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ–226002

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ
ISO 9001 : 2015

'इक्षु–सार'

बिना जल के जीवन की कल्पना नहीं कि जा सकती है। धरती का दो तिहाई हिस्सा जल से भरा हुआ है। इसके बावजूद पीने योग्य शुद्ध जल धरती पर उपलब्ध जल का सिर्फ एक प्रतिशत हिस्सा ही है। महासागर में खारा पानी के रूप में कुल जल का 97 प्रतिशत हिस्सा है तथा शेश दो प्रतिशत जल बर्फ के रूप में है। पानी की सीमित उपलब्धता तथा जीवन के लिए अति महत्वपूर्ण प्राकृतिक संपदा होने के बावजूद हम इसके संरक्षण के प्रति संवेदनशील नहीं है। शायद यही कारण है कि देश के कई हिस्से तथा विश्व के कई भूभागों में विगत कुछ वर्शो में जल की कमी महा संकट के रूप में परिलक्षित हुआ है।

देश के कुछ हिस्सों में एक–एक घड़े शुद्ध पेयजल के लिए मीलों चलना पड़ता है। कई बड़े शहरों में एक बड़ी आबादी अपने रोज मर्रा के कार्य के लिए घंटों कतारों में खड़े होकर टैंकर या ट्रेन से जल प्राप्त कर रहे हैं। जल के अभाव में पशु पक्षी भी मिलों भटकने को मजबूर हैं। धरती से हरियाली गायब होते जा रही है। जल की कमी के कारण खेत में हरे–भरे फसलों ने भी लह–लहाना बंद कर दिया है। खेती बाड़ी चौपट हो जाने के कारण किसान आर्थिक तंगी से परेशान हैं। इन सभी संकटों को संज्ञान में लेते हुए भारत सरकार ने स्वच्छता अभियान की तर्ज पर जल शक्ति अभियान की शुरूआत की है। इस अभियान के अंतर्गत देश के 256 जिलों में 1292 खंड़ों में इस वर्श जल संरक्षण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। "मन की बात" कार्यक्रम में देश के प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने अलग–अलग क्षेत्र की हस्तियों से जल संरक्षण के क्षेत्र में नवोन्मेशी अभियान चलाने का आग्रह किया हैं। आइए हम सब मिलकर जल संरक्षण में अपना योगदान दें तथा समाज में इस जिम्मेदारी के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास करें।

'इक्षु' का यह अंक फिर से एक बार ज्ञान का गुलदस्ता लेकर आपके समक्ष प्रस्तुत है। इस अंक में राजभाशा, ज्ञान–विज्ञान, आरोग्य एवं संजीवनी, आमोद–प्रमोद तथा शब्दकोश जैसे प्रभागों के अंतर्गत प्रस्तुत जानकारी अत्यंत रोचक एवं ज्ञानवर्धक है।

'इक्षु' में आलेख भेजने के लिए मैं सभी लेखकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ तथा आशा करता हूँ की भविश्य में भी आप सभी उत्साह पूर्वक सहयोग करते रहेंगे। इक्षु को राश्ट्रीय स्तर पर प्रतिश्ठित राजभाशा पत्रिका के रूप में स्थापित करने के रूप में पाठकों के बीच इस पत्रिका की लोकप्रियता ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके लिए मैं पाठकों के प्रति विनम्रता पूर्वक आभार व्यक्त करता हूँ।

स्थान : लखनऊ
दिनांक : 30 जून, 2019

(अजय कुमार साह)

इक्षु: राजभाषा पत्रिका
राजभाषा प्रकोष्ठ की अर्धवार्षिक पत्रिका
वर्ष 8 : अंक 1
जनवरी–जून, 2019

विषय वस्तु

राजभाषा प्रभाग 1–14

वैश्विक बाजारवाद में उभरती भाषाई चुनौतियाँ और हिंदी 1
उषा सिन्हा

राजभाषा विभाग एवं सहयोगी पत्रिकाएं : एक परिचय 3
कृष्णवीर सिंह सिकरवार

यद्यपि आसान नहीं नामवर होना पर नामवर सिंह का नाम सदा रहेगा अमर 6
ब्रह्म प्रकाश, अभिषेक कुमार सिंह एवं अजय कुमार साह

विज्ञान के प्रसार में भाषा की भूमिका 10
सी.पी. सिंह एवं देवेन्द्र सिंह

गन्ना और शर्करा ज्ञान–विज्ञान में हम भारतीय अग्रणी 11
अशोक कुमार श्रीवास्तव

ज्ञान–विज्ञान प्रभाग 15–91

गन्ना प्रजनन से फसल सुधार 15
राघवेन्द्र कुमार एवं संगीता श्रीवास्तव

भारत में ग्रामीण उद्यमिता हेतु जैविक गुड़ उत्पादन एवं उसका मूल्यवर्धन 22
प्रियंका सिंह

गन्ने के स्वस्थ और गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन हेतु फसल प्रबंधन 27
वरुचा मिश्रा, आशुतोष कुमार मल्ल, मुकेश कुमार, सी.पी. प्रजापति एवं अश्विनी दत्त पाठक

गन्ने से अधिक जैव–इथेनाल उत्पादन ही किसानों एवं मिल मालिकों की समस्या का एक मात्र विकल्प 29
राम जी लाल एवं राजेश कुमार

गन्ने की दोहरी पंक्ति नाली बुवाई विधि 31
कामता प्रसाद, ए.के. साह, बरसाती लाल, दिलीप कुमार एवं राम रतन वर्मा

गन्ना: चुनौतियाँ सस्य तकनीक 33
आदित्य प्रकाश द्विवेदी, सुधीर कुमार शुक्ल, वेद प्रकाश सिंह, मनोज कुमार त्रिपाठी, संजीव कुमार, के.के. सिंह, एस.आर. सिंह एवं विनय कुमार सिंह

जस्ता : मनुष्य एवं पादप पोषण के लिए आवश्यक तत्व 39
आनन्द सिंह, उदय प्रताप शाही एवं प्रेम सिंह

कांग्रेस घास के प्रभाव और नियंत्रण 41
हिमांशु राय एवं पी.के. सिंह

फसल उत्पादन में जैव उर्वरकों का उपयोग एवं महत्व 43
अनूप कुमार, अभिषेक सागर, विन्नी जॉन, अमित कुमार मौर्या और मुकेश कुमार

जैविक खेती का महत्व 46
प्रदीप कुमार सिंह एवं विवेकानंद सिंह

मृदा की उर्वरा शक्ति एवं अधिक फसलोत्पादन हेतु हरी खाद की उपयोगिता 50
ओम प्रकाश, अजय कुमार साह, अश्विनी दत्त पाठक, ब्रह्म प्रकाश एवं पल्लवी यादव

जीवाणु खाद : मृदा में पोषक तत्व प्रबंधन का उत्तम स्रोत 53
दिव्या साहनी, संगीता श्रीवास्तव, संजय अरोड़ा एवं राघवेन्द्र श्रीवास्तव

फसल अवशेष प्रबन्धन मृदा स्वास्थ्य के लिए वरदान 55
रेनू आर्या, सोनम आर्या एवं आर.एल. आर्या

कृषि में बंदरों के शरारती क्रियाकलाप से कृषि उपज की सुरक्षा 57
यीतेश कुमार, अभिषेक कुमार सिंह, पंकज भार्गव, अनुप्रिया चंद्राकार एवं मनीषा अद्दकी

गन्ने के लाल सड़न रोग नियंत्रण हेतु प्रयोगशाला में किये जाने वाले शोध कार्य 62
पल्लवी, दिनेश सिंह, प्रियम वन्दना एवं देवेन्द्र सिंह

गन्ना खेती में सुगमता व कार्यक्षमता बढ़ाने वाले उन्नत यंत्र 64
सुखबीर सिंह, अखिलेश कुमार सिंह एवं अजय कुमार साह

पावर टिलर की उचित देखभाल, रख–रखाव व सावधानी 66
सुखबीर सिंह एवं अखिलेश कुमार सिंह

सूर्यजनित ऊर्जा का ग्रामीण विकास में महत्व 68
अर्चना सिंह

स्टीविया रेबाडीया (स्टीविया) 0 प्रतिशत कैलोरी, 100 प्रतिशत मीठा, 100 प्रतिशत प्राकृतिक 71
अभय कुमार श्रीवास्तव, वी.पी. जयसवाल, एस.के. शुक्ल, लालन शर्मा, आशा गौड़ एवं राघवेन्द्र तिवारी
सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती 73
विनोद कुमार सिंह, सुरेश सिंह एवं ऋचा सिंह
कुसुम वृक्ष एवं लाख की खेती 76
ए.के. जायसवाल, एस.एन. सुशील एवं शर्मीला रॉय
सूखा प्रभावित क्षेत्रों में घास लगाकर कमाएं लाभ 82
आदित्य कुमार सिंह, सत्यम चौरिहा, सतीश पाठक एवं धीरेन्द्र कुमार
मैदानी क्षेत्रों में आलू उत्पादन की वैज्ञानिक खेती 84
एस.के. यादव, राज कुमार सिंह एवं सरला यादव
लघु कृषकों हेतु बकरी पालन एवं उद्यमिता विकास 88
दीप नारायण सिंह, रजनीश सिरोही, यजुवेन्द्र सिंह, अजय कुमार एवं ममता

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग 92–98
गर्मी में ऐसे रखें अपने भोजन का ध्यान 92
अनीता सावनानी
आपातकालीन प्राथमिक पशु चिकित्सा 94
अतुल कुमार सचान, राजेश कुमार, अभिषेक कुमार सिंह, आर.के. सिंह एवं कामता प्रसाद
पशुओं में प्रसूति ज्वर : लक्षण एवं उपचार 97
कामता प्रसाद, कमलाकांत, राकेश कुमार सिंह, निकिथा एल., अतुल सचान, अभिषेक कुमार सिंह, दिलीप कुमार एवं राम रतन वर्मा

आमोद–प्रमोद प्रभाग 99–113
चौरासी घाटों की नगरी : बनारस 99
राजेश सहाय
समाज में नैतिक शिक्षा की अनिवार्यता 103
अलका दिवेदी एवं अनीता सावनानी
पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में रोजगार 104
आशीष सिंह यादव, शर्मीला रॉय एवं ब्रह्म प्रकाश
माता–पिता 106
आर.एस. चौरसिया
महानगर प्रवास 107
सुधीर कुमार एवं आशा यादव
सोया हुआ आदमी संसार को सिर्फ भोगता है, देखता नहीं 108
तारूक नाथ एवं आर.एस. चौरसिया
दीर्घजीवी होती है विनम्रता 108
आर.के. सिंह एवं आर.एस. चौरसिया
यूनीकोड–तनिक सुधार की आवश्यकता 109
एस.आई. अनवर एवं प्रगति सिंह
माँ के अलौकिक रूप 109
पल्लवी यादव
भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान–उत्कृष्टता का दूसरा नाम 110
अनीता सावनानी, ब्रह्मप्रकाश एवं अजय कुमार साह
गन्ने की गुड़ाई के लिए यह कहावत प्रसिद्ध है 111
कृष्ण मुरारी सिंह "किसान"
बिन माटी सब सूना है, फिर भी मिट्टी सोना है 111
अरुण कुमार
ये परम ज्ञान की बातें हैं, इसको हर कोई क्या जाने 112
ब्रह्म प्रकाश

नाराकास प्रभाग
नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (कार्यालय–3), लखनऊ छमाही प्रगति 114
शब्दकोश 115
आपके पत्र 119
समाचार प्रभाग 120

राजभाषा प्रभाग

वैश्विक बाजारवाद में उभरती भाषाई चुनौतियाँ और हिंदी

उषा सिन्हा

पूर्व अध्यक्ष, भाषा विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

भूमंडलीकरण अथवा वैश्वीकरण अंग्रेजी शब्द *'ग्लोबलाइजेशन'* का हिंदी पर्याय है। भूमंडलीकरण एक जटिल आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें समय और दूरी के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र की सीमाओं को तोड़कर चलने वाले उन्मुक्त व्यापार का यथार्थ है। वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण की राजनीति, संस्कृति, अर्थतंत्र, बाजारवाद, प्रौद्योगिकी, संचार-माध्यम आदि क्षेत्रों में विशेष भूमिका रही है। इसे विश्वग्राम की संज्ञा दी गई है। यह अवधारणा भारत में प्राचीनकाल से चली आ रही 'वसुधैव कुटुंबकम्' की अवधारणा के निकट दिखाई देती है किंतु 'विश्वग्राम' का यह दर्शन 'वसुधैव कुटुंबकम् के बिल्कुल विपरीत है। क्षेत्र, प्रदेश और राष्ट्र की सीमाओं को पार करते हुए विश्व समुदाय के साथ आर्थिक, बौद्धिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, भाषा और साहित्य के क्षेत्र में सहभागिता एवं आदान-प्रदान करना ही वैश्वीकरण है। इसी संदर्भ में आर्थिक निर्भरता एवं विश्व-बाजार का निर्माण हो रहा है। इसमें एक देश के अर्थतंत्र को विश्व की अर्थ-व्यवस्था से जोड़ने का प्रयास है। वास्तव में पूँजी का उन्मुक्त प्रयास सुनिश्चित करना वैश्वीकरण का उद्देश्य है। इसमें बाजार का विशेष योगदान है। वैश्विक अर्थ-व्यवस्थाएँ परस्पर निकट आती हैं जिसके फलस्वरूप विश्व-व्यापार, वित्त-निवेश तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों का विस्तार होता है। इसमें उदारीकरण एवं निजीकरण का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। परिणामतः आज पूरा विश्व एक बाजार बन गया है जहाँ प्रत्येक वस्तु उपभोग की एक वस्तु बन गई है। कुछ विद्वान वैश्वीकरण को नव-साम्राज्यवाद की संज्ञा देते हैं। इस वैश्वीकरण में उच्च प्रौद्योगिकी और संचार माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसमें आर्थिक एकीकरण के साथ-साथ सांस्कृतिक एकीकरण की प्रक्रिया भी परोक्ष रूप में चलती रहती है।

भूमंडलीकरण की राजनीति, संस्कृति, अर्थतंत्र, बाजारवाद, प्रौद्योगिकी एवं संचार-माध्यमों आदि क्षेत्रों में विशेष भूमिका रही है। ऐसे में प्रत्येक देश की अपनी सांस्कृतिक पहचान और अस्मिता खतरे में पड़ने की संभावना भी बढ़ी है। भाषा, साहित्य और संस्कृति का संकट भी उद्भूत हुआ है। चूँकि भूमंडलीकरण का संबंध बाजार से है और बाजार भाषाओं के बाहुल्य को स्वीकार नहीं करता, वह केवल एक भाषा को लाने की कोशिश करता है। वह अधिक भाषाओं को उतना ही सहन करता है जितना उसके वाणिज्य-व्यापार में बाधा न डाले। अतः वही भाषा स्थायी रह सकती है जिसकी अपनी अस्मिता या पहचान हो। विद्वानों का मानना है कि वैश्विक बाजारवाद के बढ़ते कदम राष्ट्रीय सीमाओं को मिटा देंगे। दुनिया को एकीकृत बाजार में बदलकर क्षेत्रीय और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक परंपराओं, रीति-रिवाजों और मिथकों को निष्प्राण कर देंगे। इससे भाषा, साहित्य, उसकी विभिन्न विधाएँ और शैलियाँ भी गंभीर रूप से प्रभावित होंगी।

वैश्विक बाजारवाद के कारण ही आज अमेरिकी इंगलिश, राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक संदर्भों में अपना वर्चस्व बना रही है। साम्राज्यवादी अंग्रेजी जहाँ राजनैतिक प्रभुत्व का पर्यायवाची थी वहाँ आज की अंग्रेजी अंतर्राष्ट्रीय संवाद का एक सक्षम माध्यम बनकर उभर रही है। स्थानीय भाषा के रूप में विश्व में अंग्रेजी के विभिन्न रूप मिलते हैं- ब्रिटिश इंगलिश, नाइजीरियाई इंगलिश, आस्ट्रेलियाई इंगलिश, सिंगापुरी इंगलिश और इंडियन इंगलिश आदि। इंडियन इंगलिश में ब्रिटिश व अमेरिकन इंगलिश के अतिरिक्त, भारतीय संस्कृति का प्रभाव भी देखा जा सकता है।

वैश्विक बाजारवाद के कारण ही विश्व के अनेक देशों के लिए भारत एक लाभदायी बाजार के रूप में विकसित हो रहा है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों का जाल बिछ रहा है। फलतः अंग्रेजी का वर्चस्व भारत के प्रशासन, राजनीति, शिक्षा, विज्ञान, वाणिज्य और व्यापार में बढ़ा है। भले ही यह भारतीय इंगलिश के विभिन्न रूपों में हो रहा हो। पाश्चात्य संस्कृति और अंग्रेजी भाषा एवं साहित्य से भारतीय संस्कृति, शिक्षा तथा भाषाएँ प्रभावित हुई हैं। साथ ही रोजगार की भाषा के रूप में लोकप्रियता भी बढ़ती जा रही है। उल्लेखनीय है कि अंग्रेजी भाषी देशों ने विश्व में जो आर्थिक प्रभुत्व प्राप्त किया है उसके कारण वैश्विक प्रभुत्व का स्तर अंग्रेजी को प्राप्त हुआ है। यह भी उल्लेखनीय है कि बाजारवाद के कारण अनेक चुनौतियों के साथ भाषाई चुनौतियाँ भी उभरी हैं और अनेक भाषाएँ अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्षरत हैं।

हिंदी भी अंग्रेजी के मुकाबले भूमंडलीय भाषा का रूप धारण करने की दिशा में प्रयासरत है। प्रयोजनपरक भाषा के रूप में हिंदी का विस्तार हुआ है। उद्यम, व्यापार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान तथा अनेक देशों में वैश्विक बाजारवाद के फलस्वरूप हिंदी प्रगति पथ पर अग्रसर है। कार्यालयी हिंदी, वैज्ञानिक व तकनीकी हिंदी, संचारी हिंदी, वाणिज्यिक हिंदी एवं साहत्यिक हिंदी-विविध व्यवहार क्षेत्र हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कर्मचारी यहाँ अपना व्यापार

बढ़ाने के लिए संपर्क भाषा के रूप में हिंदी को अपना रहे हैं। लेकिन हिंदी में अन्य भाषाओं व संस्कृति का प्रभाव पड़ा है और शब्दों का मिश्रण भी हुआ है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी का भूमंडलीय रूप विभिन्न रूपों में मिलता है यथा-क्रियोली हिंदी, सरनामी हिंदी, ताजिकी हिंदी, त्रिनी हिंदी एवं नेपाली हिंदी आदि। भारत में भी हैदराबादी हिंदी, पंजाबी हिंदी, कलकतिया व मुंबइया हिंदी तथा मद्रासी हिंदी आदि स्थानीय रूप भी है। जिनमें भिन्न भाषिक, सामाजिक व सांस्कृतिक प्रभाव दृष्टिगत होता है।

वैश्विक बाजारवाद के फलस्वरूप सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में बहुमुखी विकास हुआ है। अनेक सॉफ्टवेयर, ई-कोश, उच्चारण-कोश, परिभाषा-कोश, पारिभाषिक शब्द-संग्रहस्थ विश्वकोश के प्रकाशन के साथ मशीनी अनुवाद, ब्लॉगर, ट्विटर, फेसबुक, ई-मेल, ई-पत्रिकाओं तथा एस.एम.एस. में हिंदी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। हिंदी के कई सॉफ्टवेयर अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं के साथ तैयार किए गए हैं जिनका प्रयोग भारतीय बाजार में ही नहीं, विदेशी कंपनियाँ भी अपने उत्पादों के प्रचार-प्रसार के लिए करती हैं। हिंदी के समाचारपत्रों में अंग्रेजी का मिश्रण प्रायः देखा जा सकता है। inext तो हिंगलिश में ही प्रकाशित हो रहा है। अंतर्राष्ट्रीय उत्पादों के लिए अंग्रेजी के साथ हिंदी समाचारपत्रों में भी विज्ञापन देखे जा सकते हैं। अंग्रेजी के तकनीकी शब्दों या वाक्यांशों का अनुवाद न होने पर हिंदी में रखा जाता है यथा-अब लीजिए शक्तिशाली टर्बो? उत्पादों से जुड़े चित्रों में हिंदीतर ब्रांडों के साथ हिंदी रूपांतर भी दिया जाता है। विदेशी या अंग्रेजी फिल्म के प्रसारण में हिंदी के रूपांतरण मिलते हैं। बहुधा हिंदी *सब टाइटिल* या *डबिंग* के साथ चित्र दिखाए जाते हैं जिनमें विदेशियों द्वारा अपनी भाषा बोलने में होठों की गतिविधि से वह नहीं मिल पाती है क्योंकि अनुवाद सुनने के रूप में ही प्रयुक्त होता है। बड़ी कंपनियाँ अपना उत्पाद जनता तक पहुँचाने में हिंदी में विज्ञापन देने के लिए विवश हैं। यद्यपि अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ा है किंतु हिंदी भी बाजारीकरण की व्यवस्था में अपने आप को ढाल रही है। उसे उपभोक्ता की भाषा भी बनना पड़ रहा है। इसी संदर्भ में एम.बी.ए. की पढ़ाई में हिंदी माध्यम प्रयोग हेतु कदम उठाए जा रहे हैं। महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा एवं अटल बिहारी बाजपेयी विश्वविद्यालय, भोपाल में हिंदी माध्यम से अध्ययन- अध्यपन प्रगति पर है।

आज टी.वी. *एंकरिंग,* मंच-संचालन, फिल्म, कंप्यूटर, पटकथा-लेखन, विज्ञापन- लेखन, कहानी के नाट्य रूपांतरण और मंचन जैसे हुनर सिखाने वाले विषयों को भी भाषा-शिक्षण का अंग बनाना अपेक्षित है। तकनीक और अनुवाद के क्षेत्र में हिंदी के माध्यम से रोजगार के अवसर सुलभ हो रहे हैं। अतः वर्तमान चुनौतियों का सामना करने और वैश्विक प्रगति में अधिकाधिक भागीदारी कर सकने हेतु हिंदी का आधुनिकीकरण भी आवश्यक है। अपने देश में ही नहीं, विदेशों में भी हिंदी अध्यापन हेतु अवसर बढ़े हैं। वैश्विक बाजारवाद के कारण भारत की संस्कृति को जानने की ललक और अपने व्यवसाय व बाजार को विस्तार देने की इच्छा ने विदेशियों को हिंदी सीखने हेतु प्रेरित किया है। भारतीय ही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन संस्थान यथा-*पेंग्विन, कॉलिन्स-हार्पर* हिंदी में अनुदित साहित्य के प्रकाशन में आगे बढ़ रहे हैं। हिंदी संपादकों और अनुवादकों की आवश्यकता भी बढ़ी है दुभाषियों *(इंटरप्रेटर)* की आवश्यकता संसद, विदेशी शिष्टमंडल, पर्यटन तथा फिल्मों में *डबिंग* आदि में बढ़ रही है। *ज्योग्राफिक चैनल, डिस्कवरी चैनल* हिंदी में कार्यक्रम दे रहे हैं। *पी.आर. (पब्लिक रिलेशन)* कंपनियों में भी कारोबार के लिए अंग्रेजी के साथ हिंदी की माँग बढ़ी है।

यद्यपि हिंदी भाषा के बदलते स्वरूप, वर्तनीगत अशुद्धियों, हिंगलिश के बढ़ते प्रयोग से चिंतित लोगों का मानना है कि भाषा के मूल रूप की शुद्धता की बात करना आत्मघाती है। बढ़ते बाजारवाद के कारण भाषा-मिश्रण स्वाभाविक है। लेकिन आगत शब्दों का अपनी भाषा की ध्वन्यात्मक व रूपात्मक संरचना के अनुसार समायोजित होना भी अपेक्षित है। हिंदी के समाहारात्मक स्वरूप की उपेक्षा की जा रही है।

हिंदी भारतीय संस्कृति की संवाहक है। हिंदी के माध्यम से विश्व बिरादरी को भारतीय संस्कृति से परिचित होने का अवसर मिल रहा है। लेकिन वैश्विक चुनौतियों के कारण हिंदी को अभी तकनीकी दृष्टि से और समर्थ बनाना है। आज अंग्रेजी का वर्चस्व इसलिए नहीं है कि हिंदी सशक्त नहीं है बल्कि इसलिए है कि हिंदी भाषियों को अपनी सामर्थ्य पर विश्वास नहीं है और हम हिंदी अपनाने के लिए कृत-संकल्प नहीं है। यह भी उल्लेखनीय है कि केवल साहित्य सर्जना द्वारा ही हिंदी का प्रचार-प्रसार और प्रतिष्ठापन नहीं होगा, उसे शिक्षा, प्रौद्योगिकी और विज्ञान की भाषा के रूप में अधिक सशक्त बनाना होगा। यद्यपि इस दिशा में अनवरत कार्य हो रहा है। डॉ. शिव गोपाल मिश्र ने इस संदर्भ में महत्वपूर्ण तथ्य उद्घाटित किए हैं कि *इंजीनियरिंग* की दर्जनों पत्रिकाएँ हिंदी में प्रकाशित हो रहीं हैं। ग्राम-प्रौद्योगिकी (हिंदी-अंग्रेजी), त्रैमासिक पत्रिका, ग्राम-शिल्प (त्रैमासिक), खाद्य-विज्ञान पत्रिका, भागीरथ, मुद्रिका, विद्युत संदेश? ग्रामोद्योग पत्रिकाओं के अतिरिक्त, औद्योगिक निर्माण, भवन-निर्माण उद्योग, रासायनिक शिल्पविज्ञान तथा शिल्प-उद्योग में भी हिंदी में पुस्तकों की रचना हुई है। अनुदित रूप में भी अनेक पुस्तकें हिंदी में उपलब्ध हैं। फिर भी वैज्ञानिक लेखन एवं उच्च-शिक्षा में विशेषतः, शिक्षण की दिशा में हिंदी के उन्नयन का सुनहरा पृष्ठ लिखा जाना अभी भी प्रतीक्षित है।

राजभाषा प्रभाग

jktHkk"kk foHkkx ,oa lg;kxh if=dk,a % ,d ifjp;

d".kohj flag fldjokj
jktho xka/kh ik|kfxdh fo'ofo|ky;] Hkkiky ¼e-i-½

हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की प्रथम राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। चीन के बाद यह विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा भी है। हिंदी और इसकी बोलियाँ उत्तर एवं मध्य भारत के विविध राज्यों में बोली जाती हैं। भारत और अन्य देशों में भी लोग हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। इसके अलावा, भारत, पाकिस्तान और अन्य देशों में 14.1 करोड़ लोगों द्वारा बोली जाने वाली उर्दू मौखिक रूप से हिंदी के काफी समान है। लोगों का एक विशाल बहुमत हिंदी और उर्दू दोनों को ही समझता है। भारत में हिंदी विभिन्न भारतीय राज्यों की 14 आधिकारिक भाषाओं और क्षेत्र की बोलियों का उपयोग करने वाले लगभग एक अरब लोगों में से अधिकांश की दूसरी भाषा है।

हिंदी राष्ट्रभाषा, राजभाषा, सम्पर्क भाषा, जनभाषा के स्तर को पार कर विश्वभाषा बनने की ओर अग्रसर है। भाषा विकास क्षेत्र से जुड़े वैज्ञानिकों की भविष्यवाणी हिंदी प्रेमियों के लिए संतोषजनक है कि आने वाले समय में विश्व स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की जो चंद भाषाएँ होंगी, उनमें हिंदी भी प्रमुख होगी।

हम प्रतिवर्ष 14 सितम्बर का दिन 'हिंदी-दिवस' के रूप में बड़ी धूमधाम से मनाते हैं। 14 सितम्बर, 1949 के दिन संविधान में हिंदी को राजभाषा घोषित करने वाली धारा स्वीकृत की थी। हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है अतः इसके प्रति अपना प्रेम और सम्मान प्रकट करना हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य ही नहीं, नैतिक जिम्मेदारी भी है। आज हिंदी भाषा के महत्व को सरकार ने भी समझा है और अधिकतर शासकीय संस्थानों, कार्यालयों, बैंकों एवं शिक्षण संस्थाओं में हिंदी में ही कार्य करने हेतु आदेश भी पारित किए है तथा आम नागरिकों से अपील भी की है कि वे अपना समस्त कार्य हिंदी में करके राष्ट्रहित में योगदान दें।

हिंदी दिवस हम सभी को यह जानने का भी अवसर प्रदान करता है कि हम रोजमर्रा की जिंदगी में हिंदी का कितना प्रयोग करते हैं। हम अपने-अपने कार्यालयों में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करते हुए राजभाषा के महत्व को समझें एवं उसके विकास में योगदान भी प्रदान करें। तभी हमारी हिंदी को देश में राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने का सम्मान मिलेगा। यह कार्य किसी एक व्यक्ति का नही बल्कि समस्त नागरिकों की एक नैतिक जिम्मेदारी भी है।

राजभाषा एवं उसकी सहयोगी पत्रिकाओं पर कुछ कहने से पहले हिंदी पत्रिकाओं के वर्तमान परिदृश्य से पाठकों का एक परिचय कराना आवश्यक है। आज हिंदी में देश से कई छोटी-बड़ी साहित्यिक पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं एवं इन पत्रिकाओं का पाठक वर्ग भी बहुतायत में है जो इनको खरीदता व पढ़ता है। इस दृष्टि से इनकी स्थिति सुदृढ़ कहीं जा सकती है। इन पत्रिकाओं की लोकप्रियता का कारण यह भी है कि कम कीमत में यह पाठकों तक पहुँच जाती हैं और इनके पाठकों को खरीदकर पढ़ने में कोई गुरेज भी नहीं होता है। इनकी बिक्री भी दिनों-दिन संतोषजनक होती जा रही है। यह पत्रिकाएँ आज व्यापक रूप सें प्रकाशित हो रही हैं व इनका क्षेत्र फैलता जा रहा है। पाठकों को इन पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक क्षेत्र में हो रही घटनाओं की जानकारी व हिंदी के प्रतिष्ठित रचनाकारों की लेखनी की जानकारी प्राप्त होती रहती है। देश मे कई पुरानी पत्रिकाएं बेहतर प्रचार-प्रसार के अभाव में व पाठक न मिलने के कारण बन्द भी हो रही हैं फिर भी हिंदी साहित्यिक पत्रिकाओं का एक अपना बाजार है जो इनको जिंदा बनाये रखे हुए है।

आम लोगों के जीवन में बढ़ते हुए *कम्प्यूटर* व *इन्टरनेट* के कदम को देखते हुए कुछ पत्रिकाएँ सीधे *वेब नेटवर्क* पर भी प्रकाशित की जा रही है। यह एक सराहनीय कदम है क्योंकि *वेब नेटवर्क* पर प्रकाशित होने से यह पत्रिकाएँ देश में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी बैठे प्रवासी भारतीय पाठक भी आसानी से इन पत्रिकाओं को पढ़ सकते हैं। इस प्रक्रिया से इन पत्रिकाओं को विदेश में भेजने का डाक खर्च भी बच जाता है जो कि काफी ज्यादा होता है और पत्रिका भी काफी समय बाद पाठकों तक पहुँचती थीं तथा कभी-कभी पत्रिका, साधारण डाक में भेजे जाने के कारण पाठक तक पहुँच भी नहीं पाती थी। अब पाठकों को पत्रिका सीधे बेवजाल पर पढ़ने को मिल जाती है। इस लिहाज से *वेब नेटवर्क* पर पत्रिकाओं का प्रकाशन पाठकों के दृष्टिकोण से लाभप्रद ही माना जावेगा।

एक अनुमान के मुताबिक देश में आज 15 हजार से अधिक

आई.एस.एस.एन. वाले *जर्नल* और शोध पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं। भारत दुनिया में सर्वाधिक पंजीकृत पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित करने वाला देश है। चीन के बाद दुनिया भर में दूसरे स्थान पर सर्वाधिक प्रतियाँ भारत से ही प्रकाशित हो रही हैं। 31 मार्च 2014 तक देश में 94,067 पत्र-पत्रिकाएँ पंजीकृत थे। इनमें से 8,155 आवधिक और शेष 12,511 दैनिक प्रकाशन थे। इनमें हिंदी भाषा की पत्र-पत्रिकाएँ सर्वाधिक हैं। उत्तर प्रदेश से सर्वाधिक पंजीकृत पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है।

यह पत्रिकाएँ आज व्यापक रूप से प्रकाशित हो रही हैं व इनका क्षेत्र फैलता जा रहा है। पाठकों को पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्यिक क्षेत्र में हो रही हर छोटी-बड़ी घटनाओं की जानकारी हिंदी के नये पुराने रचनाकारों की लेखनी से प्राप्त होती रहती है। इस संबंध में स्व. राजेन्द्र यादव जी के अंतिम भाषण के रूप में दृश्यातंर मासिक पत्रिका मे दर्ज लघु पत्रिकाओं के संबंध में विचारों को जानना जरूरी है वे कहते हैं कि-''आप विश्वास कीजिए साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक सब मिलाकर पाँच-सात पत्रिकाएँ तो रोज मेरे पास आती हैं। ये वो हैं जो आती हैं, ना जाने कितनी और हैं जो नहीं आती। हिंदी में आज करीब दो से ढाई हजार पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं और उनको पलटना तक मुश्किल है। इसलिये ये कहना कि हिंदी में पत्रिकाएँ नहीं हैं, गलत है। मुझे लगता है कि पत्रिका में जो चीज विशिष्ट होती है वह है रचनाएँ। कई पत्रिकाओं में हम एक ही तरह की चीजें पाते हैं। कोई भी विषय लें जैसे उपन्यास पर केन्द्रित पत्रिका 'उपन्यास' नाम से ही निकलती थी। जैसे आलोचना पर केन्द्रित पत्रिका है और कविताओं पर तो खैर जरूरत ही नहीं, कुछ कहने की। मेरा ख्याल है कि 50 पत्रिकाएँ ऐसी हैं जो सिर्फ कविताओं से भरी रहती हैं जिन्हें कोई पढ़ता हैं या नहीं, मालूम नहीं। हर अच्छी पत्रिका में संपादक को एक लीक पर चलना होता है कि उसने 20-25 पन्ने कविता के रंग डाले और जान छूट गई, और कुछ सोचने की जरूरत ही नहीं।''

हिंदी में प्रकाशित होने वाली साहित्यिक लघु पत्रिकाओं की स्थिति बेहतर कही जा सकती है क्योंकि एक तो इनकी कीमत कम होती है व आसानी से यह पत्रिकाएँ पाठकों को रेलवे स्टेशन, बस स्टैण्ड एवं देश के प्रत्येक शहरों में खुले पत्रिकाओं के स्टॉल पर प्राप्त हो जाती हैं। अतः इन पत्रिकाओं की स्थिति बेहतर ही मानी जा सकती है।

हिंदी निदेशालय द्वारा हिंदी की दशा व दिशा तय करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पत्रिका 'राजभाषा भारती' अर्थात् विद्या की देवी माँ सरस्वती की वाणी की पत्रिका का प्रकाशन करता है। राजभाषा भारती संघ की राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार तथा प्रोत्साहन को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका है, जिसे राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा प्रकाशित किया जाता है। पत्रिका का प्रथम अंक अप्रैल 1978 में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय के प्रथम सचिव श्री रमाप्रसन्न नायक के कार्यकाल तथा श्री राजमणि तिवारी के संपादन में प्रकाशित हुआ था। राजभाषा विभाग के दायित्वों में हिंदी के प्रगामी प्रयोग को प्रोत्साहन देने के लिए पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी एक प्रमुख दायित्व है। यह पत्रिका न केवल उस दायित्व का निर्वाह करती है वरन् संपूर्ण संघ सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/कार्यालयों आदि में हिंदी संबंधी गतिविधियों के वृहत प्रचार हेतु एक औपचारिक मंच भी प्रदान करती है। पत्रिका का वितरण केंद्र सरकार के मंत्रालयों/कार्यालयों आदि के बीच निःशुल्क किया जाता है।

वर्तमान में इस पत्रिका के संपादक श्री हरिन्द्र कुमार जी है। सहायक संपादक श्री राकेश शर्मा 'निषीथ' जी है। पत्रिका का कलेवर व सामग्री उच्च स्तरीय है जो पाठकों पर अपनी छाप छोड़ने में सहायक सिद्ध हो रही है। पत्रिका की बेवसाइट www.rajbhasha.gov.in पर कई अंकों को पीडीएफ फाइल के रूप में पाठकों हेतु रखा गया है जिसे आसानी से अवलोकन किया जा सकता है। दूरभाष नं. 011-23438137, 23438129

राजभाषा विभाग, *गार्डन रीच शिपबिल्डर्स एण्ड इंजीनियर्स लिमिटेड,* कोलकाता से अर्धवार्षिक हिंदी पत्रिका 'राजभाषा जागृति' का प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका की संपादिका श्रीमती सुनीता शर्मा, उप महाप्रबंधक (राजभाषा) है। पत्रिका में विविध लेखों के अलावा, पर्यटन, अध्यात्म, कविताएँ, तकनीकी लेख, मुद्दा, राजभाषा की गतिविधियाँ, स्वास्थ्य, कैमरे की नजर से, निगमित सामाजिक दायित्व आदि के तहत प्रकाशित ज्ञानवर्द्धन सामग्री पाठकों के लिए उपयोगी होती है। हाल ही में पत्रिका का 12वाँ अंक प्रकाशित हुआ है जो पत्रिका की बेवसाइट www.grse.nic.in पर पाठकों के अवलोकन हेतु रखा गया है। पत्रिका का वितरण केंद्र सरकार के मंत्रालयों/कार्यालयों आदि के बीच निःशुल्क किया जाता है। दूरभाष नं. 033-24698140-8143, 24698100-8113

स्टील अथॉरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड, लक्ष्मी नगर, नई दिल्ली से द्विमासिक पत्रिका 'इस्पात भाषा भारती' का प्रकाशन पिछले 10 वर्षों से निरंतर किया जा रहा है। पत्रिका के मुख्य संपादक श्री सुशील वातल एवं संपादक श्री हीरा बल्लभ शर्मा जी है। पत्रिका में जल संरक्षण, जल और ऊर्जा, साहित्यिक आलेख, स्वास्थ्य, राजभाषा की गतिविधियाँ, कविताएँ एवं विविध के तहत पठनीय सामग्री को प्रमुखता के साथ प्रकाशित किया जाता है। पत्रिका का वितरण निःशुल्क किया जाता है। दूरभाष नं.

011-22531209 एवं 22403119

राजभाषा विभाग, भारतीय स्टेट बैंक, कॉरपोरेट केंद्र, मुम्बई की तिमाही पत्रिका 'प्रयास' का प्रकाशन करता है। पत्रिका के संपादक श्री ए.वी. ब्रह्माराव, महाप्रबंधक (राजभाषा एवं कॉरपोरेट सेवाएँ) हैं। पत्रिका में बैकिंग, तकनीकी, भाषा, व्यक्तित्व, सम सामयिक, व्यंग्य, संस्कृति, कविताएँ एवं विविध के तहत प्रकाशित पुस्तक समीक्षाएँ पाठकों हेतु महत्वपूर्ण सामग्री प्रदान करती है। यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले 27 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है। पत्रिका का माह अक्टूबर-दिसंबर, 2015 का अंक जो 'विश्व हिंदी दिवस विशेषांक' के रूप में प्रकाशित हुआ था, अपनी उच्च स्तरीय सामग्री के कारण पाठकों के बीच काफी लोकप्रिय हुआ था। इस अंक में राजभाषा हिंदी के ऊपर प्रकाशित शोध आलेख शोधार्थियों के लिए बहुमूल्य साबित हो सकते हैं।

बैंक ऑफ बड़ौदा, मुम्बई की हिंदी तिमाही पत्रिका का शीर्षक है 'अक्षय्म्'। पत्रिका के कार्यकारी संपादक श्री रवि कुमार अरोरा, महाप्रबंधक (राजभाषा प्रभारी) एवं संपादक डॉ. जवाहर कर्नावट, सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा) है। यह त्रैमासिक पत्रिका पिछले 12 वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है। यह पत्रिका केवल राजभाषा हिंदी के विकास के लिए ही नही बल्कि बैंक के व्यावसायिक संप्रेषण के लिए भी एक सशक्त माध्यम साबित हो चुकी है। इसका प्रमाण इस पत्रिका में प्रकाशित बैंकिग विषयों सहित विविध आलेखों से मिलता है। पत्रिका का वितरण बैंक ऑफ बड़ौदा की सभी शाखाओं/कार्यालयों में निःशुल्क किया जाता है। पाठक भी पत्रिका के कार्यालय में संपर्क कर इसे निःशुल्क मंगा सकते हैं। दूरभाष नं. 022-66985152

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (बैंक), हैदराबाद की छमाही पत्रिका 'भारती' का प्रकाशन करता है। पत्रिका के संपादक मंडल में डॉ. विष्णु भगवान, सदस्य सचिव, स्टैट बैंक ऑफ हैदराबाद; श्री प्रेम कुमार, इण्डियन ओवरसीज बैंक; डॉ. अरूण कुमार इंगले, भारतीय स्टेट बैंक; श्री उमेश चन्द्र पाण्डेय, इंडियन बैंक; श्री शेख मस्तान बली, इलाहाबाद बैंक; श्री राजेन्द्र वर्मा, सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया; सुश्री कंचनलता पाण्डेय, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक आदि। पत्रिका में साहित्यिक घटनाओं के साथ-साथ बैंक की गतिविधियों की जानकारी भी प्रकाशित की जाती है। दूरभाष क्रमांक-040-27608007 मो. 09848127644

दक्षिण स्थित सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की राजभाषा समिति की हिंदी पत्रिका 'भारत भारती' का प्रकाशन किया जाता है। पत्रिका में बैंकिंग गतिविधियों की जानकारी के साथ-साथ सम सामयिक घटनाओं की जानकारी पत्रिका में प्रमुखता के साथ प्रकाशित की जाती है।

'प्रागज्योतिका' नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उपक्रम), गुवाहाटी की यह वार्षिक पत्रिका सिर्फ एक पत्रिका मात्र नहीं अपितु सदस्य कार्यालयों का प्रतिबिम्ब है जिसमें समूचे संगठनों की राजभाषा गतिविधियों की झलक मिलती है। प्रागज्योतिका के माध्यम से सभी सदस्यों ने अपनी सर्जक प्रतिभा से हिंदी के प्रति लगाव को दर्शाया है। पत्रिका की संपादिका सुश्री बिनीता ब्रह्म, सदस्य सचिव, नराकास (उपक्रम), गुवाहाटी हैं।

समग्रतः यह आसानी से कहा जा सकता है कि राजभाषा के ऊपर केन्द्रित विभिन्न पत्रिकाएँ आज प्रचुर मात्रा में निकल रही हैं। शासकीय स्तर पर किया जा रहा इनका बेहतर प्रचार-प्रसार इन पत्रिकाओं की स्थिति को मजबूती प्रदान कर रहा है। इनमें से कई पत्रिकाओं का वितरण केवल आंतरिक केन्द्रों के मध्य निःशुल्क किया जा रहा है। पाठक उपरोक्त बेवसाइट पर जाकर इन पत्रिकाओं को आसानी से देख व पढ़ सकते हैं। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित सामग्री किसी भी शोधार्थी के लिए लाभप्रद साबित हो सकती है। अतः एक बार अवश्य ही पाठकों को इन पत्रिकाओं का अवलोकन करना चाहिए और इनमें प्रकाशित सामग्री से लाभ उठाना चाहिए।

उपरोक्त पत्रिकाओं के अलावा भी कुछ अन्य पत्रिकाओं का प्रकाशन राजभाषा विभाग द्वारा किया जा रहा है उनकी जानकारी स्थानाभाव के कारण नहीं दी गयी है। भारत शुरू से ही आध्यात्मिक व साहित्यिक विद्या का गढ़ रहा है जहाँ पर प्राचीनकाल से ही भारत के निवासी रामायण, महाभारत, श्रीमद भगवद्गीता, वेद, पुराण आदि ग्रंथों का रसास्वादन करते चले आ रहे हैं एवं यह सिलसिला आज भी बदस्तूर चालू है। साहित्यिक विधा हमेशा से ही पाठकों के बीच लोकप्रिय रही है। आज भी पाठकों के बीच हजारों छोटी-बड़ी साहित्यिक पत्रिकाएँ व हिंदी पुस्तकें हमारे देश से प्रकाशित हो रही हैं जो पाठकों के बीच लगातार अपनी उपस्थिति बनाए हुये हैं। जरूरत केवल इन पुस्तकों व पत्रिकाओं के बेहतर प्रचार व प्रसार की है ताकि जनमानस तक इनको सीधे पहुँचाया जा सके। सरकार को भी इस दिशा में कुछ निर्णय लेने होगें, ताकि साहित्य की यह स्वस्थ परंपरा हमेशा कायम रह सके।

राजभाषा प्रभाग

;|fi vklku ugh ukeoj gkuk ij ukeoj flg dk uke lnk jgxk vej

cã çdk'k] vfHk"kd dekj flg ,o vt; dekj lkg

Hkk—vui&Hkkjrh; xUuk vuqlaèkku laLFkku] y[kuÅ

डॉ. नामवर सिंह का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले के जियनपुर गाँव में (जो अब चंदौली जिले में है) 29 जुलाई 1926 को हुआ था। उन्होंने अपनी आरंभिक शिक्षा वहीं प्राप्त की। उसके बाद वह वाराणसी आ गए तथा हाई स्कूल व हायर सेकंड्री की परीक्षाएँ उदय प्रताप ऑटोनोमस कॉलेज, वाराणसी से उत्तीर्ण की। 25 नवंबर 2009 को यूपी कॉलेज के शताब्दी समारोह में डॉ. नामवर सिंह ने कहा था कि 'यह कॉलेज न होता तो वे शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते। यहाँ से उन्हें साहित्यिक संस्कार मिला। कविता, आलोचना व भाषण देने की कला भी वहीं से सीखी। मैं आज जो कुछ भी हूँ, वह यूपी कॉलेज की देन है। कभी यहाँ उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द्र, अज्ञेय व डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन सरीखे विद्वान अपना लेक्चर देने आते थे। इनसे मैंने बहुत कुछ सीखा व पाया है'। उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने अपना नामांकन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में करा लिया जहां वर्ष 1949 में उन्होंने स्नातक तथा वर्ष 1951 में स्नातकोत्तर की उपाधि स्वर्ण पदक के साथ प्राप्त की। उन्होंने हिन्दी के महान विद्वान हजारी प्रसाद द्विवेदी के पर्यवेक्षण में पीएच.डी. उपाधि प्राप्त की। सितंबर 2010 में शब्द शिखर सम्मान के दौरान काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में उन्होंने कहा था कि 'मैं इसी जमीन से जुड़ा रहना चाहता हूँ। यदि उदय प्रताप कॉलेज नहीं होता तो मैं प्राइमरी का अध्यापक होता। यदि बीएचयू नहीं होता तो मैं एमए नहीं कर पाता। मेरे लिए बीएचयू सब कुछ है क्योंकि यहीं से मैंने जीवन यात्रा शुरू की थी'।

अध्यापन

पीएच.डी. उपाधि प्राप्त करने के बाद नामवर सिंह ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी में शिक्षण का कार्य आरंभ कर दिया। 1959-60 में कुछ समय के लिए उन्होंने सागर विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक के रूप में भी पढ़ाया। अपने साम्यवादी क्रिया-कलापों के कारण उनको उपरोक्त विश्वविद्यालयों से अपनी संबद्धता छोड़नी पड़ी। उसके पश्चात 1970 में उन्होंने जोधपुर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर के पद का कार्यग्रहण किया। 1974 में जवाहरलाल विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में प्रोफेसर बनने के बाद नामवर सिंह ने जवाहरलाल विश्वविद्यालय में शिक्षा का नया *पैटर्न* व नया पाठयक्रम विकसित किया। आप जवाहरलाल विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र के संस्थापक थे। वर्ष 1987 में आप वहीं से सेवानिवृत्त हो गए तथा अगले पाँच वर्षों के लिए आपकी पुनर्नियुक्ति हो गई। वर्ष 1992 में आप जवाहरलाल विश्वविद्यालय से सेवामुक्त किए गए। सेवामुक्त होने के पश्चात, उन्होंने जवाहरलाल विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा के केंद्र के *प्रोफेसर एमेरिटस* के पद पर अपनी सेवाएँ दीं।

राजनीति

गरीबों के प्रति संवेदनशील होने के कारण उनका सहज झुकाव मार्क्सवाद की ओर हो गया जिसको उन्होंने अध्ययन की एक पद्धति के रूप में नहीं देखा अपितु चिंतन एवं जीवन की एक शैली के रूप में गहराई से अवलोकन किया। वह समाज को मानवीय बनाने वाले सौंदर्य सिद्धान्त के रूप में मार्क्सवाद को एक वैचारिक ज्ञानराशि के रूप में स्वीकार करते थे। वर्ष 1959 के आम चुनाव में आपने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के उम्मीदवार के रूप में उत्तर प्रदेश की चंदौली संसदीय सीट से चुनाव भी लड़ा था परंतु वे सफल नहीं हो सके।

महत्वपूर्ण दायित्व एवं सम्पादन

शिक्षण क्षेत्र में संबद्धता के अतिरिक्त, श्री सिंह ने 1965 में साप्ताहिक समाचार पत्रिका 'जनयुग' एवं साहित्य आलोचना की त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका 'आलोचना' के संपादक के रूप में भी कार्य किया। जवाहरलाल विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्ति के पश्चात, उनको महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा का कुलाधिपति नियुक्त किया गया। उन्होंने संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के राजा राममोहन रॉय लाइब्रेरी प्रतिष्ठान के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया। श्री सिंह ने ज्ञानपीठ पुरस्कार के चयन बोर्ड के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया। वह एनसीईआरटी की हिंदी समेत कई भाषाओं व विषयों की पुस्तक श्रृंखलाओं के सामग्री चयन व सम्पादन बोर्ड के प्रमुख भी रहे। हिंदी के जड़-अप्रासंगिक पाठयक्रमों को बदलने की प्रक्रिया द्वारा उन्होंने हिंदी में नई प्राणवायु का संचार किया वरना अभी भी हिंदी की दुनिया जाने किन मतों-वादों-रसों आदि में भटक रही होती। यदि आज हिंदी के बुद्धिजीवी का बौद्धिक संसार में कोई महत्व है तो इसमें हिंदी अध्यापन की वह विधि और संस्कार की भूमिका प्रमुख है।

साहित्यिक पत्रकारिता में भी डॉ. नामवर सिंह अग्रणी ही रहे। 'पहल', 'बहुवचन' एवं 'पाखी' इत्यादि साहित्यिक पत्रिकाओं में उनपर विशेषांक छापे गए तथा उन पर कई पुस्तकें भी लिखी गयीं। 15 जनवरी 2019 की रात वह नींद में गिर पड़े जिससे उन्हें गंभीर चोटें आयीं तथा उन्हें अस्पताल ले जाना पड़ा। यह अस्पताल प्रवास उनके जीवन का अंतिम अध्याय बनकर आया। डॉ. नामवर सिंह ने अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली के ट्रामा सेंटर में 92 वर्ष की आयु में 19 फरवरी 2019 (मंगलवार) की रात 11.51 बजे अंतिम सांस ली।

प्रमुख रचनाएँ एवं पुस्तकें

डॉ. नामवर सिंह की पहली कविता 1941 में वाराणसी से प्रकाशित होने वाली "क्षत्रियमित्र" पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। डॉ. सिंह ने एक दर्जन से अधिक पुस्तकें लिखीं हैं। हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग, पृथ्वीराज रासो की भाषा, कविता के नए प्रतिमान, छायावाद, दूसरी परंपरा की खोज, इतिहास और आलोचना, कहानी-नई कहानी, आधुनिक हिंदी साहित्य की प्रवत्तियाँ, वाद-विवाद संवाद तथा जमीन से दो-दो हाथ उनके द्वारा लिखी कुछ उल्लेखनीय पुस्तकें हैं। इनमें से कुछ पुस्तकों के बारे में संक्षेप में वर्णन निम्नवत है:

कविता के नए प्रतिमान

डॉ. सिंह द्वारा लिखी यह पुस्तक काव्य भाषा के दुरूपयोग की आलोचना करती है। यह पुस्तक कविता की स्वतंत्रता के नाम पर व्याकरण की गलतियों को रेखांकित करती है। कविता के नए प्रतिमान अनावश्यक नाटक तथा लिखित कृति में लिखे लेखन व अभिकल्पना के संघर्ष के बारे में भी बात करती है।

छायावाद

जिस छायावाद को तरह-तरह की बूझ-अबूझ परिभाषाओं में उलझाया जा रहा था। उसे डॉ. नामवर सिंह ने अपनी पुस्तक 'छायावाद' में दिखाया कि छायावाद राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है जो एक ओर पुरानी सदी से मुक्ति पाना चाहता था तथा दूसरी ओर विदेशी पराधीनता है। कई अध्यायों में विभाजित यह पुस्तक प्रेरणात्मक कविताओं का संग्रह है। इसके एक अध्याय में कवि द्वारा अपनी संवेदनशीलता की अभिव्यक्ति पर बल दिया गया है। छायावाद का उनका मूल्यांकन छायावादी काव्य को स्वाधीनता आंदोलन की पृष्ठभूमि में फर्क कर वहाँ ऐसी प्रासंगिकता ढूँढ़ता है जो पहले लक्षित नहीं की गई थी।

इतिहास और आलोचना

जैसा कि पुस्तक के नाम से विदित है, इतिहास और आलोचना पुस्तक संयुक्त राज्य अमेरिका एवं सोवियत संघ के शीतयुद्ध के दौरान लिखी गई विभिन्न कविताओं की आलोचना करती है। इस पुस्तक में साहित्य के महत्व बताने के लिए एक सूचना देते हुए लिखे गए चार निबंध लेखक का आदर्शवाद प्रस्तुत करते हैं।

दूसरी परम्परा की खोज

इस पुस्तक में आठ अध्याय समाहित हैं। सभी अध्यायों का मुख्य केंद्र बिन्दु भारतीय संस्कृति की विभिन्नता पर केन्द्रित है। दूसरी परंपरा की खोज कबीर की तुलना में कालिदास व सूरदास जैसे कवियों के लेखन का पक्ष लेती नजर आती है। कई विद्वानों के अनुसार इनके लेखन का गहरा प्रभाव हिंदुओं के भक्ति आंदोलन पर पड़ा।

वाद-विवाद और संवाद

यह पुस्तक लेखक की साम्यवादी दर्शन तथा आदर्शवाद का सार प्रस्तुत करती है।

कहानी : नई कहानी

'कहानी : नई कहानी' पुस्तक द्वारा उन्होंने हिंदी में कठलोचना की गंभीर शुरूआत की है।

जमीन से दो-दो हाथ

इस पुस्तक में उन्होंने लिखा था "तो क्या 'धर्मरक्षक' शब्द तथा 'आनंददाता प्रभो' से ज्ञान मांगने के कारण ऐसी प्रार्थनाएँ पाठ्यपुस्तकों से हटा दी जाएँ? उचित तो यह है कि प्रार्थना भी रहे, धर्म की बात भी रहे, लेकिन बुनियादी बात यह है कि छात्रों में खुलापन, जिज्ञासा और आलोचना बुद्धि विकसित हो"।

डॉ. नामवर सिंह द्वारा लिखी सभी पुस्तकें केवल हिन्दी भाषा में ही उपलब्ध हैं, लेकिन ये पुस्तकें हिन्दी साहित्य को समझने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

पुरस्कार

डॉ. नामवर सिंह को उनकी रचना "कविता के नए प्रतिमान" के लिए वर्ष 1971 में केंद्रीय साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनको साहित्य अकादमी, दिल्ली द्वारा शलाका सम्मान से नवाजा गया। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान ने हिन्दी के क्षेत्र में उनके सम्पूर्ण साहित्यिक योगदान के लिए 'साहित्य भूषण' सम्मान तथा 'भारत भारती' सम्मान से पुरस्कृत किया। कुवेम्पु प्रतिष्ठान द्वारा उनको 'कुवेम्पु राष्ट्रीय पुरस्कार' से अलंकृत किया गया। हैदराबाद विश्वविद्यालय द्वारा उनको *'डॉक्टर ऑफ लिटरेचर'* की मानक उपाधि से पुरस्कृत किया गया।

डॉ. नामवर सिंह हिंदी दुनिया के अद्वितीय मेधा, हिंदी साहित्य की आलोचना विधा के विशाल वटवृक्ष व अकूत वैभव थे। उनमें संवाद, सम्प्रेषण एवं संभागिता की गहरी संस्कृति मौजूद थी। उनके लेखन व वक्तव्य में हजारों वर्षों की ध्वनियाँ बोलतीं थीं। उनमें बुद्ध, शकणार, अशोक, अकबर, आनंदवर्धन व अभिनवगुप्ता के साथ कबीर, तुलसी, निराला, प्रेमचंद एवं मुक्तिबोध भी समान रूप से मौजूद थे। पंडित हजारी प्रसाद द्विवेदी के प्रिय शिष्यों में से एक डॉ. सिंह आलोचना के प्रखर सूर्य थे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल व हजारी प्रसाद द्विवेदी के बाद उन्होंने हिंदी आलोचना को न सिर्फ समृद्ध बनाया अपितु आलोचना को नए प्रतिमान भी दिए। वह आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध लेखक, आलोचक व शिक्षाविद थे। डॉ. सिंह ने मुख्य रूप से आधुनिक साहित्य को ही अपनी आलोचना के केंद्र में रखा। कम लिखने के बावजूद मौखिक रूप से साहित्य को बहुत अधिक प्रभाव डालने के कारण उनको मौखिक परंपरा का आलोचक भी कहा जाता है। परंपरागत बहुलता के कारण कई बार स्थापनाओं में अंतर्विरोध भी मिलता है। लेकिन इसे वे ज्ञान प्रक्रिया के विकास से जोड़कर देखते थे। विगत तीन दशकों में उन्होंने यूरोप, रूस, अमेरिका व तीसरी दुनिया के लगभग 50 देशों में साहित्य पर भाषण दिया। अपनी आलोचना विधा को साहित्य के केंद्र में स्थापित करने के कारण वे अत्यंत महत्वपूर्ण थे। श्री सिंह ने आपलोचन को वाद-विवाद संवाद का रूप देकर आलोचना को भी रचना की भांति पठनीय बनाया। मार्क्सवादी विचारों से गंभीर रूप से प्रभावित होने के उपरांत भी उनके लेखन में मार्क्सवाद का कट्टरपन नहीं दिखता। मार्क्सवादी विचारों के कट्टर विरोधी निर्मल वर्मा को भी अत्यंत महत्व देते थे। निर्भीकता एवं साहस डॉ. नामवर सिंह की आलोचना के प्रमुख शस्त्र थे। उनकी पुस्तकों में उनके अद्वैत अध्ययन, चिंतन व सोच को देखा जा सकता है। किसी को भी चुनौती देने की क्षमता के कारण वे सदा ही विरोध व विवाद के बीच रहे। समकालीन भाषा, शब्दावली तथा सबसे महत्वपूर्ण लेखकों के आदर्श दर्शन को समझाने में हिंदी साहित्य में उनका उल्लेखनीय योगदान है। डॉ. राम विलास शर्मा की बरसी पर उनके लिखे चर्चित लेख के विरोध में साहित्य अकादमी के पूर्व अध्यक्ष, प्रो. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी जी के लिखे लंबे लेख द्वारा नामवरजी से असहमति व्यक्त करने पर भी वे अपने विरोधियों द्वारा तर्कपूर्ण ढंग से उनके लिखे का खंडन करने के बावजूद भरपूर सम्मान देने के कारण सदा आदर करते थे।

काशी से लगाव

डॉ. नामवर सिंह संस्कार, स्वभाव एवं स्वाभिमान से खाँटी बनारसी थे। उनके ज्ञान व क्रिया-कलाप का क्षेत्र बनारस होने के कारण वे वाराणसी से जुड़े रहने के लिए हर संभव प्रयास करते थे। वाराणसी की अस्सी, गंगा एवं हिंदी प्रभाग प्रयत्न उनके रक्त में जीवन भर समाहित रहे। जय शंकर प्रसाद, मुंशी प्रेमचन्द्र व आचार्य रामचंद्र शुक्ल के दुनिया छोड़ देने के उपरांत ही काशी में उनका उन्मेष हुआ एवं उनके जैसी विलक्षण मेधा के साहस के फलस्वरूप वे इतनी बड़ी विरासत को अकेले ही संभालने में सक्षम हो सके। बनारस उनमें तरंग की तरह रचा-बसा था एवं बनारस के महाशमशानी यथार्थ से बखूबी परिचित थे। अदम्य साहस, दृढ़ आत्मविश्वास एवं गहरी जिजीविषा उनके व्यक्तित्व को और भी आकर्षक बनाते थे। इस रूप में वे भारतेन्दु हरिश्चंद्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, मुंशी प्रेमचन्द्र, जयशंकर प्रसाद, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. राम विलास शर्मा एवं डॉ. भगवतशरण उपाध्याय जैसे लेखकों और विद्वानों के उत्तराधिकारी के रूप में काशी की साहित्यिक संवेदना के सजग प्रहरी थे।

बनारस में रहते हुए उनका विश्वविद्यालय सिर्फ चार घंटे के लिए था, बाकी दिन के लिए कई जगहें थी- आर्यभाषा पुस्तकालय, कारमाइकेल लाइब्रेरी, तुलसी पुस्तकालय, गायकवाड़ केन्द्रीय पुस्तकालय, ग्लोब बुक सेंटर, पीपुल्स बुक हाऊस। उनका घर किताबों के लिए गोदाम था उनके बनारस वाले घर में दोनों कमरों और रसोई वाले घर के टांड़ों-रैकों और कोने-अंतरे में भी किताबें थी। उन गोदामों में उनकी प्राण बसता था। काशीनाथ सिंह जी बताते हैं कि बिजली चली जाने पर वह अंधेरे में बता देंगे कि अमुक रैक, अमुक खाना, बायें से पाँचवी किताब बिजली आये तो देख लेना। वह सही निकलता था। यह उनके किताबों के लगाव को दर्शाता था। उन्होंने अपनी लाइब्रेरी को अपने मित्र राय साहब (रामबहादुर राय) की देने की इच्छा जताई थी। क्योंकि उनके गुरू आचार्या हजारी प्रसाद द्विवेदी ने त्रिमूर्ति भवन को अपनी किताबें दी थी।

अध्यापन में मौलिक अवदान

डॉ. नामवरजी के लेखन को पुस्तक के रूप में तैयार करने वाले काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के आचार्य व संपादक, आशीष त्रिपाठी ने उनको एक वैचारिक योद्धा कहते हुए लिखा था कि अपने हजारों व्याख्यानों के माध्यम से नामवरजी नवजागरण की चेतना को आगे बढ़ा रहे हैं। उन्होंने साहित्यिक कृतियों, साहित्यकारों तथा साहित्यिक प्रवत्तियों के विश्लेषण द्वारा जहां समाज के अंधकार के खिलाफ रौशनी के दीये जलाए हैं, वहीं सचेतन विधि से समाज को नई दुनिया में समतावादी सपनों के साथ प्रवेश दिलाने का प्रयत्न किया है। पल्लवजी के शब्दों में आलोचना और लेखन के साथ उनके कृतित्व के जिस एक और पक्ष की तरफ

ध्यान देना आवश्यक है वह है हिन्दी अध्यापन में उनका मौलिक अवदान। यदि नामवरजी ने इस क्षेत्र में बड़ी लड़ाईयाँ न लड़ी होतीं तो हिंदी साहित्य के अध्ययन-अध्यापन के अप्रासंगिक हो जाने का संदेह था।

संस्कृत, अपभ्रंश, पाश्चात्य साहित्य शास्त्र, भारतीय साहित्य शास्त्र की आत्यंतिक विशिष्टाओं को समझते हुए हिंदी की नई रचनाशीलता को समझते व सराहते रहे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की आलोचना-दृष्टि के समानांतर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की आलोचना-दृष्टि को आलोचना की दूसरी परंपरा करार देना भी आलोचना-साहित्य के मूल्यांकन में एक नया प्रस्थान था। अपनी वक्तव्य कौशल से हिंदी आलोचना को न केवल रचनात्मक बनाया किन्तु एक सजग प्रहरी की तरह उसे नई दिशा भी दी। हिंदी कविता को मंचीय आकर्षण से दूर रखने व हिंदी साहित्य की मुख्य धारा की परंपरा, आधुनिकता व नवाचार के दायरे में आगे बढ़ाने में उनका उल्लेखनीय योगदान रहा। समय-समय पर हिंदी की रचनाशीलता पर उनपर दवाब तथा विवाद होने के बावजूद वे सदैव प्रसन्नचित मुद्रा में कहा करते थे "आरोप बिछाकर बैठने की चीज है, ओढ़ने की नहीं"। शास्त्र ज्ञान को लोक धर्म से जोड़ने में उनका विशेष योगदान रहा जिसके कारण ही वे दूसरी परंपरा की पहचान कर सके। उनकी वक्तव्य कौशलता ही ज्ञान को अजायबघर से निकालकर खुले आसमान में ले जाकर नई पीढ़ी को नई दिशा देने में सहायक हो सकी। आत्ममुक्त आलोचक होने के कारण वे सदा ही अपनी आँखों की परीक्षा लेते रहे।

प्रांजल धर के शब्दों में नामवर सिंह हिंदी आलोचना की वाचिक परंपरा के आचार्य थे। समकालीन हिंदी साहित्य में डॉ. नामवर सिंह अपनी विलक्षण आलोचक दृष्टि तथा असाधारण ऊर्जा के अलावा अपनी प्रस्थापनाओं, वाचिक योगदानों और वामपंथ से लेकर दक्षिणपंथ तक में अपनी लोकप्रियता बना लेने वाले एक प्रखर और प्रज्ञावान साहित्यिक नेतृत्वकर्ता के रूप में भी सदा स्मरणीय रहेंगे। उनका नाम हिंदी के उन चुनिन्दा लेखकों में सम्मिलित है जिनको खूब पढ़ा गया, सुना गया, समझा गया और जिन पर खूब विवाद भी किया गया।

कथाकार स्वयं प्रकाश ने अपनी पुस्तक 'हमसफरनामा' में नामवरजी के बारे में लिखा था "मैं सचमुच नहीं सोच पाता कि वह नहीं होते तो मुक्तिबोध, रघुवीर सहाय तथा धूमिल को इस देश में कितने पाठक नसीब होते। हम सब आज भी नामवरजी का ही मुँह देखते हैं"। खगेन्द्र ठाकुर ने नामवरजी के देश भर में घूम-घूमकर सैकड़ों व्याख्यान देने के बारे में उचित ही कहा था "नामवर सिंह ने देश भर में विशेषकर हिन्दी क्षेत्र में घूम-घूमकर क्रांतिकारी विचारों के बीज बोए हैं। उन्होंने जिस तरह से जिन विचारों के बीज बोए, वे इतिहास से संबन्धित तथा भारतीय विचार-परंपरा का अंग होते हुए भी इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे वर्तमान में वैचारिक लड़ाई में शामिल हैं। भारत जैसे राष्ट्र में जहाँ की जनसंख्या का बड़ा भाग पढ़ाई-लिखाई से वंचित रहा, वहाँ ऐसे व्याख्यान क्या प्रभाव डाल सकते हैं? यह सहज अनुमान का विषय है। पल्लवजी के शब्दों में उन्होंने समकालीन समाज में जनता का शिक्षक कहना अनुचित नहीं होगा"।

19 दिसंबर 2009 को चंदौली के शहीदगाँव स्थित अमर शहीद विद्या मंदिर इंटर कॉलेज में उनके अभिनंदन के अवसर पर दो शब्द बोलने के लिए आमंत्रित किए जाने पर वह बोले थे 'नामवर फूलों की राशि के नीचे लेटा है, यहाँ जो बैठा है, वह मेरा भूत है और भूत कभी नहीं बोलते। पता नहीं मेरे अंतिम समय में भी इतना भव्य कार्यक्रम होगा या नहीं'।

डॉ. नामवर सिंह का निधन हिंदी साहित्य के युगपुरुष होने के कारण एक युग का भी अवसान है। उनके जाने से प्रगतिशील विचारधारा का क्षितिज अंधकारमय हो गया है। अपनी आलोचनात्मक पुस्तकों द्वारा साहित्य समाज को समृद्ध बनाने वाले डॉ. नामवर सिंह की बेबाक अभिव्यक्ति व नए स्थापित प्रतिमानों के कारण वे दीर्घकाल तक याद किए जाते रहेंगे। डॉ. नामवर सिंह को अंतिम आलोचक कहा गया तो उन्हें हिंदी की अंतिम सार्वजनिक उपस्थिती भी कहा गया। ये बातें भले ही अतिशयोक्ति हैं किन्तु उनके महत्व को रेखांकित करती हैं। वह ऐसे प्रथम हिंदी लेखक व अध्यापक थे जिनकी बुद्धिमत्ता को हिंदी से बाहर भी तमाम झंझावातों में सदैव आदर के साथ स्वीकार किया गया। वह हिंदी के प्रथम ऐसे लेखक थे जिनके व्याख्यानों को सुनने के लिए लोग दूर-दूर से आते थे। हिंदी अध्यापक की ऐसी विरत सार्वजनिक उपस्थिति पहले कभी नहीं थी। विगत वर्षों में आलोचना के प्रतिमान व परंपरा का निर्माण करने वाले नामवर आज खुद प्रतिमान व परंपरा बन गए हैं। नामवर जी की काया का अंत हो सकता है लेकिन उनकी अक्षरकाया सदैव जीवित रहेगी एवं हिंदी की अमूल्य निधि बनी रहेगी।

foKku ds çlkj esa Hkk"kk dh Hkfedk

Mh-ih- flag ,oa nsoUæ flag
Hkk-—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

मानव विकास के क्रम में विभिन्न आयामों की समावेशित भूमिका का यदि समग्र आंकलन किया जाय तो आज के दौर में विज्ञान के महत्व को सर्वोपरि स्थान दिया जा सकता है। विज्ञान के बिना भौतिक जीवन की कल्पना करना शायद ही सार्थक प्रतीत हो। यदि हम विज्ञान की सार्थकता के विषय में बात करने लगेंगे तो अपने मूल विषय से भटक जाएंगे। मगर विज्ञान की सार्थकता तब तक संभव नहीं है जब तक समाज में इसका उचित प्रसार न हो और इसका लाभ अंतिम व्यक्ति तक न पहुँच जाय। विज्ञान के प्रसार के लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम इसे समझा जाए और समझकर अन्य लोगों को भी इससे अवगत कराया जाए। किसी भी विषय को समझने और समझाने के लिए किसी माध्यम की आवश्यकता होती है और उन्हीं माध्यमों में भाषा ही एक ऐसा मौलिक माध्यम है जिसके द्वारा हम विज्ञान का उचित प्रसार कर सकते हैं।

सीखने, समझने और समझाने में भाषा की भूमिकाः सर्वप्रथम विज्ञान के किसी भी विषय को सीखने एवं समझने के लिए हमें किसी भी दृश्य-श्रव्य सामग्री की आवश्यकता होती है जिसके माध्यम से हम विज्ञान के विषय को देखकर/पढ़कर या सुनकर सीखते व समझते हैं। इन दोनों प्रकार की सामग्रियों में मौलिक माध्यम कोई न कोई भाषा होती है जिसके माध्यम से हम पढ़ या सुन सकते हैं। विज्ञान को समझने के बाद जब हम इसके प्रसार की बात करते हैं तो भी उपरोक्त सामग्रियों के मौलिक माध्यमों में किसी न किसी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। अर्थात विज्ञान प्रसार की श्रृंखला में भाषा का वही स्थान है जो कि किसी भी श्रृंखला में दो कड़ियों को जोड़ने वाले छल्ले का होता है।

विज्ञान के प्रसार में भाषा का स्वरूपः विज्ञान के प्रसार में भाषा का स्वरूप क्या हो? यह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। भाषा का स्वरूप ऐसा होना चाहिए जो कि लक्षित वर्ग के पूर्णतः अनुकूल हो जिससे विज्ञान के ज्ञान का प्रवाह निर्बाधित ढंग से उस वर्ग तक पहुँच सके। मसलन यदि हम विज्ञान का प्रसार उच्च शिक्षित वर्ग तक पहुँचाना चाहते हैं तो विज्ञान की भाषा अँग्रेजी हो सकती है। मगर मध्यम शिक्षित वर्ग हेतु क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

विज्ञान के प्रसार में अँग्रेजी भाषा की भूमिकाः विज्ञान का एक ऐसा संसार है जिसकी सीमाएं अनन्त हैं और विज्ञान का कोई विषय अपनी आज की सीमा में सीमित नहीं रहना चाहता है। विज्ञान की यह सीमाएं भौगोलिक दृष्टि से भी प्रत्येक देश व भाषा तक फैली हुई हैं और विज्ञान के इस भाषाई विस्तार में अँग्रेजी ऐसी एक भाषा है जिसमें विज्ञान का साहित्य अधिक मात्रा में उपलब्ध है। खासतौर पर उच्च शिक्षा और अनुसंधान के क्षेत्र में अधिकतर साहित्य अँग्रेजी में ही उपलब्ध है। इसलिए विज्ञान के प्रसार में उच्च स्तर पर अँग्रेजी की महत्वपूर्ण भूमिका को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है। यद्यपि चीन, जापान, जर्मनी आदि अनेकों देशों में उच्च स्तर पर वहाँ की अपनी भाषा में भी विज्ञान का प्रसार किया जाता है।

विज्ञान के प्रसार में क्षेत्रीय एवं स्थानीय भाषा का योगदानः व्यावहारिक रूप में यदि विज्ञान का प्रसार किया जाना है तो क्षेत्रीय व स्थानीय भाषाओं को महत्व देना परमावश्यक है। कारण स्पष्ट है, विषय कोई भी हो, चाहे विज्ञान हो या अन्य, स्थानीय भाषा में जितनी आसानी से समझा जा सकता है उतनी आसानी से किसी अन्य भाषा के द्वारा यह कार्य संभव नहीं है। खासतौर पर विज्ञान का प्रसार यदि धरातलीय स्तर तक पहुंचाना है तो इस कार्य हेतु स्थानीय भाषा से बेहतर कोई उपाय नहीं हो सकता।

विज्ञान के प्रसार में भाषा का चयनः इस संदर्भ में विषय के उद्देश्य को दृष्टिगत करते हुए भाषा का उचित चयन करना भी विज्ञान प्रसार की सफलता का एक महत्वपूर्ण आयाम होता है और लक्षित वर्ग को ध्यान में रखकर उपयुक्त भाषा का चयन किया जाना चाहिए। सभी वर्गों हेतु एक भाषा या भिन्न-भिन्न वर्गों हेतु भिन्न-भिन्न भाषाओं का चयन कर पाना एक दुष्कर कार्य होता है। अस्तु इस संबंध में मेरी निजी राह यह है कि वर्ग विशेष के लिए भले ही भाषा विशेष का चयन किया जाय मगर संसाधनों की सीमाओं एवं उनके समुचित उपयोग की दृष्टि से विज्ञान के अधिकतम प्रसार हेतु एक ऐसी भाषा का चयन किया जाय जिसमें तकनीकी शब्द संबन्धित भाषाओं जैसे अँग्रेजी, फ्रेंच, विज्ञान के तकनीकी शब्द अँग्रेजी, फ्रेंच, लैटिन या अन्य उन भाषाओं में यथावत रहें जिन भाषाओं से इन शब्दों की उत्पत्ति हुई हो और इन तकनीकी शब्दों को क्षेत्रीय या स्थानीय भाषा में इस प्रकार समायोजित किया जाय कि इस मिश्रित भाषा का लाभ लक्षित क्षेत्र के अधिकतम लोगों को मिल सके।

संक्षेप में हम कह सकते है कि बिना उपयुक्त भाषा के विज्ञान का प्रसार अधूरा ही नहीं लगभग असंभव सा है क्योंकि ज्ञान के विनिमय हेतु दो या दो से अधिक पक्षों को जोड़ने के लिए एक सशक्त एवं सरलतम माध्यम की आवश्यकता होती है और वह माध्यम कोई एक भाषा ही हो सकती है। अस्तु विज्ञान के प्रसार में भाषा का अतुलनीय योगदान है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUuk vkj 'kdjk Kku&foKku e ge Hkkjrh; vx.kh

v'kkd dekj JhokLro
Hkk—vu|i&Hkkjrh; xUuk vu|l/kku lLFkku] y[kuÅ

सारांश

प्राचीन भारतीय पौराणिक साहित्य 'इक्षु रस' (गन्ने के रस) को सर्वश्रेष्ठ शारीरिक पोषक पदार्थ या तत्व के रूप में स्वीकारता है जो एक जरा (वृद्धावस्था) एवं रोग-मुक्त लंबे जीवन काल को पोषित करता है। लब्धप्रतिष्ठ आयुर्वेदिक ग्रंथों, हारीत संहिता (600 वर्ष ईसा पूर्व) तथा भावप्रकाश निघंटु (1600 वर्ष ईसा के बाद) में तत्कालीन गन्ने की प्रजातियों, उनके आकारिक गुणों तथा इनसे प्राप्त रस व रस से निर्मित गुड़, शर्करा, मिश्री आदि का त्रिदोषों के परिपेक्ष्य में भेषज्य गुणों का प्रचुर उल्लेख मिलता है। महर्षि भरद्वाज विरचित बृहद्विमान शास्त्र (300 वर्ष ईसा पूर्वा) में इक्षुरस से बने पदार्थों का हवाई यात्रियों एवं वैमानिकों के भोजन में, एक गन्ने की प्रजाति, 'भीरूक' का विमान के अंदर एक निगरानी यंत्र, 'निर्यासपटदर्पण' के निर्माण में एक अवयव की भांति तथा गन्ने निष्पीड़न में प्रयुक्त कोल्हू के समान विमान में वायु प्रदूषण को नियंत्रित करने में उपयोग का उल्लेख मिलता है। वाराहमिहिर की बृहद्संहिता (505-587 वर्ष ईसा पूर्व) में गुड़ एवं शर्करा को विभिन्न सुगंधित जड़ी-बूटियों के साथ अवयव के रूप में या गुड़ और जड़ी बूटियों को धूमृत कर अनेकों सुगंधि-द्रव्यों के निर्माण का विशद उल्लेख मिलता है। इतिहास गवाह है कि मगध में सम्राट हर्षवर्धन के शासनकाल (646 वर्ष ईसा बाद) में चीन देश से एक शिष्टमंडल आया जिसके साथ सांस्कृतिक आदान-प्रदान के साथ भारतीय शर्करा निर्माण की विधा भी चीन देश गयी तथा इसमें कुछ सुधारों के बाद यह भारतीय शर्करा (या मत्सयेंडी) 'चीनी' के नाम से प्रचलित हो गयी। आधुनिक काल में भारतीय गन्ना वैज्ञानिकों ने गन्ने की उन्नत प्रजातियों के प्रजनन, अंतः-*स्पीशिज* व अंतः-*जेनेरिक* संकरण तथा अन्य मूलभूत अनुसंधानों ने इस तथ्य को भी उजागर किया कि 'गन्ना एक कोशिकीय आनुवांशिक गुणों का जीवित *हरबेरियम*' है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा 1971 में शुरू की गयी अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (गन्ना) एक विशिष्ट राष्ट्रीय कार्यक्रम है जिसके अंतर्गत गन्ना संबंधी महत्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान तथा भारत के विभिन्न कृषि पारिस्थिक क्षेत्रों हेतु उपयुक्त गन्ना प्रजाति, उत्पादन एवं सुरक्षा तकनीक का विकास किया जाता है। भारत के अधिकतम गन्ना उत्पादन एवं अनेकों चुनौतीपूर्ण समस्याओं से ग्रस्त राज्य उत्तर प्रदेश में वर्ष 1935 में एक अद्वितीय गन्ना विकास प्रणाली की नींव रखी गयी जिसका गन्ने के विकास, विपणन में विश्व में अपना एक अलग ही स्थान है। इस अद्वितीय वैज्ञानिक विरासत पर हमें गर्व की अनुभूति होने के साथ-साथ इस तथ्य की भी पुष्टि होती है कि 'हम विश्व में गन्ना और शर्करा के ज्ञान-विज्ञान में विश्व में अग्रणी रहे हैं।

आधुनिक जीवविज्ञान के छात्र होने के नाते हम जानते हैं कि गास्पार्ड बाउहिन (1623), जो एक स्विस चिकित्सक थे, ने अपनी एक प्रकाशित पुस्तक, *'पिनक्स थिएट्रि बोटानिका' (इल्लस्ट्रटेड एक्स्पोजिसन ऑफ प्लांट्स)* में गन्ने को *'आरूण्डो सैक्केरिफेरा'* नाम दिया। तदोपरांत वर्ष 1753 में एक स्वीडिश वनस्पतिविद कार्ल लिनियस (जिन्हें *'द लिटल बोटनिस्ट'* तथा *'द फादर ऑफ टेक्सोनोमी'* के नाम से भी जाना जाता है) ने अपनी पुस्तक *'स्पीशीज प्लांटर'* में तत्कालीन उपलब्ध गन्ने व इससे मिलते-जुलते घास कुल के पौधों को *'सैक्केरम ओफिसिनेरम'* नाम दिया। नोएल डीर ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *'हिस्ट्री ऑफ शुगर'* (1950-51) में उल्लेख किया है कि सिकंदर के हिंदुस्तान पर आक्रमण के समय (326 वर्ष ईसा पूर्व), उनके एक सेनापति नियरकस की एक उक्ति का उल्लेख हैं 'हिंदुस्तान में ऐसे पौधे हैं जो मधुमक्खियों की सहायता के बिना ही शहद का निर्माण करते हैं'।

परन्तु प्राचीन भारतीय साहित्य के अवलोकन से ऐसा प्रतीत होता है कि हम भारतीय गन्ना और शर्करा के ज्ञान में विश्व में अग्रणी हैं। इनमें से कुछ आप के संज्ञानार्थ प्रस्तुत हैं :

गन्ने का रस- एक सर्वोत्तम पोषक पदार्थ है। पुराण हमारे देश में पीढ़ियों से संचित प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान और संस्कृति के परिचायक हैं। भविष्यपुराण के अनुसार-

यथा देवेषु विश्वात्मा प्रवरोयं जनार्दनः। साम वेदस्तु वेदानाम महादेवस्तु योगिनाम्।।

प्रणवः सर्वमंत्राणाम् नारीणाम् पार्वती यथा। तथा रसानां प्रवरः सदा चेक्षुरसो मतः।।

(भ.पु., उत्तरपर्व 167/5)

अर्थात जिस प्रकार देवों में जनार्दन (64 कलाओं से युक्त

श्रीकृष्ण), योगियों में शिव, वेदों में सामवेद, देवियों में पार्वती, तथा मंत्रों में ओंकार सर्वश्रेष्ठ हैं उसी प्रकार समस्त रसों (शरीर का पोषण करनेवाले तत्वों) में 'इक्षुरस' सर्वश्रेष्ठ है।

कूर्मपुराण के अनुसार-

तथा च हरिवर्षे तु महारजतसन्निभाः। दशवर्षसहस्त्राणि जीवन्तीक्षुरसाशिनः।।

(कू.पु.,पूर्वभाग 47/10)

अर्थात जम्बुद्वीप के हरिवर्ष के लोग इक्षु रस के आहार पर 10,000 वर्षों तक रोग व जरा (बुढ़ापा) मुक्त रहते थे तथा वहाँ के व्यक्ति (विशेषकर स्त्रियाँ) उच्च कोटि की चाँदी के समान सुंदर हुआ करतीं थी (महारजतसन्निभा)।

गन्ने की प्रजातियाँ, खेती, इनके आकारिक एवं भेषज्य गुण

मत्स्यपुराण के अध्याय 118 में हिमालय के सौन्दर्य तथा अत्रि ऋषि के आश्रम के वर्णन में उल्लेख है कि-

गुग्गुल वृक्षैश्च हिन्ताल धवलेक्षुभिः। तृणशून्यैः करवीरैरशौ केश्चक्रमर्दनैः।।

(म.पु., 118/21)

अर्थात पृथ्वी का यह भाग मेघों के समान काला तथा विभिन्न प्रकार के वृक्षों/वनस्पतियों से आच्छादित था जिनमें 'धवल इक्षु' (सफेद गन्ना) भी एक था।

महर्षि आत्रेय के शिष्य हारीत विरचित लब्धप्रतिष्ठ आयुर्वेदिक ग्रंथ, हारीत संहिता (600 वर्ष ईसा के बाद) के प्रथमस्थानम् (प्रथम खंड) के अध्याय 10 (इक्षुवर्ग) में गन्ने की तीन प्रजातियों (स्वादु इक्षु, श्वेत इक्षु तथा कृष्ण इक्षु) का उल्लेख किया गया है। इसमें गन्ने की यांत्रिक निष्पीड़न से प्राप्त रस, रस से निर्मित दो प्रकार की खांड (सामान्य खांड व गुड़ से निर्मित खांड), शर्करा/मत्सयेन्डी तथा मिश्री (सिता) व उनके भेषज्य गुणों का उल्लेख किया गया है।

आचार्य शार्ङ्गधर द्वारा तेरहवीं सदी के पूर्वभाग में रचित 'शार्ङ्गधर संहिता' में गन्ने के रस से निर्मित गुड़ एवं शर्करा के औषधीय प्रयोगों का विशद उल्लेख है जैसे स्वरस (औषधियों के ताजे निष्पीड़ित रस) में मिलाना, काढ़ा, चूर्ण, वटी (गोली), *अवलेह, फाण्ट, आसवारिष्ट* (किण्वित द्रव) बनाना, इत्यादि। गुड़ से एक विशिष्ट औषधि, *बाहुशालगुड़* के निर्माण का उल्लेख है जो अनेकों प्रकार के रोगों का उपचार करने में उपयोगी है। इस संहिता में गन्ने के रस तथा गुड़ के जलीय विलयन व विभिन्न औषधियों के *संधान* (अम्लीय किण्वन) से *इक्षुशुक्त* व गुड़शुक्त के निर्माण का उल्लेख है। गन्ने के रस को यथावत या उबालने के उपरांत किण्वित भेषज्य उत्पाद जैसे *'शीतरस सिधु'* तथा *'पक्वरस सिधु'* बनाने का भी उल्लेख है।

एक अन्य लब्धप्रतिष्ठ आयुर्वेदिक ग्रंथ, भाव मिश्र प्रणीत 'भावप्रकाश निघंटु' (1600 वर्ष ईसा के बाद) में गन्ने को चार अन्य घास कुल के पौधों के साथ 'पंचतृण' में वर्गीकृत किया गया है। इस ग्रंथ के अध्याय 'इक्षुवर्ग' में तत्कालीन 13 गन्ना प्रजातियों के आकारिक, भेषज्य गुणों, इनके विभिन्न भागों से प्राप्त रस एवं इस रस से प्राप्त गुड़, शर्करा, मिश्री, इत्यादि, के भेषज्य गुणों का विशद उल्लेख मिलता है। गन्ने का रस सामान्यतया अम्लीय होता है। इस ग्रंथ में वर्णित है कि दो प्रजातियों, 'शतपोरक' एवं 'दीर्घपोर' का रस क्षारीय होता है तथा 'सूचीपत्रक', 'नैपाल' एवं 'नीलपोर' का रस काषाय होता है जिसका झुकाव भी क्षारीयपन की ओर होता है।

एक बौद्ध ग्रंथ, 'विनय पिटिका' में गन्ने के रस से निर्मित विभिन्न प्रकार के गुड़, अल्कोहोलिक पेय (फणिता) आदि का उल्लेख है। इस ग्रंथ में गन्ने की एक महामारी का भी उल्लेख है जिसकी कालांतर में 'लाल सड़न' के रूप में पहचान की गयी।

कश्यप ऋषि कृत 'काश्यपीय कृषि सूक्त' में मृदा, सिंचाई, फसलों (गन्ने की भी) की खेती, फलों के वृक्षों की खेती, वृक्षायुर्वेद, इत्यादि का उल्लेख है जिसका वाराहमिहिर की बृहद्संहिता में भी अनेक स्थानों पर उल्लेख मिलता है।

गन्ने के रस से निर्मित गुड़ के बहुआयामी भेषज्य उपयोग

प्राचीन भारत के औषधि विज्ञान, आयुर्वेद में गन्ने के रस से प्राप्त गुड़ को भूरि-भूरि सराहा गया है। हारित संहिता के अनुसार गुड़-

-'**सर्वरोगान्निहन्ति**' (हा.स.1.10.19)- अर्थात मनुष्य के सभी रोगों को दूर करता है।

-'योगयुक्तौपि सर्वत्र हितो गुणगणालयरू' (हा.स.1.10.18)- अर्थात गुड़ को विभिन्न औषधीय समायोजन में लेना सर्वत्र लाभकर है।

- **'स पुराणौधिकगुणो'** (हा.स.1.10.11)- अर्थात पुराना गुड़ अपेक्षाकृत अधिक लाभकर है।

हारीत संहिता में गन्ने के रस, गुड़, मिश्री व शर्करा के लगभग 160 से भी अधिक औषधीय उपयोग वर्णित हैं जिनमें कुछ बाजीकरण (पुरूष हेतु काम शक्तिवर्धक) सम्बन्धी भी हैं।

भावप्रकाश निघंटु गुड़ को त्रिदोषनाशक (वात, पित्त व कफ दोषों के निवारण में सक्षम) मानता है तथा इक्षुवर्ग का श्लोक 28

गुड़ को सम्मानपूर्वक **'नमो गुड़ाय'** उच्चारण से सम्बोधित करता है।

प्राचीन वैमानिकी में उपयोग

महर्षि भरद्वाज द्वारा 400 वर्ष ईसा पूर्व रचित 'बृहद्विमानशास्त्र' (अनुवादक-स्वामी ब्रम्हमुनि परिव्राजक, 1959) में विमान के विकास की विभिन्न चरणों, इसकी सुरक्षा, युद्ध कौशल, आंतरिक निगरानी, आपातकाल में विमान को नष्ट करना, चालकदल व यात्रियों के भोजन, स्वास्थ्य व अन्य सुविधाओं के बारे में विस्तृत उल्लेख मिलता है। इसमें 'शर्करा' शब्द का उल्लेख कई स्थानों पर मिलता है। वेदिक वाङ्गमय में इसका तात्पर्य 'पथरीली बालू' है। इससे समानता के कारण ही 'गन्ने के रस से प्राप्त अपेक्षाकृत परिष्कृत मीठे पदार्थ' को भी 'शर्करा' कहा गया। गन्ने के रस से निर्मित मीठे पदार्थों में 'मत्स्यपिंड' तथा 'खाण्ड' का उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ के 'आहराधिकरण' में उल्लेख है कि धान्यों (गेहूँ, चावल व दालों) को पीस कर इसे कड़ाही (पाचना) में स्निग्ध पदार्थों (घृत/तेल) आदि के साथ पकाकर इसमें खाण्ड व सुगन्धि-द्रव्य मिलाकर लड्डू बनाए जाते थे जो चालकदल व विमान यात्रियों हेतु भोजन में प्रयुक्त होते थे (श्लोक 51-52)। धान्यों के उपलब्ध न होने पर मीठा दलिया, खांड, मुरब्बा या शरबत भोज्य पदार्थ के तौर पर प्रयोग किया जाता था (श्लोक 55-60)। आहराधिकरण में ही एक अन्य पौधे, 'इक्षुवल्लिका', का भी उल्लेख है जो मीठे होने के साथ-साथ पोषक भी होता थी, का पोषक भोज्य पदार्थ बनाने में उपयोग होता था (श्लोक 72)।

'गुहगर्भदर्शयंत्र' (हस्तलिखित प्रति स. 10) अध्याय के अनुसार विमान चालक को अवांछित चीजों से दूर रहने तथा निगरानी व पूर्वेक्षण हेतु अनेक प्रकार के 'दर्पणों' का निर्माण किया जाता था। विमान में छिपायी वस्तुओं की चालक द्वारा निगरानी हेतु निर्मित 'निर्यासपटदर्पण' के निर्माण में अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त एक गन्ने की प्रजाति, 'भीरूक' का भी प्रयोग होता था (श्लोक 63)। 'रूक्मविमान निर्णय' (हस्तलिखित प्रति स. 20) अध्याय में 'इक्षुयंत्र' (अर्थात कोल्हू) के समान प्रयुक्त यंत्र का उल्लेख, 'इक्षुयंत्रादिवन्मन्थून' के रूप में मिलता है (श्लोक 351) जो विमान में वायु के शुद्धिकरण में प्रयोग होता था।

प्राचीन भारत में सुगन्धि-द्रव्य निर्माण में गुड़ व शर्करा

भारत में अत्यंत प्राचीनकाल से ही गुड़ व शर्करा का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन व सुगन्धिद्रव्य बनाने में होता था। वराहमिहिर विरचित बृहदसंहिता (505-587 वर्ष ईसा के बाद) के अध्याय 77, 'गंधयुक्ति' में गुड़ व शर्करा का सुगंधिद्रव्य निर्माण में एक घटक के रूप में (अन्य सुगंधित जड़ी-बूटियों के साथ) तथा गुड़ तथा अन्य सुगंधित अवयवों के साथ अंतिम चरण के रूप में धूम्र-सुवासित करने में प्रयोग किए जाते थे। गुड़ व शर्करा के प्रयोग से कुछ उल्लेखनीय सुगंधि-द्रव्यों में -'कोपच्छाद' (क्रोध को ढकने वाला), 'गन्धर्नवा' (सुगन्धि का समुद्र), 'सर्वतोभद्र' (सभी उद्देश्यों हेतु उत्तम) तथा 'बकुल पुष्प के समान सुगंधित सुगंधिद्रव्य' उल्लेखनीय हैं।

वैश्विक स्तर पर प्रथम तकनीकी शिष्टमण्डल का मगध में शर्करा निर्माण विधा को सीखने आना

एक देश से दूसरे देश में शिष्टमण्डल का आवागमन किसी भी देश की संस्कृति एवं साहित्य, वैज्ञानिक तथा तकनीकी विकास के आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सम्राट हर्षवर्धन सन् 606 से 647 वर्ष (ईसा के बाद) मगध में राज्य करते थे तथा इनके चीनी सम्राट टेंग टाईजोंग (626-649 वर्ष ईसा के बाद) से अच्छे संबंध थे। सम्राट हर्षवर्धन ने वर्ष 641 में चीन में एक शिष्टमण्डल भेजा, जिसके कृपापूर्वक परस्पर आदान-प्रदान के फलस्वरूप चीनी सम्राट ने भी सन् 643 तथा 646 में सम्राट हर्षवर्धन के दरबार में दो शिष्टमण्डल भेजे थे। सन् 646 के शिष्टमंडल के अगुआ वाङ हिनात्सो थे। इस शिष्टमण्डल के द्वारा मगध से सांस्कृतिक, साहित्यिक आदान-प्रदान के साथ-साथ शर्करा निर्माण की विधा भी चीन देश गयी तथा वहाँ कुछ केलासन में सुधार के उपरांत मगध की (भारतीय) शर्करा, 'चीनी' के नाम से अधिक लोकप्रिय हो गयी। इसे 'वैश्विक स्तर पर प्रथम तकनीकी विधा सीखने हेतु किसी अन्य देश में गए शिष्टमण्डल' का दर्जा दिया जा सकता है।

भारत में उन्नतशील गन्ना प्रजातियों का विकास

हम भारतीय गन्ने में *इंटर-स्पेसिफिक* और *इंटर-जेनेरिक* संकरण में अग्रणी रहे हैं। गन्ना प्रजनन के पुरोधा, सर टी.एस. वेंकटरमण ने *इंपीरियल शुगरकेन* अनुसंधान केंद्र, कोयम्बटूर में गन्ना प्रजनन में जान-बूझकर *सैक्करम स्पोण्टेनियम* का उपयोग विश्व में संभवतः पहली बार किया तथा गन्ने की पहली संकर प्रजाति को 205, सन 1918 में अस्तित्व में आई। इस प्रजाति ने विश्व में उन्नतशील संकर प्रजाति की व्यावसायिक खेती के नए युग का सूत्रपात किया।

भारतीय गन्ना प्रजातियाँ- को केन्स विश्व के 27 देशों में या तो व्यावसायिक खेती में या देश विशेष में विकसित प्रजाति की पैत्रिकता में उपयोग की गयी हैं। इस तथ्य का उजागर गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयंबटूर में वर्ष 1987 में आयोजित एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी के प्रकाशनों में किया गया था। इसी तथ्य को *इंटरनेशनल सोसाइटी फॉर शुगरकेन टेकनोलाजिस्ट्स* के एक प्रकाशन *'शुगर केन वैराईटीज ऑफ द वर्ल्ड'* (2016) में भी दर्शाया गया है।

गन्ना अनुसंधान में भारतीय सतह चिन्ह

इंटर-जेनेरिक संकरण : प्रथम सफल *इंटर-जेनेरिक* संकरण गन्ने व नरेंगा पोरफाईरोकामा के मध्य भारतीय गन्ना वैज्ञानिक, डा. सी. ए. बार्बर द्वारा सन् 1912-1916 के मध्य किया गया। तदोपरांत अन्य जेनेरा का भी उपयोग किया गया जैसेः ज्वार (थॉमस तथा वेंकटरमण, 1930), *इम्परेटा* (जानकी अम्माल, 1935), *स्केलेरोस्टेकिया* (पार्थासारथी तथा वेंकटरमण, 1942), मक्का (जानकी अम्माल, 1938), *नरेंगा पोरफाईरोकामा* (थॉमस तथा वेंकटरमण, 1930 और जानकी अम्माल, 1942)। बांस के साथ भी संकरण कराया गया परन्तु एक सफल संकर पौधा नहीं प्राप्त किया जा सका (वेंकटरमण, 1937)। *एरियेन्थस औरूंडीनेसियस* को एक नर पौधे की भांति प्रयोग कर संकरण कराये जाने पर संकर पौधे में शर्करा की मात्रा में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ और इस विधा ने *इंटर-जेनेरिक संकरण* द्वारा उन्नतशील गन्ना प्रजाति विकास का सूत्रपात किया।

'गन्ना एक कोशिकीय आनुवांशिक गुणों का जीवित वानस्पतिक संग्रह *(हरबेरियम)* : कुछ भारतीय वैज्ञानिकों के अभूतपूर्व कोशिकीय-आनुवांशिक अनुसंधानों ने इस अवधारणा को बल दिया जैसेः कुछ संकरणों में 2n +n *गैमीट* का हस्तांतरण (जो सामान्यतः दृद होता है) (नारायणस्वामी, 1940), कोशिका विभाजन के गुणसूत्रों का एन-ब्लॉक (एक गुच्छे के रूप में एक साथ) गायब हो जाना (राघवन, 1951, 1954), *डिप्लोइड पार्थेनोजेनेसिस* (दत्त तथा राव, 1933) तथा बी-गुणसूत्रों की उपस्थिति (जानकी अम्माल तथा अन्य, 1972)।

गन्ना जीव द्रव्य कैटेलाग : भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर में 'विश्व गन्ना जीवद्रव्य' संगृहीत है। इसमें उपलब्ध विभिन्न क्रन्तकों के आकारिक, कार्यिक तथा कृषि सम्बन्धी गुणों बारे में 4 के नाम सूची/सूचीपत्रक बनाए गए हैं जो विश्व भर के गन्ना वैज्ञानिकों द्वारा संदर्भ के रूप में उपयोग किए जातें हैं। ये निम्नवत हैं :

सैक्केरम ओफिसिनेरम (श्रीनिवासन तथा नायर, 1991)

सैक्केरम स्पोण्टेनियम (कंडासामी तथा अन्य, 1983)

सैक्केरम बारबेराई, सै. साईनेन्स, सै. रोबस्टम तथा *सै. एड्यूले* (रमन्ना राव तथा अन्य, 1985)।

एरियेन्थस (श्रीनिवासन तथा अन्य, 2001)

'गन्ना अनुसंधान में भारतीय सतह चिन्ह' के बारे में अधिक जानकारी हेतु भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर के प्रकाशन *'रिसर्च अचिवमेंट्सः* 1912-1987, *प्लैटिनम जुबिली प्रोफाइल* (संपादक एच. डेविड), पृ. 121, का अवलोकन किया जा सकता है।

अखिल भारतीय अनुसंधान परियोजना (गन्ना)

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा 1971 में शुरू की गयी अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (गन्ना) एक विशिष्ट राष्ट्रीय कार्यक्रम है जिसके अंतर्गत गन्ना संबंधी महत्वपूर्ण राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान तथा भारत के विभिन्न कृषि पारिस्थिक क्षेत्रों हेतु उपयुक्त गन्ना प्रजाति, उत्पादन एवं सुरक्षा तकनीक का विकास किया जाता है। इसका मुख्यालय भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में है। यह परियोजना गन्ने की फसल में विश्व में अपना अद्वितीय स्थान रखती है।

भारत के प्रमुख गन्ना उत्पादक, चुनौतीपूर्ण राज्य उत्तर प्रदेश की अद्वितीय गन्ना विकास प्रणाली

उत्तर प्रदेश भारत का प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य है जिसका गन्ना क्षेत्र 2.9 लाख हे. है जो लगभग 2.9 लाख गन्ना कृषकों (जो अधिकतर मझोले या सीमान्त कृषक हैं) जो 168 उत्तर प्रदेश सहकारी गन्ना विकास समितियों के माध्यम से 161 शर्करा मिलों को गन्ना आपूर्ति करती हैं। इनसे समय पर परिपक्व गन्ने की आपूर्ति, सम्बद्ध संवैधानिक प्रावधानों के तहत कृषकों का गन्ना मूल्य का भुगतान, शर्करा का निस्तारण, गन्ना का मिलक्षेत्र का विकास आदि चुनौतीपूर्ण हैं। इसे गन्ने की टुकड़ों में कटाई तथा उनकी अन्य आवश्यकताएं, मजदूरों की उपलब्धता इसे और भी अधिक चुनौतीपूर्ण बनाते हैं। इसके लिए प्रदेश में एक अद्वितीय गन्ना विकास प्रणाली उत्तर प्रदेश गन्ना विकास विभाग के रूप में विकसित की गयी जिसकी नींव 1934 में रखी गयी। इसके प्रथम गन्ना आयुक्त, श्री विष्णुकांत सहाय थे जिन्होंने उत्तर प्रदेश में गन्ना विकास और विपणन का मूलभूत ढांचा तैयार किया। इस राज्य में एक गन्ना सूचना प्रणाली (एसआईएस) 2010-11 भी प्रारम्भ किया गया है जो गन्ना कृषकों को उनके मोबाइल फोन के माध्यम से उनके गन्ना क्षेत्र का सर्वेक्षण, गन्ना आपूर्ति, गन्ने की तौल, आपूर्ति टिकट (परची), गन्ने के मूल्य के भुगतान, राज्य द्वारा कृषकों को दी जाने वाली सुविधाओं आदि से सतत परिचित कराए रखता है।

ऊपर वर्णित बहुआयामी गन्ना और शर्करा सम्बन्धी ज्ञान-विज्ञान, विशेषकर भारतीय परिपेक्ष्य में, इस लेख के शीर्षक में समाहित भाव को व्यक्त करते हुए, इस अवधारणा को सम्यकरूप से परिपुष्ट करते हैं कि

'हम भारतीय गन्ना और शर्करा के ज्ञान-विज्ञान व गन्ना विकास में विश्व में अग्रणी रहे हैं'।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUuk iztuu ls Qly lq/kkj

jk?koUnz dqekj ,oa lxhrk JhokLro
HkkÑvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

मिठास के लिए सबसे उपयुक्त गन्ना पोएसी कुल की प्रमुख नकदी फसल है जो विश्व भर में उष्ण-कटिबंधीय तथा उपोष्ण क्षेत्रों में शर्करा, इथेनॉल एवं अन्य लाभकारी उत्पादन के लिए उगायी जाती है। गन्ने की पुरानी किस्मों के लगातार व्यापक पैमाने पर वर्ष दर वर्ष व्यावसायिक उत्पादन करते रहने के परिणामस्वरूप इनकी गुणवत्ता में भी ह्रास होता है जो इनकी आनुवांशिक गतिविधियों को प्रभावित करता है। शर्करा में आई कमी विशेषकर इसकी पैदावार को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है, जो प्रायः जैविक तथा अजैविक कारकों में परिवर्तन के फलस्वरूप होता है। इस समस्या को ध्यान में रखते हुए कृषि वैज्ञानिकों ने गन्ने की विभिन्न प्रजातियों में आनुवांशिक सुधार की संस्तुति की है। इसके गुणसूत्रों की बढ़ती-घटती संख्या तथा अनेक आनुवांशिक जटिलता को सुलझाने के क्रम में प्रजनन तकनीक विकसित की गयीं। कोशिकानुवंशिकी अध्ययन से सर्वविदित है कि गन्ना में 70-130 गुणसूत्र होते हैं। *पॉलीप्लाइडी* एवं *हेटरोजाइगोसिटी* तथा अन्य अनुवांशिक जटिलताओं की वजह से गन्ना प्रजनन तथा नवीन संकर किस्मों के विकास की प्रक्रिया अत्यंत धीमी गति से सम्पन्न होती है। साथ ही वर्ष भर से अधिक काल अवधि तक खेत में फसल चक्र पूरा करने की पादप विविधता तथा परम्परागत प्राकृतिक गन्ना किस्मों के सुधार हेतु विभिन्न जंगली प्रजातियों से संकरण का कार्य शुरू हुआ। इसके द्वारा उच्च शर्करा, अधिक पैदावार तथा विभिन्न पर्यावरण के प्रति सहनशील प्रजातियों का विकास संभव हुआ है।

गन्ना के उद्भव तथा प्रजातीय विकास में प्रजनन की प्रमुख भूमिका होती है। प्राचीन काल में यह प्रायः प्राकृतिक अवस्था में पर्यावरण में आए बदलाव के फलस्वरूप होता था, किन्तु बाद में मानवीय आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए इसमें अनेक बदलाव देखे गए हैं। प्रजनन से नवीन प्रजाति के विमोचन तक सम्पूर्ण शोध परीक्षण कार्य पूरा होने में प्रायः 8 से 10 वर्ष की अवधि लगती है। इन दिनों इसके समाधान के लिए जैव आणविक विज्ञान तथा जैव प्रौद्योगिकी का व्यापक उपयोग होता है। इसके अंतर्गत प्रक्षेत्र प्रजनन से इकट्ठा किए गए क्रन्तक/जीवद्रव्य पैत्रक जीनप्रारूप के बड़े समूह को आणविक संसूचक की मदद से गुणवत्ता संबंधित पहचान सुगमतापूर्वक प्रयोगशाला स्तर पर सुनिश्चित की जाती है। इस नवीनतम प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रायः अंकुर पौधों की पत्तियों के डीएनए, आरएनए तथा प्रोटीन के मूल कण, अमीनो एसिड के जटिल अनुक्रम का वृहद डाटाबेस कम्प्यूटर के माध्यम से होता है। चयन की इस प्रक्रिया में शर्करा, रोग प्रतिरोधी तथा पर्यावरण के प्रतिकूलता के प्रति सहनशील जीन की पहचान उजागर हो जाती है, जिससे सम्मुन्नत तथा क्षमतावान क्रन्तकों की तलाश पूरी होती है। इससे प्रक्षेत्र परीक्षण में व्यय धन तथा समय की भरपूर बचत निःसंदेह होती है। इस विधि को मार्कर सहायक चयन कहा जाता है। आनुवंशिक जैव अणु के बहुत जटिल अनुक्रम को जैव सूचना विज्ञान के माध्यम से प्रतिपादित किया जाता है।

गन्ने के जैविक सुधार कार्यक्रम में नवीन सस्य कृषि तकनीक का महत्वपूर्ण योगदान होता है। विगत वर्षों में इसे मात्र शर्करा उत्पादन जैसे परिष्कृत चीनी, गुड़ इत्यादि के लिए उगाया जाता था किन्तु इन दिनों जैविक ईंधन, इथेनॉल की प्राप्ति में गन्ना के जैवभार का भरपूर व्यावसायिक उपयोग होता है। वैज्ञानिकों ने गन्ना की पेराई के उपरांत प्राप्त सह-उत्पाद, खोई से विभिन्न प्रकार के नैनो उत्पाद तैयार करने में अभूतपूर्व सफलता अर्जित की है।

शर्करा उत्पादन में लगातार हो रही बढ़ोत्तरी के फलस्वरूप गन्ना फसल को जैव ईंधन (इथेनॉल) के विकल्प के रूप में स्वीकार किया गया है। पेट्रोलियम उत्पाद में लगभग 10 प्रतिशत तक इथेनॉल मिश्रित करने की सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की गई है। इसलिए गन्ने को इन दिनों *'शुगरकेन'* के अलावा *'एनर्जीकेन'* के रूप में स्वीकार किया गया है। हालांकि इसके लिए किस्मों में निरंतर आनुवंशिक सुधार की नितांत आवश्यकता होती है। गन्ना प्रजनन के विविध आयाम के अंतर्गत इसके प्राकृतिक स्वरूप, प्रजनन तकनीकी तथा परिशुद्धता हेतु मार्कर सहायक चयन तथा अन्य शोध कार्यक्रमों में व्यापक जागरूकता किसान तथा इसमें संलग्न जन भागीदारी नितांत आवश्यक है।

प्राकृतिक स्वरूप

एक विचारधारा के मुताबिक अत्यंत श्रेष्ठ नोबेल गन्ना *सेकेरम ऑफिसिनेरम* का संभावित भौगोलिक मूल उद्भव स्थल

मलेशिया क्षेत्र था। विकास के विविध आयाम को पार करते हुए इसे पूर्वी इण्डोनेशिया / न्यू गिनी के घरेलू बगीचों में उगाया जाने लगा। यह गन्ना मूलतः आसानी से चूसने योग्य गन्ना की जाति है, जबकि इसके वानस्पतिक उद्भव के बारे में ढ़ेर सारी अटकलबाजी लगाई जाती रही हैं।

टैक्सोनॉमिक शोधकर्ताओं के अनुसार *सेकेरम ऑफिसिनेरम* के विकास क्रम में अनेक निकटवर्ती गन्ना जातियों के पौधे जैसे *सेकेरम स्पॉन्टेनियम, एरिएन्थस अरून्डिनेसयस* तथा *मिस्कैन्थस साइनेन्स* के प्राकृतिक आनुवांशिक संयोजन (संकरण) की भागीदारी निहित होती है। वस्तुतः वैज्ञानिकों ने इसे कई पूर्वज गन्नों का मध्यवर्ती स्वरूप बतलाया है।

प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री डेनियल तथा उनके साथियों ने *फ्लेवॉनॉएड कीमोटैक्सोनॉमिक मार्कर* की मदद से गन्ने के संभावित विकासवादी मार्ग को सन् 1989 में प्रतिपादित किया था। इससे पहले रॉश तथा डेनियल ने सन् 1987 में गन्ने की संभावित जातियों के विशेष समूह जिसे *'सेकेरम कॉम्प्लेक्स'* कहा जाता है, के संभावित उद्गम तथा विकासवादी मार्ग को रेखाचित्र के माध्यम से प्रस्तुत करने में सफलता हासिल की थी। इनके अनुसार वर्षों पहले गन्ने के अज्ञात पूर्वज हिमालय के तलहटी क्षेत्र में पाए जाते थे। आगे चलकर विभिन्न प्रकार के गन्नों का सैद्धांतिक स्वरूप *'सेकेरम काम्प्लेक्स'* में अवतरित हुआ। गन्ना के बहुतायत जातियों के स्वरूप विशेष रूप से इण्डो-वर्मा-चाइना के सीमा क्षेत्र में देखे गये हैं। विकास के दौर में गन्ने की अनेक जाति लुप्तप्राय हो रही हैं, किन्तु विश्व के प्रमुख गन्ना अनुसंधान संस्थानों के माध्यम से इन्हें संरक्षित करने के प्रयास लगातार किए जा रहे हैं। इस कड़ी में हमारे देश में कन्नूर तथा अगाली स्थित शोध केन्द्र, जो भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान, कोयम्बटूर के अधीन कार्यरत है का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है।

सेकेरम ऑफिसिनेरम तथा *सेकेरम रोबेस्टम* के संभावित उद्गम स्थल के बारे में सटीक जानकारी देने के लिए अनेक परिकल्पनाओं को आधार बनाया गया है। *सेकेरम रोबेस्टम* की खोज के बारे में माना जाता है कि इसके अनेक शर्करायुक्त क्रंतक प्राकृतिक अवस्था में मनुष्यों ने न्यू गिनी की नदी के निचले हिस्सों में बाड़ *(फेंसिंग)* में लगाए गए पौधों में खोज करके एकत्र किए थे। इसके अनेक क्रंतकों में, शर्करावान गन्ना की पहचान चूहों तथा सुअरों के द्वारा क्षतिग्रस्त तनों के अवलोकन के उपरांत सुनिश्चित की गई। *सेकेरम रोबेस्टम* जाति के गन्ने प्रायः लम्बे तथा मोटे तने वाले होते हैं और इसमें भी *सेकेरम ऑफिसिनेरम* की तरह शर्करा की भरपूर मात्रा पाई जाती है। साथ ही, यह भी सर्वविदित है कि नोबेल गन्ना के रूप में प्रतिष्ठित *सेकेरम ऑफिसिनेरम* को अत्यंत नर्म, मुलायम तथा आसानी से चूसकर इक्षु रस का भरपूर आनंद लेने के कारण से पूर्वी इण्डोनेशिया तथा न्यू गिनी वासियों ने *किचेन गार्डेन* में जगह दी। *'फ्रूट केन'* के रूप में आज भी इसे तीज-त्यौहार के अवसर पर उपयोग में लाया जाता है।

गन्ना प्रजनन को ध्यान में रखते हुए इसकी जातियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। रेशेदार गन्ना प्रजाति में *स्पॉन्टेनियम* एक अत्यधिक *पॉलीमॉर्फिक* जंगली घास कुल की प्रजाति है, जिसे विश्व के उष्ण-कटिबंधीय तथा उपोष्ण क्षेत्रों में बहुतायत से देखा जाता है। समुन्नत गन्ना प्रजातियों के विकास में प्रायः *सेकेरेम ऑफिसिनेरम* तथा *सेकेरम स्पॉन्टेनियम* का संकरण अनिवार्य है। ऐसा माना जाता है कि गन्ने में मिठास, जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति सहनशीलता इनके सुखद संयोजन से आए हैं।

गन्ने के सम्भावित उद्भव तथा विकास

प्राचीन काल से गन्ने की दो प्रमुख जाति *सेकेरम साइनेन्स* (चाइना गन्ना) तथा एक अनाम जाति जिसे सामूहिक रूप से 'पनसाही' कहा जाता था, उगाए जाते थे। बाद में इस अनाम जाति के गन्ने को सबसे पहले महान गन्ना प्रजनक वैज्ञानिक बारबर की खोज के कारण पनसाही को *सेकेरम बारबेरी* (उत्तर भारत गन्ना) के संबोधन से जाना गया। चूँकि उस काल में इन गन्नों का आर्थिक महत्व बहुत था, किन्तु काफी पतले और कठोर

तना होने के कारण इनके व्यवसायिक दृष्टिकोण से खेती करने में पर्याप्त मुनाफा प्राप्त नहीं हो पाता था। इसलिए इस कमी को दूर करने के लिए बारबर ने दक्षिण भारत के कोयम्बटूर में गन्ना प्रजनन केन्द्र सन् 1912 में स्थापित करके फसल सुधार में अनेक बदलाव लाए। इस क्रम में सन् 1918 में पंजाब में किसानों के लिए पहली बार व्यवसायिक गन्ना प्रजाति, को 205 का विमोचन किया गया। इस प्रजाति ने उस समय के स्थानीय गन्ना की तुलना में पचास प्रतिशत से अधिक पैदावार दिलाकर किसानों में लोकप्रियता अर्जित की।

प्रशांत द्वीप में पाए जाने वाला *सेकेरम इडूल* गन्ने की ऐसी जाति है जो अत्यधिक बहुलक होते हुए *सेकेरम रोबेस्टम* से काफी हद तक समानता रखता है। वस्तुतः यह गन्ना *सेकेरम रोबेस्टम, सेकेरम ऑफिसिनेरम* तथा *मिस्केन्थस साइनेन्स* के प्राकृतिक संकरण के फलस्वरूप अवतरित हुआ है। स्थानीय लोग इसे सामान्यतः सब्जी के रूप में उपयोग में लाते हैं।

गन्ना	गुणसूत्र संख्या
सेकेरम स्पॉन्टेनियम	2 n = 40-128
सेकेरम ऑफिसीनेरम	2 n = 80
सेकेरम बारबेरी	2 n = 81-124
सेकेरम साइनेन्सी	2 n = 111-120
सेकेरम इडूल	2 n = 60-80
सेकेरम रोबेस्टम	2 n = 60-170

गन्ने के नॉबेलाइजेशन प्रक्रिया में गुणसूत्रों का हस्तान्तरण

गुणसूत्र विविधता

गन्ने के प्रजाति विकास में अनुवांशिकी अध्ययन का महत्वपूर्ण योगदान है। भारत में महान वैज्ञानिक बारबर (1912) ने पहली बार जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति अत्यंत सहनशील *सेकेरम स्पॉन्टेनियम,* गन्ना के पराग कणों को शर्करावान गन्ना *सेकेरम ऑफिसिनेरम* की मादा पर कृत्रिम प्रक्षेत्र प्रजनन कराकर गुणवान क्रन्तक प्राप्त करने में सफलता हासिल की। *सेकेरम ऑफिसिनेरम* तथा *सेकेरम स्पॉन्टेनियम* के गुणसूत्रों के समागमन से प्राप्त क्रन्तकों को पिछले क्रन्तक से *बैक क्रास* कराने के उपरांत में बढ़े हुए गुणसूत्रों की संख्या का वृह्द वैज्ञानिक अध्ययन किया गया। पहली बार डच प्रजनक वैज्ञानिक जेसवीट ने नोबेलाइजेशन के नाम से इंगित किया था। बाद में महान कृषि वैज्ञानिक स्टीवंसन (1965) ने अनेक जंगली प्रजाति के गन्ना में मिठास भरने का प्रयास किया।

नोबेलाइजेशन के अंतर्गत लगातार गन्ना के अनुवांशिक स्तर में सुधार लाया जाता रहा है। कालान्तर में गन्ने के अनेक जंगली तथा सम्मुन्नत जाति के पौधों को परस्पर प्रजनन संबंधी शोध किए जाने लगे। जावा में गन्ना की अनेक पीओजे प्रजातियों का

गन्ना प्रजातीय विकास के महत्वपूर्ण चरण

विशेष रूप पीओजे 2878 का विकास *नोबेलाइजेशन* विधि से किया गया। उच्च शर्करा युक्त तथा अत्यधिक पैदावार के लक्ष्य प्राप्ति में हवाई, लुसियाना तथा आस्ट्रेलिया में अनेक सुधार कार्य चलाए गए। सूक्ष्मदर्शी यंत्र के सहयोग से गन्ना के विविध गुणसूत्रों के अध्ययन किए गए और इस प्रकार गन्ना जीनपूल को वैज्ञानिक मान्यता प्रदान की गई। अस्सी के दशक में गन्ना तथा इनके निकटवर्ती प्रजाति जैसे *एरिएन्थस, नरेन्गा* इत्यादि के माध्यम से अनेक फसल सुधार भिन्न-भिन्न जलवायु तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार क्रन्तकों के चयन से संबंधित शोध कार्यक्रम चलाए गए।

प्रजनन तकनीकी

सम्मुन्नत प्रजातीय उन्नयन के लिए सर्वप्रथम लक्ष्य के अनुकूल चयनित स्वस्थ गन्ना प्रजाति अथवा क्रन्तक (जीवद्रव्य) का पैतृक (प्रमुख जाति *सैकेरम ऑफिसिनेरम* तथा *सैकेरम स्पॉन्टेनियम*) उपयोग हेतु खेत में उगाया जाता है। विविध प्रकार के पैतृक गन्ना पौधों की बढ़वार हेतु आधुनिकतम सस्य-क्रियाओं का अनुपालन किया जाता है। गन्ने में पुष्पन प्रक्रिया के आगमन जो प्रायः अक्टूबर तथा नवम्बर माह में कोयम्बटूर, तमिलनाडु के आस-पास के प्रक्षेत्रों में देखा जाता है, को ध्यान में रखते हुए गन्ना प्रजनन का कार्य निर्धारित किया जाता है। प्रजनन सम्बंधों में समरसता रखने वाले गन्ने की निकटवर्ती जाति के पौधे जैसे *एरिएन्थस, स्केलरोस्टेकिया, नरेंगा* तथा अति प्राचीन उपजाति *मिस्केन्थस* के साथ प्रक्षेत्र प्रजनन क्रिया सम्पन्न होती है। प्रायः ऐसे प्रजनन संबंधों का मूल उद्देश्य, उच्च शर्करा उत्पादन के साथ विविध प्रकार के जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति सहनशील एवं उच्च *सेल्युलोजिक* रेशा युक्त प्रजाति का विकास करना होता है। इन दिनों कृषि वैज्ञानिक गन्ने से शर्करा के अलावा जैव इथेनॉल प्राप्ति के लिए प्रजनन कार्यक्रम सुनिश्चित कर रहे हैं।

पैतृक सम्बंधों के चयन

पैतृक सम्बंधों को चयन करते समय गन्ने के फूल (पुष्पक्रम) में अत्यंत क्षमतावान द्वि-पैतृक संकर के नर तथा मादा का चयन करना जरूरी होता है। क्षमतावान नर (एन्थर) को सम्यक आंकलन के लिए प्रातः काल लगभग 5.00 से 5.30 बजे खेत में एकत्र किया जाता है। मादा पुष्प का चयन कृषि वैज्ञानिक खास उद्देश्य पूर्ति हेतु चयनित करते हैं। एकत्र किए गए नर पुष्प समूह को पराग संग्रह कक्ष में विशेष प्रकार की कृत्रिम रोशनी के सम्पर्क में रखा जाता है। तेज रोशनी तथा मंद ऊष्मा के फलस्वरूप पुष्पक्रम से पराग कण स्वतः अलग हो जाते हैं।

प्रक्षेत्र संकरण

गन्ने के पुष्प से प्राप्त परागकणों को कागज के थैलों में रखकर सूर्योदय के समय लगभग 6 बजे तत्परतापूर्वक मादा पुष्प के ऊपर छिड़काव किया जाता है। कोयम्बटूर स्थित भाकृअनुप-गन्ना प्रजनन संस्थान के राष्ट्रीय संकरण उद्यान में लम्बे गन्नों के मादा पुष्पक्रम तक पहुँचने के लिए लगभग दस-बारह फुट ऊँचे लोहे के फ्रेमनुमा मचान बनाए गए हैं। इस मचान पर सीढ़ी के माध्यम से चढ़कर प्रजनक वैज्ञानिक आसानी से मादा पुष्प के ऊपर पराग कणों का छिड़काव करते हैं। यह प्रक्रिया लगभग 7 से 8 दिनों तक समान प्रक्रिया के अन्तर्गत दोहराई जाती है। पराग छिड़काव की इस प्रक्रिया को संक्षेप में गन्ने का संकरण *(हाईब्रिडाईजेशन)* कहते हैं।

छिड़काव के उपरांत मादा पुष्पक्रम को विशेष प्रकार के एल्युमिनियम के चोंगेनुमा फ्रेम से सुसज्जित कपड़े के थैलों में बंद करके रखा जाता है, ताकि अवांछित नर पराग कणों के संसर्ग से बचाया जा सके। इन चोंगों को प्रत्येक चयनित गन्ने के साथ सहारा प्रदान किए गए लकड़ी के खम्भों के जरिए लटकाया जाता है, ताकि पुष्प की बढ़वार पर किसी भी प्रकार की जैविक कठिनाई न आने पाए।

गन्ने में परागण की सम्पूर्ण प्रक्रिया लगभग 25 दिनों में सम्पन्न होती है। बाद में पुष्पक्रमों के गुच्छों को बीज प्राप्ति हेतु गन्ने से अलग रखा जाता है। बीज को कमरे के तापक्रम में सुखाने के उपरान्त चिन्हित करके आगे प्रक्रिया हेतु भंडारण किया जाता है।

साफ तथा शुष्क गन्ना बीज को वैज्ञानिक शब्दावली में *फ्लफ* या *फ़ज* कहा जाता है। इसे जनवरी माह के बाद पहले से निर्धारित गन्ना शोध केन्द्र को प्रेषित कर दिया जाता है, जहाँ *फ्लफ* की बुवाई तथा आगे के प्रक्षेत्र आंकलन संबंधित कार्य सम्पन्न होते हैं।

अंकुर पौधा *(सीडलिंग)* की बुवाई

गन्ने के सूक्ष्म बीजों *(फ्लफ)* को विशेष प्रकार की उपचारित मिट्टी, जैविक उर्वरक, बावक इत्यादि से युक्त छोटी प्लास्टिक ट्रे अथवा सीमेंट के बने नर्सरी बेड में बोया जाता है। बाद में इन्हें प्लास्टिक के खाँचेदार प्रोट्रेप अथवा पॉलीबैग में एकल अवस्था में अलग करके *ट्रांसप्लांटिंग* के लिए भेजा जाता है। लगभग 45 दिनों के नन्हें अंकुर पौधों *(सीडलिंग)* को आगे की बढ़वार के लिए खेतों के मेड़ पर *ट्रांसप्लांट* कर दिया जाता है, ताकि पौधों के समग्र विकास में बढ़ोत्तरी हो।

सीडलिंग मूल्यांकन तथा चयन

सीडलिंग पौधों के विविध गुणधर्मों का गहन मूल्यांकन किया जाता है। क्षमतावान गन्ना प्रजाति के लिए *सीडलिंग* के अनेक पौधों की छंटाई *(स्क्रीनिंग)* की जाती है। ऐसे पौधों के वाह्य संरचना के साथ-साथ शर्करा प्रतिशत, पादप रोग, जैविक तथा अजैविक कारकों (उत्तरी भारत के संदर्भ में लाल सड़न तथा सूखा, जलप्लाविता इत्यादि) की गहन जाँच की जाती है। इस दौरान लगभग 10 प्रतिशत *सीडलिंग* पौधों को आगे के लिए चयनित किया जाता है। ऐसे चयनित पौध पीढ़ी में प्रत्येक पौधों को क्रन्तक *(क्लोन)* या जीन प्रारूप *(जीनोटाइप)* अथवा आधार समष्टि *(बेस पॉपुलेशन)* कहा जाता हैं। शेष बचे अवांछित *सीडलिंग* पौधों को नष्ट कर दिया जाता है और उन्हें आगे के मूल्यांकन कार्यक्रम में शामिल नहीं किया जाता है।

क्रन्तकों के प्रक्षेत्र मूल्यांकन

प्रत्येक क्रन्तक के दो कलिका युक्त बीज-गन्ना को खेत में दो मीटर की दूरी पर बनी पंक्तियों पर उगाया जाता है। सभी आवश्यक सस्य क्रियाओं जैसे उर्वरक, सिंचाई, खर-पतवार, पादप व्याधि, नाशीकीट इत्यादि का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है ताकि चयनित मूल्यवान क्रन्तक की पैदावार में विघ्नता न आने पाए। गन्ने की परिपक्वता की स्थिति में तनों के अन्दर सुक्रोज की प्रतिशत मात्रा निर्धारण हेतु रस का विश्लेषण अनुक्रम (डाटा) को सुरक्षित रखा जाता है। कटाई के पूर्व मिल जाने योग्य गन्नों की गिनती, वजन, मोटाई इत्यादि वाह्य पैरामीटर के साथ ही प्रति हेक्टेयर कुल सकल पैदावार की गणना की जाती है ताकि चयनित कृन्तकों के विशिष्ट गुण धर्मों का आंकलन तुलनात्मक दृष्टिकोण से किया जा सके।

विभिन्न क्रन्तकों से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर क्रन्तक की छंटाई करने के उपरान्त लगभग 25 प्रतिशत क्षमतावान निरोगी क्रन्तकों को आगे के विकास कार्यक्रम हेतु चयनित किया जाता है इसे *क्लोन ट्रॉयल-1* कहा जाता है।

क्रन्तक के प्रक्षेत्र मूल्यांकन परीक्षण-1

इस परीक्षण में प्रायः गन्ने की पेड़ी फसल में प्रक्षेत्र मानकों के आधार पर पेड़ी योग्य क्षमता को परीक्षित किया जाता है। किसी प्रजाति के विकास में पेड़ी जनित क्षमता का आंकलन व्यवसायिक कृषि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। पेड़ी योग्य गुणों के आधार पर परीक्षण-1 से लगभग 25 प्रतिशत क्रन्तकों का चयन किया जाता है।

क्रन्तक प्रक्षेत्र मूल्यांकन परीक्षण-2

इस परीक्षण के अन्तर्गत बावक तथा पेड़ी गन्ना में पैदावार, पुष्पन, कृत्रिम लाल सड़न के *इनोकुलेशन* में पादप दैहिकी अभिक्रिया, नाशीकीट प्रकोप तथा अन्य प्रकार के वाह्य गुणों के मूल्यांकन से प्राप्त आंकड़ों का सघन अध्ययन किया जाता है। इस चयन प्रक्रिया में क्रन्तकों को विशिष्ट समूहों में अलग कर लिया जाता है।

निर्णायक-पूर्व *(प्री-फाइनल)* परीक्षण

इस प्रक्षेत्र परीक्षण के अंतर्गत क्रन्तक परीक्षण-2 के अन्तर्गत चयनित गन्ना क्रन्तकों को पुनः विभिन्न आयामों जैसे कुल पैदावार, जैविक तथा अजैविक कारकों के प्रति सहनशीलता, उच्च शर्करा सम्पन्नता इत्यादि के आधार पर क्षमतावान क्रन्तकों की छाँटा जाता है।

निर्णायक/आंचलिक पूर्व *(प्री-जोनल)* परीक्षण

इसके परीक्षण के अन्तर्गत ऊपर के चरणों में छाँटे गए क्रन्तकों को विशेष अध्ययन हेतु खेत में लगाया जाता है। ऊपर बताए गए सभी पैरामीटर जैसे पैदावार गुणधर्मिता, परिपक्वता, पादप रोग तथा नाशीकीटों का सम्यक मूल्यांकन किया जाता है। उपरोक्त वर्णित गन्ना प्रजनन की विधि संगत की निगरानी अखिल भारतीय गन्ना शोध समन्वित परियोजना की वार्षिक बैठक से तय किया जाता है। इसके अन्तर्गत विभिन्न शोध केंद्रों द्वारा विकसित समुन्नत जीन प्रारूपों को बहुस्थानिक संयुक्त परीक्षण तथा अग्रिम किस्म परीक्षण दौर से गुजरने के उपरांत विमोचन हेतु स्वीकृत किया जाता है।

उष्ण-कटिबंधीय क्षेत्र में गन्ना प्रजाति चयन में लाल सड़न के साथ कंडुआ रोग के प्रति सहनशीलता को कृत्रिम *स्क्रीनिंग* के जरिए सुनिश्चित किया जाता है। गन्ने की परिपक्वता अवधि को ध्यान में रखकर लगभग 15-20 क्रन्तकों को तीन श्रेणी में बाँटा जाता है। दस माह की अवधि में परिपक्व क्रन्तक को शीघ्र पकने वाली प्रजाति तथा बारह माह में शर्करावान गन्ना को मध्यम देरी से तैयार होने वाले सूची में रखा जाता है। अन्तिम परीक्षण को पार कर लेने वाले कुछ क्रन्तक प्रायः एक वर्ष से अधिक अवधि में परिपक्व होते हैं इसे देर से पकने वाली गन्ना प्रजाति के नाम से जाना जाता है।

चयन प्रक्रिया के अन्तर्गत उच्च शर्करावान पैतृक जीनप्रारूप को कानूनी मान्यता प्रदान करने के उद्देश्य से पंजीकरण करवाना नितांत आवश्यक होता है। यह कार्य सामान्यतः राष्ट्रीय स्तर पर भाकृअनुप-राष्ट्रीय पादप आनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली के पादप जननद्रव्य पंजीकरण समिति की निगरानी में होता है।

परिशुद्धता हेतु मार्कर सहायक चयन

जैव आणविक विज्ञान के अनुसार सामान्यतः किसी जीन के डीएनए के अनुक्रम अज्ञात होते हैं, जबकि विशेष परिस्थितियों में उनसे जुड़ने वाले प्रयोगशाला में तैयार किए गए आणविक मार्कर के डीएनए के अनुक्रम ज्ञात होते हैं। इस विशिष्टता की वजह से मार्कर का उपयोग पौधों के उपयोगी गुण जीन की खोज में सहायक होता है। मार्कर सहायक चयन से समुन्नत किस्मों के विकास में भरपूर लाभ प्राप्त होता है। इससे रोगप्रतिरोधी, पर्यावरण के प्रति सहनशील तथा रोचक गुण से समावेशित उत्पाद तैयार करने में मदद मिलती है। गन्ना में प्रक्षेत्र प्रजनन के उपरांत कृन्तक के अंकुर पौधों को मानक परीक्षण जैव आणविक प्रयोगशाला में होता है। इस परीक्षण में मूल रूप से पौधों के डीएनए पृथक्करण किया जाता है।

डीएनए के अलगाव हेतु गन्ने की कोमल पत्तियों को तरल नत्रजन में पीसकर महीन चूर्ण बनाते हैं। चूर्ण की खास मात्रा पहले से तय *प्रोटोकॉल* के अनुसार रासायनिक क्रियाओं द्वारा शुद्ध करते हैं। परिशुद्ध घोल के अपकेन्द्रीकरण द्वारा डीएनए के तंतु प्राप्त होते हैं। डीएनए के तंतु स्वभावतः द्विकुण्डलिनी संरचना में प्रायः चार प्रकार के नत्रजन आधार एडिनिन, थायमिन, ग्वानिन तथा साइटोसिन प्रत्येक श्रृंखला में फॉस्फोरस बंध के साथ तथा हाइड्रोजन बंध के सहारे जुड़े रहते हैं।

नवोदित पौधों के डीएनए की पहचान हेतु इसके तंतुओं को *प्राइमर मार्कर* के साथ मिलाकर *पॉलीमरेज चेन रिएक्शन मशीन*

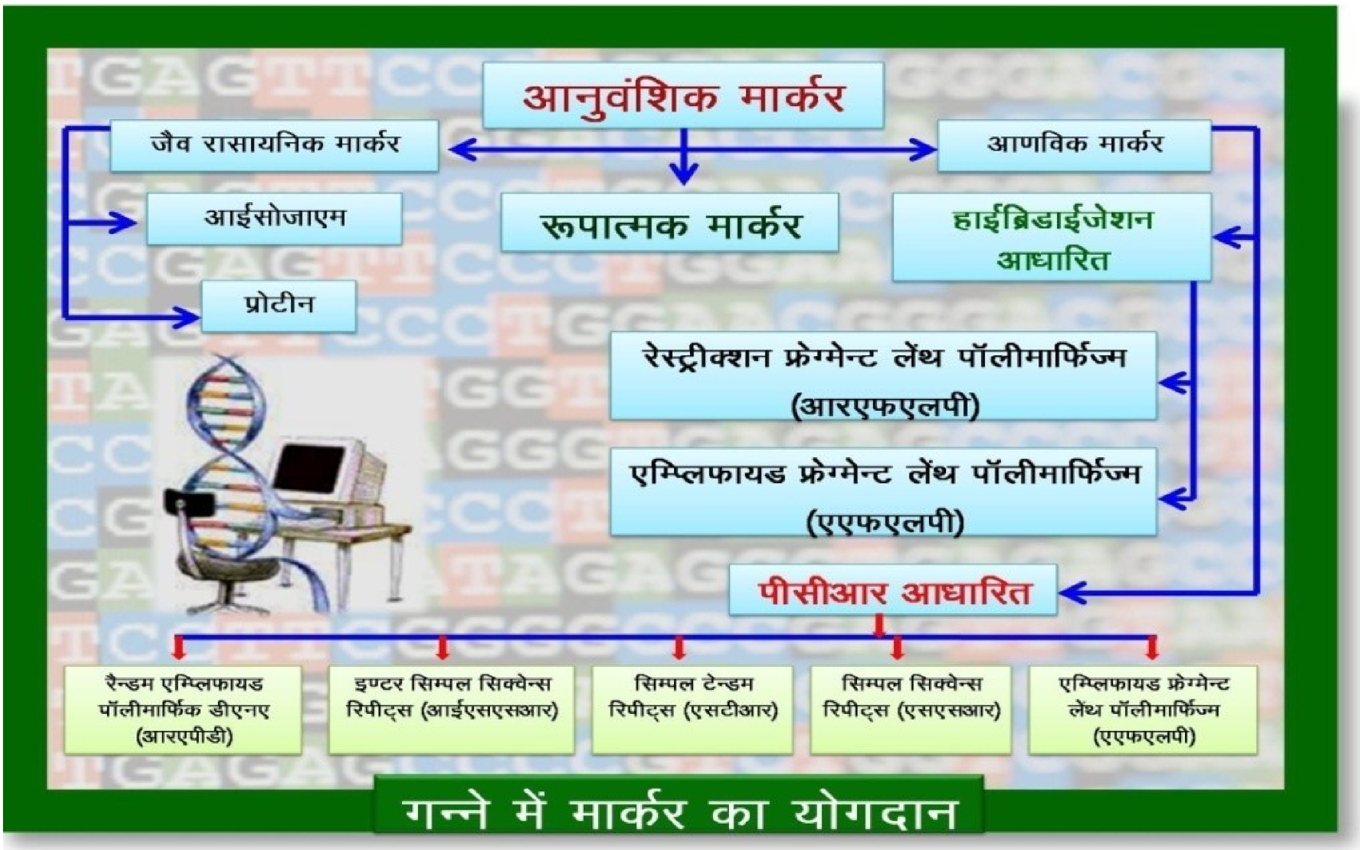

गन्ने में मार्कर का योगदान

में निर्धारित अवधि तक के लिए रखा जाता है। मशीन के कम्प्यूटर नियंत्रित घटते-बढ़ते तापक्रम में डीएनए को मिश्रण सहित रखा जाता है, ताकि डीएनए के नन्हें तंतु विकृत होकर एकल कुंडली में विभक्त हो जाए। तापक्रम के कम तथा अधिक होने के चक्र की वजह से विकृत डीएनए तंतु टूटकर विशिष्ट प्रयोजन के लिए तैयार किए गए मार्कर से जुड़ने लगते हैं। कुछ घण्टे की अवधि में पीसीआर के द्वारा लगभग दस खरब से अधिक डीएनए के टुकड़ें संश्लेषित हो जाते हैं और इस प्रक्रिया में टूटकर और जुड़ने की घटना को *एन्निलिंग* कहा जाता है।

एन्निलिंग के उपरान्त डीएनए के नवोदित प्रवर्धित उत्पाद की प्राप्ति होती है। चूँकि पीसीआर की सम्पूर्ण कार्य कुशलता एक विशेष कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित होती है, इसलिए त्रुटियों की संभावना नगण्य के बराबर होती है। *एम्प्लिफायड* उत्पाद को *जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस* की मदद से स्पष्टतापूर्वक बैण्ड के माध्यम से पहचान की जाती है। जेलडॉक सॉफ्टवेयर की सहायता से बैण्ड के गुणधर्मों की व्याख्या की जाती है। कोडोन के अनुक्रम को परिभाषित करने में जैव सूचना विज्ञान के विभिन्न *'टूल'* की आवश्यकता होती है, जो मार्कर सहायक चयन के प्रमुख आधार स्तंभ है। आनुवंशिक विविधता के लिए *रेस्ट्रीक्टेड फ्रेग्मेंट लेन्थ पॉलीमार्फिज्म (आरएफएलपी), रैंडम एम्प्लिफायड पॉलीमार्फिक डीएनए (आरएपीडी), एम्प्लिफायड फ्रेग्मेंट लेंथ पॉलीमार्फिक (एएफएलपी)* तथा *माइक्रोसेटेलाइट* जैसे *सिम्पल सीक्वेन्स रिपीट्स (एसएसआर)* तथा *सिम्पल टेन्डम रिपीट्स (एसटीआर) मार्कर* का व्यापक प्रयोग किया जाता है। किसी प्रजाति (किस्म) अथवा समुदाय की आनुवंशिक विविधता की पहचान हेतु *एसएसआर* अथवा *एसटीआर* अत्यंत उपयोगी *मार्कर* हैं और गन्ना में इनका व्यापक महत्व है।

गन्ना में शर्करा बनाने वाले जीन जो गुणसूत्र के खास स्थान *लोसाई* पर केन्द्रित होता है, की पहचान हेतु सर्वप्रथम विभिन्न जीवद्रव्य के सहयोग से *मार्कर* बनाया जाता है जिनका उपयोग प्रजनन के उपरान्त प्राप्त पौधों के परीक्षण में होता है। आजकल आरएनए तथा प्रोटीन (एमीनोएसिड) को भी इस कार्य के लिए उपयोग में लाया जाता है।

गन्ने में लगभग 50 से अधिक माइक्रो आरएनए सूखा के, 11 माइक्रो आरएनए लवणीयता, लगभग 240 माइक्रो आरएनए रोग तथा अन्य कई समस्याओं के लिए उपयोग में लाया जाता है। पराजीनी तकनीकी दूसरे किसी अवांछित जीन की अलग अथवा वांछित जीन के समावेश करके समुन्नत प्रजातियों के विकास के नए द्वार निरंतर खुलते चले जा रहे हैं। इस क्रम में उष्ण-कटिबंधीय गन्ना प्रक्षेत्र में उगाए जाने वाले कई लोकप्रिय किस्मों में तना बेधक नाशी के प्रति संवेदनशील जीन की खोज की गई है तो दूसरी तरफ लाल सड़न बीमारी के कवक की सम्पूर्ण जैविक अनुक्रम करने में अभूतपूर्व सफलता मिली है।

भविष्य की संभावनाएँ

गन्ना प्रजनन के विविध आयाम में समय के साथ अनेक सकारात्मक बदलाव निरन्तर देखने को मिल रहे हैं। इसके अज्ञात पूर्वज प्राकृतिक अवस्था में जैव विविधता की वजह से *ऑफिसिनेरम सेकेरम* तथा अन्य सहायक प्रजातियों के संयोजन से कई लाभकारी किस्मों का विकास हुआ है। *नॉवेलाइजेशन* से इसके गुणसूत्र में सुधार तथा संख्या में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी देखने को मिलता है। मिठास में निरंतर वृद्धि इसका परिणाम है।

चूँकि गन्ना फसल चक्र पूरा होने में लगभग 10 से 24 माह की दीर्घकालिक अवधि लगती है इसलिए प्रजनन संबंधित शोध परीक्षण में अधिक वक्त लगता है। दूसरी ओर शोध के आंकड़ों में अवलोकन, विश्लेषण तथा प्रस्तुतिकरण में प्रायः कई त्रुटियों के कारणवश कई प्रजातियाँ कम समय में (लगभग 4-5 वर्षों में) अपना अस्तित्व खो देती हैं। इससे किसान तथा चीनी मिल को सम्यक व्यावसायिक लाभ नहीं मिल पाते हैं। इस समस्या के समाधान हेतु आणविक मार्कर सहायक चयन का भरपूर योगदान है।

गन्ना से शर्करा के अलावा बड़े पैमाने में रेशेदार अपशिष्ट प्राप्त होता है। जैवभार के प्रसंस्करण से जैव ईंधन, जैव-इथेनॉल की प्राप्ति होती है। शर्करा उत्पादन के साथ इसके भरपूर ऊर्जा उत्पादन की संभावना को देखते हुए समुन्नत क्षमतावान गन्ना किस्मों की नितांत आवश्यकता है। एकीकृत कृषि प्रणाली में किसानों की आय बढ़ाने में गन्ना एक सर्वमान्य लोकप्रिय फसल है। फसल सुधार तथा नवीनतम सस्य प्रौद्योगिकियों के सम्यक योगदान से मानक प्रजनन तकनीकी परिशुद्धता खेती की सबसे अहम शर्त तो है, लेकिन हम सब इसके लिए हैं कितने तैयार?

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Hkkjr e xkeh.k m|ferk gr tfod xM mRiknu ,o mldk eY;o/ku

fç;adk flg

xUuk 'kks/k lLFkku] 'kkgtgkaiqj

गुड़ एक पारंपरिक भारतीय मिष्ठान है जो मुख्यतः गन्ने के रस से बनाया जाता है। 20वीं शताब्दी से पहले, सभी उत्पादित गन्ने का उपयोग गुड़ और खांडसारी उत्पादन के लिए किया जाता था। गुड़ और खांडसारी भारत में असंगठित क्षेत्र के सबसे बड़े कृषि-आधारित प्रसंस्करण कुटीर उद्योगों में से एक है। यह उद्योग प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्यों में काफी लोकप्रिय हैं। उत्तर प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश नामक चार राज्य भारत में कुल गुड़ उत्पादन का लगभग 70-75 प्रतिशत योगदान देते हैं। वर्तमान में देश के कुल उत्पादित गन्ने का 14.20 प्रतिशत गुड़ और खांडसारी के उत्पादन के लिए उपयोग किया जा रहा है। गुड़ को 'देशी चीनी' भी कहा जाता है, और इसमें सामान्यतः 80-85 प्रतिशत सुक्रोज, 10-15 प्रतिशत अपचयित शर्करा, 0.25 प्रतिशत प्रोटीन, 0.5 प्रतिशत वसा और 0.6-1 प्रतिशत खनिज लवण होते हैं। गुड़ को पौष्टिकता की दृष्टि से सफेद चीनी से बेहतर माना जाता है क्योंकि इसमें विभिन्न औषधीय तत्व भी होते हैं। परिष्कृत चीनी में पौष्टिकता लगभग नगण्य होती है, जबकि, गुड़ में खनिज और विटामिन होते हैं, जो इसे वास्तव में एक स्वस्थ वैकल्पिक *'स्वीटनर'* बनाता है। गुड़ बनाने के दौरान गन्ने के रस को साफ करने के लिए विभिन्न रसायनों का उपयोग किया जाता है। ज्यादातर गुड़ के निर्माण के दौरान विभिन्न हानिकारक रसायनों जैसे सल्फर डाइऑक्साइड के प्रयोग के परिणामस्वरूप, इसके स्वाद और भंडारण क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जबकि जैविक गुड़ का उत्पादन रसायनों का उपयोग किए बिना होता है जिसमें गन्ने की जैविक खेती, जैविक/वानस्पतिक रस शोधकों का उपयोग, एवं *हाइजीनिक* और साफ सुथरी परिस्थितियों को बनाए रखना मुख्य है। जैविक गुड़ में कठोर रसायनों का उपयोग न होने के कारण, यह नरम और पौष्टिक होता है। गुड़ की उपयोगिता अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहले ही पहचानी जा चुकी है जिसके कारण गुड़ का निर्यात बढ़ रहा है। यद्यपि, गुड़ उद्योग में अभी भी व्यापक विस्तार की प्रबल संभावनाएँ हैं, जिसके लिए गुड़ उत्पादन की मौजूदा व्यवस्था में सुधार की आवश्यकता है। स्वास्थ्य लाभ के लिए गुणवत्ता वाले जैविक गुड़ और उसका उत्पादन अत्यधिक महत्व रखता है।

जैविक *(ऑर्गेनिक)* गुड़

जैविक तरीके से तैयार किए जाने पर गुड़ की गुणवत्ता उत्तम होती है तथा उसका मूल्य भी अधिक मिलता है। बाजार में सामान्य गुड़ जहाँ ₹ 30-40/कि.ग्रा. है तो वहीं जैविक गुड़ का मूल्य ₹ 150-300/कि.ग्रा. तक मिल जाता है और इसके उत्पादन में कोई अतिरिक्त लागत भी नहीं आती है। *ऑर्गेनिक* गुड़ में न केवल सुक्रोज बल्कि अन्य सभी प्राकृतिक पोषक तत्व जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम और पोटेशियम की मात्रा अधिक रहती है। स्थानीय बाजार में व्यावसायिक रूप से उपलब्ध गुड़ को गुड़ की कठोरता बढ़ाने और रंग को साफ करने के लिए कुछ रसायनों को मिलाकर बनाया जाता है, जो स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक होता है। जैविक गुड़ ऐसे गन्ने से बनाया जाता है जो रासायनिक उर्वरकों या कीटनाशकों के बिना उगाए जाते हैं। शुद्ध कार्बनिक गुड़ हानिकारक रसायनों से मुक्त होता है। ऑर्गेनिक गुड़ एक शुद्ध, पौष्टिक, अपरिष्कृत संपूर्ण मिष्ठान है जिसमें खनिज और विटामिन प्राकृतिक रूप से उपलब्ध रहता है। जैविक गुड़, पारंपरिक गुड़ से बेहतर है क्योंकि यह रसायनों के उपयोग के बिना संसाधित होता है। जैविक गुड़ में कई महत्वपूर्ण विटामिन और खनिज तत्व होते हैं। वास्तव में, जैविक गुड़ में परिष्कृत चीनी की तुलना में लगभग 50 गुना और *ब्राउन शुगर* की तुलना में पाँच गुना अधिक खनिज की मात्रा होती है। एक चम्मच जैविक गुड़ में लगभग 3-5 मिलीग्राम कैल्शियम, 3-5 मिलीग्राम फॉस्फोरस, 6 मिलीग्राम मैग्नीशियम और 45 मिलीग्राम पोटैशियम पाया जाता है। ऑर्गेनिक गुड़ को सीधे किसी भी खाद्य पदार्थ, चाय या कॉफी इत्यादि में मिलाकर उपयोग किया जा सकता है। जैविक गुड़ को कई व्यंजनों में दानेदार सफेद चीनी के जगह पर उपयोग किया जा सकता है। जैविक गुड़ स्वास्थ्य के लिए उत्तम होता है। यह रक्त के शुद्धिकरण के साथ ही गठिया और पित्त के विकारों को रोकने में भी लाभदायक है।

गुड़ उत्पादन के लिए गन्ने की जैविक खेती

गुड़ में रासायनिक संदूषण न केवल इसके बनाने के दौरान होता है, बल्कि गन्ने की खेती किस प्रकार की गयी है उस पर भी निर्भर करता है। एक लाभदायक नकदी फसल होने के नाते, गन्ने की खेती प्रायः उच्च उत्पादकता और बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए रासायनिक उर्वरकों, खरपतवारनाशकों, कीटनाशकों जैसे हानिकारक रसायनों के साथ की जाती है। अच्छी गुणवत्ता वाले जैविक गुड़ के लिए न केवल रसायन मुक्त विनिर्माण बल्कि

जैविक विधि से गन्ने की खेती की भी आवश्यकता होती है।

गन्ने की जैविक खेती के लिए, पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए गोबर की सड़ी खाद, वर्मीकम्पोस्ट और खनिज से समृद्ध *प्रेस मड* (प्रत्येक 33 प्रतिशत) के माध्यम से पोषक तत्वों की पूर्ति (100 प्रतिशत नाइट्रोजन की खुराक के बराबर) तथा इसके साथ ही मिट्टी में, जैव उर्वरक (*एजोस्पिरिलम/एजोटोबेक्टर* एवं *पीएसबी*/10 कि.ग्रा./हेक्टेयर प्रत्येक) का उपयोग करना चाहिए। बीज गन्ना को बुवाई के पूर्व *ट्राईकोडर्मा कल्चर*/5 ग्राम/ली. और बीजामृत (गाय का गोबर 100-200 कि.ग्रा.), देसी गाय का मूत्र 100 ली., गुड़ 500 ग्रा., पानी 300 ली. मिला हुआ और दस दिनों तक किण्वित किया हुआ), मिलाकर उस से उपचारित करना चाहिए। उर्वरक के लिए जीवामश्त (गाय का गोबर 10 कि.ग्रा., गौमूत्र 10 ली., गुड़ 2 कि.ग्रा., बेसन 2 कि.ग्रा., पानी 100 ली. मिलाकर 5-7 दिनों के लिए किण्वित करें), और पंचगव्य (ताजा गाय का गोबर 1 कि.ग्रा., गोमूत्र 3.0 लीटर, गाय का दूध 2 ली., दही 2.0 ली., देसी गाय का घी 1 कि.ग्रा., गन्ने का रस 3 ली. मिश्रित करें और 7-10 दिनों के लिए किण्वन करें), का प्रयोग करने से उत्कृष्ट ग्रेड और बेहतर गुणवत्ता वाले गुड़ का उत्पादन होता है। जैविक गुड़ उत्पादन के लिए उपयोग की जाने वाली गन्ने की फसल को बीमारी और कीटों से बचाने के लिए गौमूत्र (5 प्रतिशत) का छिड़काव प्रभावी होता है। बेहतर और अच्छी गुणवत्ता वाले गुड़ का उत्पादन करने के लिए शरदकालीन गन्ने के साथ मटर और बसंतकालीन गन्ने के साथ लोबिया की अन्तःफसली तथा फसल की कटाई क्रमशः जनवरी, फरवरी और मार्च के महीने में उत्तम होती है।

गुणवत्तायुक्त जैविक गुड़ के लिए मृदा संरचना का महत्व

यद्यपि नाइट्रोजन उर्वरकों की उच्च खुराक देने से गन्ने की उच्च पैदावार पायी जाती है, लेकिन रसायनों का अधिक उपयोग गन्ने की फसल में करने से उत्पादित गुड़ की गुणवत्ता खराब होती है एवं ऐसे गुड़ की भण्डारण क्षमता कम होने के कारण निर्यात में कठिनाई आती है। बेहतर गुणवत्तायुक्त गुड़ के लिए उपयोग होने वाले गन्ने की किस्मों तथा उसके जैविक पोषक प्रबंधन पर अध्ययन अभी बहुत सीमित हैं। हालाँकि, वर्तमान में देश एवं विदेश में गुड़ की मांग को देखते हुए वैज्ञानिक विधि से और पर्यावरण के अनुकूल गन्ने की जैविक खेती और बेहतर गुड़ उत्पादन के तरीकों को लोकप्रिय बनाने की जरूरत है।

गुड़ की उपभोक्ता वरीयता और विपणन को प्रभावित करने में प्रमुख कारक इसकी बाहरी संरचना, अर्थात् रंग, बनावट और भंडारण क्षमता जो उच्च सुक्रोज, उच्च शुद्धता और कम कोलॉइड है, जो गुणवत्ता युक्त परिपक्व गन्ने पर निर्भर करती है। गन्ने की गुणवत्ता प्रमुख रूप से मृदा के गुणों एवं प्रकार पर भी निर्भर करती है। मृदा पौधे की वृद्धि के लिए एक प्राकृतिक माध्यम है जो पौधों को जड़ प्रणाली द्वारा पोषक तत्व उपलब्ध कराता है। भारत में, गन्ने की खेती विभिन्न प्रकार की मृदा पर की जाती है, जिसमें रेतीले से लेकर गीली मृदा तक होती है। गन्ने के रस तथा उससे निर्मित गुड़ की रासायनिक संरचना को निर्धारित करने में मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों और उसके *राइजोस्फीयर* का वातावरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रासायनिक उर्वरकों की प्रकृति और मात्रा भी गन्ने के रस और उससे बने गुड़ की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। मृदा की उर्वरता को बनाए रखने और उत्तम गुड़ उत्पादन के लिए एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एक बेहतर उपाय है। आमतौर पर, नाइट्रोजन उर्वरक की कम मात्रा बेहतर रस गुणवत्ता के साथ-साथ गुड़ के लिए उपयुक्त पायी जाती है। उच्च नाइट्रोजन की खुराक रस की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है क्योंकि यह रस में ग्लूकोज की मात्रा को बढ़ाती है। इस तरह के गन्ने के रस से तैयार गुड़ में ग्लूकोज की मात्रा अधिक होती है, जो वायुमंडल में उपस्थित जल को आसानी से सोखने वाला होता है और नतीजतन, बरसात के मौसम में ऐसा गुड़ तेजी से खराब हो जाता है।

जैविक गुड़ उत्पादन के लिए गन्ने के किस्म का चुनाव

गुणवत्तायुक्त गुड़ के उत्पादन में गन्ने की किस्में भी प्रमुख भूमिका निभाती हैं। गुणवत्ता वाले गुड़ में उच्च सुक्रोज और कम *इन्वर्ट* शर्करा के साथ रस की उच्च शुद्धता भी शामिल होती है। प्रयोगों में यह पाया गया है कि गुड़ के उत्पादन में प्रयोग होने वाली विभिन्न गन्ने की किस्मों के आधार पर गुड़ की गुणवत्ता में व्यापक भिन्नता मिलती है। यूपीसीएसआर, शाहजहाँपुर में किए गए विभिन्न अध्ययनों के परिणामों के आधार पर, कुछ किस्मों को गुड़ उत्पादन के लिए उपयुक्त पाया गया है। गन्ने में अधिकतम गुड़ अनुपात और रस में गुड़ अनुपात और न्यूनतम *इनवर्ट* चीनी अनुपात और रंग के साथ इन किस्मों का उपयोग बड़े पैमाने पर गुणवत्ता वाले जैविक गुड़ (तालिका 1) के उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

गन्ने की यांत्रिक पेराई

ग्रामीण क्षेत्रों में गन्ना पेराई के लिए विभिन्न प्रकार के कोल्हुओं का प्रयोग किया जाता है। पूर्व में गन्ने को बैल द्वारा संचालित लकड़ी के *मूसल-मोर्टार असेंबली* से पेरा जाता था बाद में लकड़ी का स्थान पत्थर ने ले लिया। उसके पश्चात लोहे के *डबल रोलर्स* का उपयोग होने लगा। आजादी के बाद तीन रोलर्स वाले गन्ना *क्रशर* और खुले पैन भट्टी विधि से गुड़ और खांडसारी का निर्माण लोकप्रिय हुआ। पिछले कुछ दशकों के दौरान

तालिका 1: जैविक गुड़ उत्पादन की उपज और गुणवत्ता के लिए गन्ने की विभिन्न किस्मों का तुलनात्मक प्रदर्शन

क्र.स.	गन्ने की किस्म	गन्ना उत्पादन (टन/हे.)	गुड़ उत्पादन (टन/हे.)	गुड़ : गन्ना	गुड़ : रस	पोल : गुड़	परिवर्तिती शर्करा %	*कलर रीडिंग*
1	को.शा. 08276	97.06	11.80	12.16	21.43	85.4	3.27	104
2	को. 0238	96.91	12.00	12.39	21.33	92.2	4.68	127
3	यू.पी. 05125	89.96	10.36	11.52	21.53	71.8	3.46	121
4	को.से. 01434	89.04	9.33	10.48	19.63	82.2	3.74	127
5	को.शा. 08279	95.83	10.53	10.99	20.51	84.2	3.34	116
6	को. 0118	91.20	11.23	12.31	21.87	85.2	3.79	110
7	को.शा. 07250	92.59	11.01	11.90	21.57	77.4	3.66	107
8	को.शा. 08272	90.27	11.03	12.22	21.68	85.6	3.77	112
9	को.से. 03234	75.77	8.67	11.45	21.37	83.6	3.70	113
10	को.शा. 767	84.10	9.63	11.45	21.15	83.2	3.88	123

तालिका 2: उत्तम गुड़ निर्धारण हेतु मानक पैमाना

क्र.सं.	मानक	मात्रा (प्रतिशत)
1	शर्करा	75–85
2	नमी	≥ 5
3	*कलर रीडिंग*	50 –150
4	राख	≥ 3
5	परिवर्तिती शर्करा	≥ 5

स्रोत : इण्डियन स्टैन्डर्ड केन गुड़ (जैगरी) स्पेसिफेशन आईएस 12923:1990

अलग-अलग केंद्रों, जैसे खड़गपुर, कानपुर, बिलारी, भोपाल और लखनऊ द्वारा किए गए अध्ययनों में *क्रशर* की रस निष्कर्षण क्षमता में सुधार के लिए क्षैतिज कोल्हू को ऊर्ध्ववार्धर की तुलना में रस निष्कर्षण में 2-4 प्रतिशत अधिक प्रभावी पाया गया। पहले इस्तेमाल होने वाले तीन *रोलर क्रशर* में लगभग 20-25 प्रतिशत तक रस *बगास* में ही छूट जाता था। हालांकि, प्रयोगों से अब यह सिद्ध हो गया है कि 9 से 11 *रोलर क्रशर* का उपयोग करने पर गन्ने के रस का 80 प्रतिशत से अधिक निष्कर्षण होता है। अच्छी तरह से साफ किए हुए, जड़/मिट्टी रहित गन्ने से अधिक रस परता तथा गुणवत्ता प्राप्त होती है।

गन्ने के रस को उबालना और उसका तापमान

पेराई किये हुए गन्ने के रस को गुड़ के उत्पादन के लिए भट्टी पर खुले पैन में उबाला जाता है। पहले गन्ने के रस को ईंटों की सहायता से जमीन में बने साधारण गोलाकार गड्ढों पर खुले *पैन* में उबाला जाता था। देश में विभिन्न स्थानों पर पिछले कुछ दशकों के दौरान *हीटिंग सिस्टम* में विभिन्न प्रयोग एवं विकास हुआ, जिसके कारण विभिन्न उन्नत भट्टियां अस्तित्व में आईं और उन्हें अपनाया गया। प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चूका है की, विभिन्न प्रकार का उत्तम गुड़ (ठोस, तरल एवं पाउडर), रस का उचित तापमान बिंदु तक पहुंचने में प्रयुक्त समय, भट्टियों एवं *पैन* की बनावट और क्षमता तथा गन्ने के किस्मों पर निर्भर करता है।

गुड़ की गुणवत्ता को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक बाहरी तापमान है। बेहतर गुड़ उत्पादन के लिए इष्टतम तापमान इसकी तैयारी के विभिन्न चरणों में अलग-अलग होता है। ये चरण अलग-अलग प्रक्रिया से जुड़े होते हैं जैसे कि रस को साफ करने वाले तत्त्व को मिलाना, मैली और झाग को हटाना, संकेन्द्रित रस को जलने से रोकने के लिए लगातार चलाना, आदि। कड़ाही में संकेन्द्रित रस को चाक में स्थानांतरित करने के लिए निर्धारित करना, चाक में संकेन्द्रित द्रव्यमान को ठंडा करना और सांचे में केंद्रित द्रव्यमान को भरना, गुणवत्तायुक्त गुड़ के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाता है। ठोस गुड़ को बनाने के लिए उचित तापमान 115^0-117^0 सेल्सियस पाया गया है (चित्र 1)।

चित्र 1: गुड़ के उत्पादन में प्रयुक्त विभिन्न चरण

जैविक गुड़ बनाने के लिए रस की सफाई

हल्के रंग का, क्रिस्टलीय, कठोर, कम हाइग्रोस्कोपिक और *हाइजीनिक* गुड़ बनाने के लिए उबालते समय रस के सफाई की आवश्यकता होती है। पूर्व में यह ज्यादातर *हीटिंग* विधियों द्वारा किया जाता था। अशुद्धियों के अवसादन में फिटकरी का इस्तेमाल किए जाने पर, गुड़ के रंग (हल्का) में सुधार दिखाई देता है। रसायनों के खतरनाक प्रभावों के बारे में अनभिज्ञता तथा सफाई में प्रयुक्त होने वाली उपलब्ध वनस्पतियों की अज्ञानता या सीमित ज्ञान के कारण यह पाया गया है कि व्यावसायिक गुड़ के उत्पादन के लिए, अधिकांश किसान *सोडियम हाइड्रो सल्फाइट, सोडियम* जैसे कई रासायनिक पदार्थों का उपयोग रस की सफाई के लिए करते हैं। *फॉर्मल्डिहाइड सल्फाइडोलेट* (चक्के), *सोडियम बाइकार्बोनेट* (बेकिंग सोडा), *सोडियम कार्बोनेट* (*वाशिंग* सोडा), *सुपर फॉस्फेट, फॉस्फोरिक एसिड, फिटकरी, सैलिसिलिक एसिड* और चूना जैसे रसायनों का उच्च सांद्रता और उच्च खुराक का उपयोग किया जाता है। *हाइड्रोज (सोडियम हाइड्रो सल्फाइट)* और *सोडियम कार्बोनेट (वाशिंग सोडा)* का बहुतायत में प्रयोग मानव स्वास्थ्य पर इनके हानिकारक प्रभावों को जाने बिना गुड़ का आकर्षक रंग प्राप्त करने के लिए किया जाता है। जिस गुड़ में *हाइड्रोज* और *सोडियम फॉर्मलाडेहाइड सल्फोक्सिलेट* (चक्के) का अधिक मात्रा में उपयोग किया जाता है, उस गुड़ में *सल्फर डाइ-ऑक्साइड* की 500 पीपीएम से अधिक मात्रा होती है, जो भारतीय मानकों (आईएस 12923): 1990 में निर्धारित 50 पीपीएम के मापदंडों से काफी अधिक है। *सल्फर डाई-ऑक्साइड* की यह मात्रा पाचन संबंधी विकारों और *गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल* समस्याओं आदि के लिए फायदेमंद आंतों के सूक्ष्म वनस्पति के लिए अत्यंत हानिकारक है।

हालाँकि, गुड़ उत्पादन करने के दौरान रस सफाई करने के लिए वानस्पतिक रस शोधकों की एक विस्तृत श्रृंखला उपलब्ध है, जो कि बेहतर गुणवत्ता वाले जैविक गुड़ बनाने के लिए बहुत अच्छी तरह से उपयोग में लाई जा सकती है, जिनमें, वनस्पति सुकाली का अर्क और मूँगफली मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। हालांकि सुकाली, मूँगफली की तुलना में बेहतर रस शोधक है। कैस्टर *(रिसिनस कम्युनिस)* के बीज के अर्क का उपयोग बेहतर चमक, आकर्षक रंग और अपेक्षाकृत अधिक सुक्रोज वाले गुड़ को प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है। *कोलोसैसिया* अच्छे रंग का गुड़ प्राप्त करने में फायदेमंद साबित हुआ है। मूँगफली, अरंडी के बीज के अर्क और सोयाबीन की गोलियों के उपयोग से (पीएच 6.4) बेहतर गुणवत्ता वाले गुड़ का उत्पादन होता है। एक अध्ययन से यह भी पता चला है कि गन्ने के रस का पीएच 6.4 तक सीमित रखने और भिन्डी के तने से प्राप्त श्लेष्मा का उपयोग करने से अच्छे रंग और स्थिरता वाले बेहतर गुड़ का निर्माण होता है। प्रसंस्कृत सोयाबीन का आटा, फिटकरी और अरंडी का तेल अपेक्षाकृत बेहतर सिद्ध हुआ है। प्रयोगों के आधार पर मूंगफली, सुकाली, सेमल की छाल और अरंडी के बीज की तुलना में देवला *(हिबिस्कस फिकुलनेस)* की क्षमता बेहतर पाई गई। भिन्डी श्लेष्मा के साथ किए गए एक प्रयोग में पाया गया कि इसमें रस से अधिकतम मात्रा में मैल को हटाने की क्षमता है, हालांकि इससे मध्यम गुणवत्ता वाले गुड़ का उत्पादन हुआ। विभिन्न राज्यों में किए गए अध्ययनों के परिणामों से पता चला है कि रस की सफाई के लिए उपलब्ध विभिन्न वनस्पति और रासायनिक उत्पादों में देवला *(हिबिस्कस फुकुलनेयस)* 6.0 जूस पीएच में सबसे अधिक प्रभावी है जो उच्च सुक्रोज एवं बेहतर गुणवत्ता वाले गुड़ का उत्पादन करता है, ऐसे गुड़ में शर्करा न्यूनतम होती है जिससे ये नमी को कम अवशोषित करती है और इसकी भंडारण क्षमता अपेक्षाकृत बेहतर होती है। गन्ने के रस में देवला की विभिन्न खुराकों के साथ किए गए प्रयोग में गुड़ की गुणवत्ता में सुधार, उच्च पोल की शुद्धता और गुड़ में *इनवर्ट शुगर* और राख की मात्रा का प्रतिशत कम पाया गया। देवला की सबसे अच्छी खुराक 150-160 ग्राम प्रति 4 कुंतल रस पायी गयी है। हालाँकि, उत्तम जैविक गुड़ बनाने के लिए बेहतर रस की सफाई करने वाले जैविक उत्पादों के लिए अभी भी प्रयोग एवं प्रयास जारी है।

गुड़ के विभिन्न प्रकार एवं उसका मूल्यवर्धन

प्राचीन काल से गुड़ विभिन्न आकार, प्रकार और तौल में बनाया जाता है। गर्म गाढ़े रस को 114^0 से 118^0 सेल्सियस के *स्ट्राइकिंग* तापमान पर (गन्ने की किस्म के अनुसार) आग से हटा दिया जाता है तथा उसको लकड़ी की चम्मच से ठंडा किया जाता है। गुड़ के आकार में एकरूपता के लिए, तथा उपभोक्ता की स्वीकार्यता के अनुसार शीतलन पैन में ठंडा करने के बाद केंद्रित अर्ध-ठोस द्रव्यमान को *मोल्डिंग फ्रेम* (ईंट और *क्यूब्स* के आकार) में डाला जाता है और करछुल के साथ समतल किया जाता है। सूखने के बाद, ईंट और *क्यूब्स* आकार के ठोस बने हुए गुड़ को *फ्रेम* से हटा दिया जाता है और भण्डारण हेतु सुरक्षित रख लिया जाता है।

प्रयोगों द्वारा गुणवत्तायुक्त पाउडर गुड़ बनाने की प्रक्रिया को भी मानकीकृत किया गया है। इसके लिए रस को 120^0-122^0 सेंटीग्रेट के *स्ट्राइकिंग पॉइंट* तक गर्म किया जाता है। गर्म द्रव्यमान को हटा दिया जाता है, फिर मिश्रण को ठंडा कर *पैन* से प्लेटफॉर्म (लकड़ी) पर स्थानांतरित किया जाता है और *क्रिस्टल* गठन के लिए जमने के तुरंत बाद, *मैन्युअल* रूप से लकड़ी के

स्क्रेपर्स का उपयोग करके पाउडर को बनाया जाता है। इसके बाद इस पाउडर को 1-3 मि.मी. की छलनी से छानते हैं और, लगभग 1 प्रतिशत नमी होने तक सुखाते हैं।

तरल गुड़ को बनाने के लिए 105^0-106^0 सेंटीग्रेट का *स्ट्राइकिंग* तापमान सबसे अनुकूल होता है जिससे उत्पादित तरल में न्यूनतम *माइक्रोबियल* विकास और क्रिस्टलीकरण के साथ अच्छी गुणवत्ता प्राप्त होती है। (चित्र 2)।

चित्र 2: गुड़ के ठोस, तरल और पाउडर रूप

इस प्रकार के तरल, ठोस एवं पाउडर गुड़ में विभिन्न प्रकार के अन्य खाद्य पदार्थ जैसे हल्दी, अजवाइन, सोंठ पाउडर, तिल, मूँगफली दाना, चाकलेट आदि का आवश्यकतानुसार उपयोग करके बिना अधिक लागत के उत्पाद का मूल्य कई गुना अधिक बढ़ा सकते हैं।

गुड़ का भंडारण और पैकिंग

शाहजहांपुर में पूर्व में किये गए प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि पेड़ी गन्ने से प्राप्त गुड़ की भण्डारण क्षमता गन्ने की बावक फसल से प्राप्त गुड़ की तुलना में अधिक होती है। साथ ही निचले भाग की तुलना में गन्ने के शीर्ष भाग से बना गुड़ जल्दी खराब हो जाता है। भंडारण के उद्देश्य के लिए, जनवरी से मार्च के दौरान तैयार किया गया गुड़ बेहतर पाया गया है। पहले गुड़ के भंडारण के लिए सामान्य मिट्टी के बर्तनों, हेसियन की बोरियों में और खुले कमरों का उपयोग किया जाता था इस प्रकार भंडारित गुड़ मानसून के मौसम में पिघल जाता था। अब प्रयोगों के आधार पर गुड़ भंडारण के बेहतर तरीके, अर्थात रंगे हुए मिट्टी के बर्तन, सुखाने-सह-भंडारण बर्तन और सुखाने सह-भंडारण गोदाम, जो मानसून के मौसम में 65 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता से ऊपर भी गुड़ की भंडारण क्षमता में दक्ष होते हैं, का उपयोग अधिक किया जाता है। एक समान ईंट के आकार के 500, 250 और 125 ग्राम के गुड़ और 25 मिमी के *क्यूब्स* के *मोल्डिंग फ्रेम* में बनाए गए गुड़ को *डबल लेयर्ड बटर* और *ग्लेज्ड पेपर* में पैक करके तथा *सिलोफिन रैपिंग* करने से मक्खियों, गंदगी और धूल को दूर रखा जा सकता है साथ ही उपभोक्ताओं को आकर्षित करके अच्छी कीमत प्राप्त की जा सकती है। एल्केथीन में लपेटने के बाद कोल्ड स्टोरेज, टिन या कमरे के तापमान पर भंडारण करने से गुड़ की गुणवत्ता को अधिक समय तक बेहतर पाया गया, जबकि एल्केथीन और हेसियन के कपड़े के साथ पैकिंग को अभी तक अधिक लाभकारी माना जाता रहा है (चित्र 3)। साधारण कमरे के तापमान में संग्रहण की तुलना में शीतगृहों में अल्कथीन में लपेटा गुड़ अधिक समय तक बेहतर पाया गया है। साधारण भंडारण में अच्छी तरह से सूखे गुड़ की *पॉलिस्टर फिल्म पैकिंग* बेहतर साबित होती है। सोंठ पाउडर/2 प्रतिशत को गुड़ के साथ मिलाकर रखने से गुड़ की भण्डारण बेहतर पाया गया क्योंकि इससे गुड़ की गुणवत्ता में सुधार होता है।

चित्र 3: बेहतर भंडारण क्षमता के लिए गुड़ की पैकेजिंग

गुड़ एक महत्वपूर्ण *स्वीटनर* (मिष्ठान) होने के साथ ही एक अच्छा पोषण और औषधीय महत्व वाला पदार्थ भी है और मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जब गन्ने की जैविक विधि से खेती की जाती है एवं जैविक उर्वरक से भरपूर मिट्टी से उत्पादन लिया जाता है। साथ ही रस को साफ करने के लिए जब वानस्पतिक सफाई करने वाले पदार्थों का उपयोग किया जाता है तो उत्तम गुणवत्ता (रंग, बनावट, स्वाद) वाले श्रेष्ठ गुड़ का निर्माण होता है। इस प्रकार से बने जैविक गुड़ का रंग हल्के सुनहरे भूरे रंग से भिन्न हो सकता है, लेकिन विशेष ग्रेड वाला गुड़ रंग में हल्का सुनहरा हो सकता है। प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से गुड़ का सेवन, चीनी की अपेक्षा बेहतर होता है। अतः गुड़ उत्पादन हेतु कृषकगण जैविक खेती द्वारा गन्ना उत्पादन करके तत्पश्चात् वैज्ञानिक संस्तुतियों के अनुरूप वानस्पतिक रस शोधकों के प्रयोग से गुड़ उत्पादन करें और उत्पादित गुड़ का अच्छा मूल्य प्राप्त करने हेतु अन्य खाद्य पदार्थों के मिश्रण से गुड़ की उपयोगिता बढ़ाने के साथ ही अधिक मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUus dk LoLFk vkSj xq.koÙkkiw.kZ chT mRiknu gsrq Qly çcaèku

o#pk feJk] vk'kqrks"k dqekj eYy] eqds'k dqekj] lh-ih- çtkifr ,oa vf'ouh nÙk ikBd

Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqlaèkku laLFkku] y[kuÅ

गन्ने के स्वस्थ और गुणवत्ता पूर्ण बीजों का उत्पादन फसल की अच्छी उत्पादकता में अहम भूमिका निभाता है। वांछित मानकों के अनुरूप स्वस्थ बीज गन्ना का उत्पादन करने के लिए विभिन्न फसल संरक्षण उपायों के साथ विशेष कर्षण प्रथाओं एवं फसल की सही देख-रेख की आवश्यकता पड़ती है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण क्रियाएँ नीचे वर्णित की गयी हैं:

अपलैंड फील्ड

बीज की फसल को बढ़ाने के लिए अपलैंड क्षेत्र का चयन किया जाता है। एक खेत से दूसरे खेत में वर्षा के पानी को जाने से रोका जाता है जिससे रोगों (जैसे लाल सड़न रोग) का संचारण एक खेत से दूसरे खेत में न हो। जिस भी क्षेत्र को इस उद्देश्य के लिए चयनित किया जाता है उसमें दो बातों का ध्यान दिया जाता है। प्रथम वह क्षेत्र गन्ना अवशेषों से मुक्त होना चाहिए और द्वितीय उस क्षेत्र में पिछले वर्ष इस फसल की खेती नहीं होनी चाहिए।

स्वस्थ गन्ने का बीज

स्वस्थ गन्ने का बीज या तो अनुसंधान केंद्र से या किसान के क्षेत्र में उगाए गए न्यूक्लियस बीज के संतान से प्राप्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त शुद्ध बीज की प्राप्ति आर्द गर्म हवा के उपचार से उन बीजों से प्राप्त किया जा सकता है जो पूर्वतः नर्सरी से उत्पादित कीट एवं रोग रहित बीज हों। साथ ही ओर्गेनोमार्क्यूरिल यौगिकों के साथ सेट का उपचार करने से बेहतर अंकुरण की प्राप्ति होती है। हीट थेरेपी के द्वारा गन्ने के बीजों में या तो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से पैदा हुए रोगों के संक्रमण को समाप्त किया जाता है। स्वस्थ बीज उत्पादन में इस तकनीक का उपयोग आवश्यक हो गया है। हीट थेरेपी की विभिन्न प्रणालियां जैसे गर्म पानी, नम गर्म हवा और वाष्पित भाप उपचार स्वस्थ बीज उत्पादन हेतु उपयोग में हैं।

रोपण का समय

रोपण का समय इस प्रकार से चुना जाना चाहिए कि बीज की फसल दस महीनों के बाद कटाई के लिए तैयार हो जाए। यह उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय दोनों ही क्षेत्रों के लिए लागू होता है। तमिलनाडु के कुछ हिस्सों में, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, विशेष रूप से तेलंगाना क्षेत्र, में दो रोपण सत्र होते हैं, अर्थात् (क) मुख्य मौसम-नवंबर से मार्च और (ख) विज्ञापनली या विशेष मौसम-जून से सितंबर। ऐसे मामले में, एक मौसम की फसल दूसरे मौसम में बीज के लिए प्रयोग की जाती है। अनाकापल्ली में, बीज के लिए लगभग 6 महीने की उम्र की एक छोटी अवधि की फसल का उपयोग किया जाता है। इसके लिए फरवरी मार्च में रोपण और जुलाई के अंत में कटाई करके किया जाता है। अगस्त-सितंबर में यह फिर से रोपण की जाती है। ऐसी फसल क्षेत्र के आधार पर 6-8 गुणा अधिक उत्पादन देती है। मुख्य फसल लगाने के लिए इसे फिर से जनवरी-फरवरी तक काट दिया जाता है।

सेट का आकार

सेट गन्ने के प्ररोह का एक हिस्सा है जिसमें तीन आँख से कम नहीं होती है (प्रत्येक पोरी पर एक आँख होती है)। यह एक तेज धारित उपकरण से गन्ना को काटने से प्राप्त किया जाता है। गन्ने के शीर्ष भाग से प्राप्त सेट में अधिक कलियां हो सकती हैं परंतु ये छह से अधिक नहीं होनी चाहिए। दो या तीन आँख वाले सेटों का काफी उपयोग किया जाता है क्योंकि इसको रोपण करने से अच्छी अंकुरण व अधिक प्ररोह की संख्या प्राप्त होती है। हालांकि, कुछ किसान बीज गन्ना के त्वरित गुणा के लिए 3 आँख वाले सेटों के उपयोग करने के लिए सही मानते हैं।

पंक्तियों के बीच का अंतराल और बीज की दर

एक सामान्य प्ररोह की आबादी में 90-90 से.मी. पंक्ति से पंक्ति के बीच की दूरी पायी जा सकती है। इस रिक्ति के लिए प्रति हेक्टेयर में 12,300 कलियों की आवश्यकता होती है तथा 15.5 महीने की उम्र में 1 लाख/हेक्टेयर की प्ररोह की आबादी का उत्पादन होता है। इस दूरी पर, लगाए जाने पर आँखों द्वारा उत्पादित आँखों व बोयी गयी आँखों के अनुपात 172:1 तक की पाई गयी है। यदि अच्छी परिस्थितियां प्रदान की जाती हैं, तो यह अनुपात 200:1 तक बढ़ सकता है।

उपोष्ण क्षेत्र की स्थितियों में जब गन्ने के सेट में नमी में कमी होती है तब अतिरिक्त इंटर्नोड्स व पोरियों की संभावना होती है। जबकि उष्णकटिबंधीय स्थितियों में पर्याप्त सिंचाई के साथ भी इस तरह की क्रिया में कमी होती है। हालांकि, अगर 12000 बड प्रति हेक्टेयर की बीज दर पर खरोंच कर निकाले जाएँ तब गन्ने

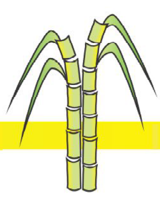

की बड्स का गुणांक 60 तक पहुँच जाता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी कितनी होनी चाहिए यह पूर्णतः गन्ने के किल्ले निकलने की प्रक्रिया पर निर्भर करता है जो गन्ने की किस्म पर भी निर्धारित करता है। यह दूरी 90-100 सेंटीमेटर तक की आम किल्ले निकलने वाली प्रजीतियों में व 60-75 सेंटीमीटर तक की कम किल्ले निकलने वाली प्रजीतियों से अधिक नहीं होनी चाहिए। गन्ने की पंक्तियों के बीच में उचित दूरी धूप की उपलब्धता सुनिश्चित करती है और इष्टतम किल्ले उत्पादन और उनके अस्तित्व में भी लाभकारी होता है। बीज फसल में संकीर्ण दूरी कीट और बीमारियों और उनके नियंत्रण एवं संचालन के लिए नियमित निरीक्षण में बाधा डालती है।

उर्वरक और सिंचाई

भारत और अन्य देशों में बीज की फसल में उर्वरक और सिंचाई देने पर सीमित जानकारी उपलब्ध है। बीज की फसल को बढ़ाने के लिए अधिकांश सिफारिशें और कर्षण क्रियाओं को या तो गन्ना की वाणिज्यिक कृषि से अपनाया गया है या साधारण आकस्मिक अवलोकनों और अनुमानों पर आधारित है। बीज गन्ना की फसल से लगभग 20 दिन पहले 20-30 किलोग्राम नत्रजन/हेक्टेयर के अतिरिक्त देना चाहिए। नत्रजन व फास्फोरस की निर्धारित मात्रा में 25 प्रतिशत बढ़त व पोटाश की निर्धारित मात्रा में 50 प्रतिशत की वृद्धि करके बीज से उत्पादित फसल पर प्रयोग करना चाहिए। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में और उपोष्ण क्षेत्रों में जितनी देर हो सके नत्रजन का उच्च स्तर कारक शर्करा को कम करता है और नत्रजन के स्तर को और अवकारक शर्करा को बढ़ाता है, विशेष रूप से ग्लूकोज की मात्रा को जो गन्ने के बीज के अंकुरण को लाभवान्वित करती है। बिहार क्षेत्र के लिए 25 कि. ग्रा./हे. की दर से नत्रजन की प्रत्येक दो अतिरिक्त खुराक का उपयोग करना चाहिए। बीज से उत्पादित फसल के लिए अधिक सिंचाई की आवश्यकता होती है। ठंड के दुष्प्रभावों से फसल को बचाने के लिए, बीज की फसल को पर्याप्त रूप से सिंचित किया जाना चाहिए। ऐसे क्षेत्रों के लिए पहले जून में और फिर अगस्त-सितंबर माह में सिंचाई किया जाना आवश्यक है। साथ ही फसल की कटाई से 10 दिन पहले अंतिम सिंचाई दी जानी चाहिए।

बीज फसल की आयु

गन्ने की बीज उत्पादित फसल की आदर्श उम्र उष्णकटिबंधीय भारत में 8-10 महीने और उपोष्ण क्षेत्रों में 10-12 महीने की होती है। दक्षिण भारत में, गन्ने की फसल का रोपण बीज उत्पादन हेतु 6-7 महीने की अवधि के लिए किया जाता है, जिसे लघु बीज फसल के रूप में जाना जाता है। स्वस्थ फसल प्राप्त करने के लिए फसल में सही मात्रा में उर्वरक के उपयोग के साथ-साथ परिपूर्ण सिंचाई दी जानी चाहिए।

रोग और सफाई

स्वस्थ उच्च गुणवत्ता व आनुवांशिक रूप से शुद्ध बीज का उत्पादन करने हेतु फसल को रोग रहित होना चाहिए। इसलिए बीज गन्ने से उत्पादित फसल को अंकुरित चरण से नियमित अंतराल पर सावधानीपूर्वक निरीक्षण किया जाना चाहिए और सभी कीटों और बीमारियों से सावधानी से बचाव किया जाना चाहिए। जैसे ही लक्षण दिखाई दे, प्रभावित गन्ने के थान को बाहर निकाल देना चाहिए जिससे वह अन्य स्वस्थ थानों को प्रभावित न कर सके। उचित प्रोफाइलैक्टिक उपायों को अपनाकर फसल को कीटों व रोगों से मुक्त रखा जाना चाहिए। फसल को गिरने से बचाने हेतु सही तरह से गन्ने की बंधाई की जानी चाहिए। गिरे हुये गन्नों की फसल में, गन्ने की बड्स अंकुरित हो जाती है जिसके कारण उसकी गुणवत्ता कम हो जाती है। रोग रहित रखने के लिए निचली सूखी पत्तियों को सितंबर माह में हटाना चाहिए जिससे कीट की जनसंख्या में कमी तथा हवा का आसानी से आवागमन हो सके।

इस प्रकार से स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता युक्त गन्ने का बीज उत्पादित करने के लिए फसल का सही प्रबंधन किया जाता है।

स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता युक्त गन्ने के बीज से उत्पादित खेत

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUus ls vf/kd tSo&bZa/ku mRiknu gh fdlkuksa ,oa fey ekfydksa dh leL;k dk ,d ek= fodYi

jke th yky ,oa jktsa'k dqekj
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

भारत में लगभग 50 लाख हे. क्षेत्रफल में गन्ने की खेती होती है जिससे 4100 लाख टन गन्ना तथा 320 लाख टन चीनी का उत्पादन होता है।

देश का गन्ना किसान इस समय दो प्रकार की समस्याओं से ग्रसित है। एक तरफ उसे गन्ने का उचित मूल्य का भुगतान समय पर नहीं मिल रहा है और अगर मिल भी रहा है तो काफी देरी से। वहीं दूसरी ओर भूजल में लगातार गिरावट के कारण गन्ना उत्पादन का खर्च भी बढ़ रहा है। किसानों को गन्ने का समय से भुगतान न मिलने का मुख्य कारण यह है कि गन्ने का मूल्य सरकार द्वारा निर्धारित किया जाता है जबकि चीनी मिलों को चीनी बाजार भाव पर बेचनी होती है। गन्ने का अधिक मूल्य होने के कारण किसानों को अधिक लाभ मिल रहा है, इसलिये किसान गन्ने का उत्पादन बढ़ा रहे हैं जबकि चीनी मिलें उससे उत्पादित चीनी को बाजार भाव पर बेचने पर मजबूर हैं। इस समय गन्ने का मूल्य लगभग ₹ 2800 प्रति क्विंटल है। वहीं अमेरिका में इसका दाम ₹ 2200 प्रति क्विंटल है। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि भुगतान की समस्या मुख्यतयाः सरकार द्वारा गन्ने का अधिक मूल्य निर्धारित किये जाने के कारण है। सरकार ने 9.5 प्रतिशत चीनी की रिकवरी के आधार पर गन्ने का मूल्य ₹ 255 प्रति कुन्तल निर्धारित किया है। इस आधार पर चीनी मिल मालिकों को घरेलू बाजार में चीनी बेचना सम्भव नहीं है क्योंकि किसानों को ₹ 26.84 प्रति कि.ग्रा. गन्ना का मूल्य देना है जो कि असम्भव है। अतः चीनी मिलों को घाटा हो रहा है।

इस समस्या का एक विकल्प यह हो सकता है कि चीनी के अधिक उत्पादन को कम चीनी उत्पादन वाले देशों में निर्यात कर दिया जाए। परन्तु यह भी कठिन है क्योंकि अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में चीनी का दाम हमारे देश से कम है। विश्व बाजार में इस समय चीनी का मूल्य लगभग ₹ 22 प्रति कि.ग्रा. है जबकि हमारे देश में यह लगभग ₹ 35 प्रति कि.ग्रा. है। इसलिये देश में उत्पादित चीनी को विश्व बाजार में बेचने के लिए सरकार को भारी मात्रा में अनुदान देना होगा, परन्तु इसमें विश्व व्यापार संगठन के नियम आड़े आयेगें तथा सरकार पर बोझ भी बढ़ेगा। सरकार पहले उर्वरक और बिजली पर अनुदान देकर गन्ने का उत्पादन बढ़ा रही है और फिर गन्ने के बढ़े हुए उत्पादन पर निर्यात अनुदान प्रदान कर उसका निष्पादन कर रही है। इस तरह सरकार पर दोहरा भार पड़ने के कारण चीनी निर्यात करना अत्यन्त सफल नहीं होगा।

ब्राजील दुनिया का सबसे बड़ा गन्ना उत्पादक देश है। जब वर्ष 1970 में वहाँ तेल की कीमते बढ़ीं तो ब्राजील ने गन्ने से इथेनाल बनाने हेतु राष्ट्रीय अल्कोहल मिशन ''प्रोएल्कोहल'' नाम से प्रारम्भ की। सरकार ने इस मिशन के अर्न्तगत इथेनाल उत्पादन करने वालों को अनुदान प्रदान किया। अतः आज ब्राजील में राष्ट्रीय स्तर पर 27 प्रतिशत इथेनाल पेट्रोल में मिलाया जा रहा है। ब्राजील गन्ने का उत्पादन लगातार बढ़ा रहा है। विश्व बाजार में जब पेट्रोल महंगा होता है तो वह गन्ने का उपयोग इथेनाल उत्पादन के लिए करता है तथा चीनी निर्यात कम कर देता है। इसके विपरीत जब विश्व बाजार में चीनी का दाम अधिक होता है तो वह इथेनाल का उत्पादन कम करके चीनी का उत्पादन अधिक करता है और उसका निर्यात करता है।

भारत सरकार भी ब्राजील की नीति को अपनाना चाह रही है। अतः इस समस्या से निदान हेतु गन्ना से चीनी बनाने के स्थान पर यदि अल्कोहल बनाया जाये तो उसका उपयोग पेट्रोल में मिश्रण हेतु किया जा सकता है। गन्ने का उत्पादन जब इथेनाल बनाने के लिये होगा तो चीनी का उत्पादन कम किया जा सकता है। सरकार का प्रयास है कि देश में इथेनाल का उत्पादन बढ़ाया जाये जिससे आयातित तेल पर हमारी निर्भरता कम हो जाये और चीनी के अधिक उत्पादन की समस्या से भी मुक्ति मिल सके। दिसम्बर 2009 में जारी की गयी राष्ट्रीय जैविक ईंधन योजना के अनुसार 2010-12 तक पेट्रोल में 5 प्रतिशत इथेनाल की मिलावट तथा धीरे-धीरे 2016-17 तक 10 प्रतिशत एवं उसके उपरान्त 2020 तक 20 प्रतिशत इथेनाल मिश्रित करने की योजना सुनिश्चित की गयी थी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु 1.92 मीट्रिक टन इथेनाल तथा 3.52 मि. टन कुल अल्कोहल की आवश्यकता होगी। अतः सरकार चीनी मिल मालिकों को गन्ने से चीनी उत्पादन के स्थान पर इथेनाल उत्पादन करने पर बल दे रही है। ऐसी चीनी मिलें जिन्होंने तेल मार्केटिंग कम्पनियों को इथेनाल देने

के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर किए हैं, उन्हें इस प्रस्ताव के अर्न्तगत 80 प्रतिशत इथेनाल तेल कम्पनियों को अवश्य देना होगा। सरकार ने ऐसे मिल मालिकों को 100 कि.ग्रा. गन्ने की पिराई पर ₹ 5.50 अतिरिक्त मूल्य देने का प्रावधान किया है। इस कार्यक्रम पर लगभग ₹ 1540 करोड़ खर्च होगें जिसके अर्न्तगत मिल मालिक किसानों को गन्ने का बकाया मूल्य का भुगतान कर सकेगें। इससे किसानों एवं मिल मालिकों दोनों को ही लाभ होगा तथा राष्ट्रीय कच्चा तेल आयात बिल पर भी खर्चा कम आयेगा जिससे लगभग 1.8 मिलियन बैरक कच्चे तेल का आयात करने की बचत होगी।

दो प्रकार के ईंधन जीवाश्म ईंधन (प्राकृतिक ईंधन) जैसे कोयला, कच्चा तेल, गैस इत्यादि तथा अन्य प्रमुख ईंधन स्रोत जैसे सौर, जल एवं वायु ऊर्जा इत्यादि। जीवाश्म ईंधन मनुष्य द्वारा उत्पादित नहीं किया जा सकता है और न ही उसे पुनः उपयोग में लाया जा सकता है। अतः यदि एक बार जीवाश्म ईंधन खत्म हो जायेगा तो वह सदा के लिए समाप्त हो जायेगा। यदि हम इसी तरह जीवाश्म ईंधन का दुरुपयोग करते रहेंगे तो उससे उत्पन्न कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड तथा अन्य हानिकारक गैसें जो कि हमारे उद्योगों (मिलों), वाहनों/गाड़ियों आदि से निकलती हैं, उससे *'ग्लोबल वार्मिंग'* एवं वातावरण प्रदूषित होगा। वायुमंडल में उपस्थित ओजोन गैस की परत की कमी के कारण पृथ्वी पर पराबैगनी किरणें प्रवेश कर रही हैं जिसके कारण मानव का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। इथेनाल (ईथाइल) एक प्रकार का अल्कोहल है जिसका रसायनिक फार्मूला C_2H_5OH है। अल्कोहल शब्द अरेबिक शब्द ''एक कूहल'' से उत्पादित हुआ है जो कि एक प्रकार का महीन पाउडर होता है जो कि आँख की साज-सज्जा के लिये उपयोग किया जाता है। यह पाउडर एन्टीमनी नामक तत्व के *डिस्टिलेशन* (वाष्पोत्सर्जन) के समय बनता है। आधुनिक युग में इथेनाल का उत्पादन चीनी के किण्वीकरण द्वारा किया जाता है। यह प्रतिक्रिया दो चरणों में इर्न्वटेज एवं जाईमेज नामक एन्जाइम की उपस्थिति में पूर्ण होती है।

इर्न्वटेज एन्जाईम

$$C_{12}H_{22}O_{11} + H_2O \xrightarrow{\text{इर्न्वटेज एन्जाईम}} C_6H_{12}O_6 + C_6H_{12}O_6$$

$$C_{12}H_{22}O_{11} + H_2O \xrightarrow{\text{जाईमेज एन्जाईम}} 4CH_3CH_2OH + 4CO_2$$

इथेनाल में आक्सीजन कण उपस्थित होता है जिसके कारण वायुमंडल में उत्सर्जन कम होने के कारण प्रदूषण अत्यन्त कम होता है। इथेनाल गैसोलीन की अपेक्षाकृत सस्ता ही नहीं अपितु स्वच्छ, सुरक्षित एवं हानिरहित ईंधन है। यह कार्बन डाई आक्साईड आदि ग्रीन हाउस गैसें जो कि वायुमंडल को प्रदूषित करती हैं, उनका उत्सर्जन भी कम करता है जो कि मनुष्य के लिये हानिकारक है। इथेनाल को आटोमोबाइल इंजन में शत-प्रतिशत इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका उपयोग 85:15 प्रतिशत के अनुपात में गैसोलीन में मिलाकर मल्टीप्लक्स वाहनों/गाड़ियों में जिसमें ई-85 इंजन प्रयोग होता है, उनमें किया जा सकता है। इस प्रकार के वाहन कनाडा, ब्राजील, अमेरिका आदि देशों में निर्मित किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त, इथेनाल का उपयोग 23:77 प्रतिशत के अनुपात में (इथेनाल+गैसोलीन) एस.आई. इंजन में भी किया जा सकता है। भारत में इथेनाल के निम्नलिखित तीन उपयोग हैं। अल्कोहल पर आश्रित रसायनिक उद्योगों में, पोर्टेबिल अल्कोहल के उत्पादन में लगभग 40 प्रतिशत एवं शेष पेट्रोल में मिश्रण करने तथा अन्य कार्यों में प्रयुक्त होता है। हमारे देश में इथेनाल के उत्पादन एवं आपूर्ति में काफी अंतर है। परन्तु वर्ष 2010-11 तथा उसके उपरान्त इथेनाल उत्पादन में काफी सुधार हुआ है। अतः चीनी मिल मालिकों को चीनी उत्पादन के अतिरिक्त इस दिशा में अपना व्यापार बढ़ाने की काफी सम्भावना है।

इसके अतिरिक्त, चीनी मिलों को इससे प्राप्त उत्पाद एवं सह-उत्पादों को भी निर्यात करना चाहिए जिससे उन्हें उचित लाभ मिल सके। सरकार को फ्लेक्सी-ईंधन वाली गाड़ियों के उपयोग पर भी जोर देना चाहिए जिससे कि पेट्रोल में 30 प्रतिशत तक इथेनाल मिलाना सम्भव हो सकेगा। देश में गाड़ियों तथा वाहनों की बढ़ती संख्या के कारण प्रदूषण खतरे के निशान पर है। अतः ऐसा करने से वातावरण भी शुद्ध रहेगा।

इथेनाल वार्षिक फसलों जैसे चुकन्दर, मीठी ज्वार जिनमें चीनी की मात्रा अधिक पायी जाती है एवं मक्का, गेहूँ, आलू, कसावा, शकरकन्द जिनमें स्टार्च की मात्रा अधिक पायी जाती है, उनसे भी उत्पादित किया जा सकता है। सेलूलाईटिक पदार्थों जैसे गन्ने की खोई, कृषि फसल अवशेषों (धान, सरसों, सोयाबीन, चना आदि की भूसी), नारियल, जंगली घासों, लकड़ी के टुकड़ों, रद्दी कागज जो कि मिल क्षेत्रों में पाये जाते हैं उनका भी उपयोग इथेनाल उत्पादन में किया जा सकता है।

अतः गन्ना किसानों की समस्या का एकमात्र विकल्प यह है कि गन्ने का उत्पादन कम किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि सरकार द्वारा निर्धारित किए गये गन्ने के मूल्य में भारी कटौती की जाए। जब गन्ने का दाम कम होगा तो किसान स्वंय ही गन्ने का उत्पादन कम करेंगे। इसके अतिरिक्त चीनी मिलें गन्ने से चीनी का उत्पादन जरूरत के अनुसार कम करके यदि इथेनाल बनाएं तो किसानों एवं मिल मालिकों दोनों को ही उचित लाभ मिल सकेगा।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUus dh nksgjh iafDr ukyh cqokbZ fof/k

dkerk izlkn] ,-d- lkg] cjlkrh yky] fnyhi dqekj ,oa jke jru oekZ
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

गन्ने की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत की तैयारी, भूमि की उर्वरा शक्ति, बीज की गुणवत्ता, बीज की मात्रा, गन्ने की किस्मों के अलावा बुवाई की विधियों का बहुत प्रभाव पड़ता है। बुवाई की विधि में परिवर्तन करके लागत में बढ़ोत्तरी न करते हुए भी गन्ने की उपज को बढ़ाया जा सकता है। इसी कड़ी में गन्ने की नाली बुवाई विधि अपनाकर गन्ने की उपज को 100-130 टन प्रति हेक्टेयर तक बढ़ाया जा सकता है जो कि समतल विधि की अपेक्षा 30-40 टन प्रति हेक्टेयर अधिक होती है।

कार्य विधि

नालियाँ बनाना

- नालियाँ बनाने से पहले खेत की गहरी जुताई करके अच्छी तरह से तैयार करें।
- पहली नाली खोलने के लिए खेत की मेड़ से 60 से.मी. (2 फिट) जगह छोड़ दें।
- *ट्रैंच ओपनर* मशीन से 30 से.मी. गहरी, 30 से.मी. चौड़ी तथा 120 से.मी. (4 फिट) के अंतराल पर खेत में नालियाँ बना लें।

गन्ने के टुकड़ों की कटाई व उपचार

- सिर्फ संस्तुत गन्ना प्रजातियों को ही बुवाई के लिए चुनें।
- स्वस्थ आँख वाले तथा बीमारी एवं कीटों से रहित गन्ने को ही चुनें।
- अब गन्ने को दो आँख वाले टुकड़ों में काट लें।
- जो भी टुकड़े लाल हों, जिनमें आँखें खराब हों या जिनको कीड़ों ने खाया हो, इस तरह के सारे टुकड़ों को अलग कर दें तथा इनका इस्तेमाल बीज के लिए बिलकुल न करें अन्यथा खेत में दीमक की समस्या हो सकती है। इसके अलावा खेत में खाली स्थान भी रह सकते हैं।
- 200 ग्राम बावस्टिन का 100 लीटर पानी में घोल बना लें।
- बीजजनित बीमारियों से बचाव के लिए कटे टुकड़ों को बाबिस्टिन घोल में 10-15 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें।

बुवाई

- अच्छी पैदावार लेने के लिए नालियों में 100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर (ढाई एकड़ में) की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट को नालियों में रासायनिक उर्वरकों को डालने के पहले डालें।
- गन्ना बुवाई के समय नालियों में 150 कि.ग्रा. यूरिया, 130 कि.ग्रा. डी.ए.पी. व 100 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से डालें।
- गन्ने की एक पंक्ति नाली के एक किनारे पर तथा दूसरी पंक्ति नाली के दूसरे किनारे पर लगाएं अर्थात प्रत्येक नाली में गन्ने की दो पंक्तियाँ लगाएं।
- नालियों में गन्ने के कटे हुए टुकड़ों को अखुएँ से अखुआ या सिरे में सिरा मिलाकर बोयें।
- एक हेक्टेयर की मिट्टी को उपचारित करने के लिए 5 लीटर *क्लोरपायरीफास* 20 ई.सी. को 1500-1600 लीटर पानी में मिलाकर घोल बना लें।
- उपरोक्त घोल को गन्ने के टुकड़ों के ऊपर छिड़क दें। ऐसा करने से दीमक व सैनिक कीट का प्रकोप नहीं होगा।
- दीमक व सैनिक कीट से बचाव के लिए *फिप्रोनिल* 0.3 प्रतिशत के दानों का भी प्रयोग 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से कर सकते हैं अथवा जैव-कीटनाशी *मेटाराइजियम एनीसोप्ली* की 5 कि.ग्रा. मात्रा को 2-3 कुंतल गोबर की खाद या सड़े हुए *प्रेसमड* में मिलाकर प्रति हेक्टयर की दर से प्रयोग करें।
- 20 कि.ग्रा. ट्राईकोडर्मा को 200 कि.ग्रा. गोबर की खाद के साथ मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से टुकड़ों के ऊपर डाल दें।
- ट्राईकोडर्मा का प्रयोग उर्वरक, कीटनाशी इत्यादि डालने के बाद तथा गन्ने के टुकड़ों को मिट्टी से ढकने के पहले करना है। इसको डालने के बाद कोई भी रसायन टुकड़ों के ऊपर नहीं डालना है नहीं तो ट्राईकोडर्मा मर जायेगा।
- अब नालियों में रखे गन्ने के टुकड़ों को 2-3 सेंटीमीटर मिट्टी डालकर ढक दें।

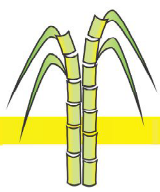

- अगर मिट्टी में नमी कम हो तो हल्की सिंचाई कर दें।
- सिंचाई करने के समय यह ध्यान रखना है कि नहर या नलकूप के कुलावे से आ रहे पूरे पानी को एक नाली में नहीं लगाना है। पानी को 3 से 4 नालियों में लगाना है नहीं तो गन्ने के टुकड़े नली के अंत में जाकर इकठ्ठे हो जाएंगे।
- जब किसी नाली में पानी उसकी तीन चौथाई दूरी तक पहुँच जाएं तो उस नाली में पानी बंद कर देना चाहिए।

अन्तःकर्षण क्रियाएँ

- खेत में उचित ओट आने पर हल्की गुड़ाई कर दें जिससे गन्ने का जमाव अच्छा होता है।
- चार पत्ती की अवस्था आ जाने पर (शरदकालीन गन्ने में बुवाई के 50-55 दिनों बाद तथा बसंतकालीन गन्ने में बुवाई के 40-45 दिनों बाद) गन्ने की सिंचाई करें।
- पहली सिंचाई के बाद उचित ओट आने पर 100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से गन्ने की पंक्तियों के किनारे डालें और गुड़ाई कर मिट्टी में मिला दें।
- प्रत्येक नाली में 5-7 सेंटीमीटर मिट्टी भर दें।
- खरपतवारों की निकाई व खेत की गुड़ाई आवश्यकतानुसार करें।
- जून के तृतीय सप्ताह मे 100 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से गन्ने की पंक्तियों के किनारे डालें और मृदा में गुड़ाई कर मिला दें।
- बसंतकालीन गन्ने में चोटी बेधक, तना बेधक तथा अन्य बेधकों से बचाव के लिए अप्रैल के तीसरे या चौथे सप्ताह में *कोराजन* की 325 मि.ली. मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ने की जड़ों के पास स्प्रेयर मशीन के नोजल को ढीला करके पानी की हलकी धार के रूप में डालें या जून के अन्तिम सप्ताह में चोटी बेधक के नियंत्रण हेतु 33 कि.ग्रा. *फ्यूराडान* 3 जी की मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से गन्ने की पंक्तियों के किनारे-किनारे सिंचाई करके यूरिया डालने के तीन दिन बाद डालें।
- बीमारियों व कीटों की रोकथाम के लिए आवश्यकतानुसार फसल सुरक्षा कार्यक्रम अपनाएं।
- मानसून शुरू होने से पहले गन्ने में मिट्टी चढ़ाएं।
- अगस्त के प्रथम या दूसरे पखवाड़े में गन्ने की निचली सूखी पत्तियों से प्रत्येक थान की बँधाई करें।
- निचली सूखी पत्तियों को निकाल दें।
- सितम्बर माह में आमने-सामने की पंक्तियों के गन्ना थानों की आपस में कैंचीनुमा बंधाई करें।
- पेड़ी की अच्छी उपज लेने के लिए गन्ने की कटाई भूमि की सतह से करें।

इस विधि के लाभ

- **अधिक उपज** : सामान्य विधि की अपेक्षा इस विधि द्वारा 30-40 टन अधिक उपज प्राप्त होती है।
- **सिंचाई जल बचत** : सिर्फ नालियों में ही सिंचाई करने के कारण 30-40 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत होती है।
- **निवेश उपयोग क्षमता में वृद्धि** : जल उपयोग क्षमता में 30-40 प्रतिशत तथा पोषक तत्व उपयोग क्षमता में 30-35 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।
- **अधिक आय** : अधिक उपज एवं अधिक चीनी परता प्राप्त होने की वजह से किसानों एवं चीनी मिलों की आय में भी वृद्धि होती है।
- **पेड़ी फसल** : इस विधि से बोए गये गन्ने की कटाई के बाद 3-4 पेड़ी आसानी से ली जा सकती हैं।
- **गन्ना गिरने में कमी** : गहराई में गन्ना बोने के कारण गन्ना गिरने व थानों के उखड़ने की समस्या नहीं आती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUuk% pukfr;k IL; rduhd

vkfnR; idk'k f}onh] I/khj dekj 'kDy] on idk'k flg] eukt dekj f=ikBh] Itho dekj] d-d- flg]
,I-vkj- flg ,o fou; dekj flg
Hkkd'vui&Hkkjrh; xUuk vuI/kku ILFkku] y[kuÅ

विश्व के 27 देशों में गन्ने की व्यवसायिक रूप में खेती की जाती है। विश्व के इन 27 देशों द्वारा 270 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में गन्ने की खेती होती है। लगभग 63 प्रतिशत गन्ने का उत्पादन ब्राजील, भारत, चीन जैसे देशों में होता है। विश्व पटल के अग्रिम चीनी निर्यातक देशों जैसे ब्राजील, थाइलैंड, आस्ट्रेलिया व यूरोपीय देशों में शामिल है। 3620 लाख टन गन्ना प्रतिवर्ष उत्पादन करके भारत विश्व का दूसरा सर्वाधिक चीनी उत्पादन करने वाला देश है, जो वश्विक चीनी उत्पादन में 15 प्रतिशत का योगदान करता है। भारत में बोयी गई फसल के कुल कृषि क्षेत्र का 2.57 प्रतिशत (5 मिलियन हे.) गन्ना फसल के अन्तर्गत आता है, जो लगभग 10 प्रतिशत कृषि सकल घरेलू में योगदान करता है। इस गन्ना क्षेत्र से 6 मिलियन गन्ना उत्पादक लाभान्वित होते हैं। भारतीय कृषि परिदृश्य में गन्ना एक महत्वपूर्ण योगदान करता है। गन्ना भारत की कृषि अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है व चीनी उद्योग के साथ-साथ अन्य उद्योगों के लिए जैसे अल्कोहल, अन्य रसायन, पेपर व पशुचारा भी उपलब्ध कराता है। वर्तमान में देश में 762 विभिन्न क्षमता वाले गन्ना मिले हैं। अनुमानतः गन्ना मिलों से प्रति 100 टन गन्ने से 10 टन चीनी, 30 (27-33) टन खोई, 4.5 (4.0-5.4) टन शीरा, 3.5-3.9 टन *फिल्टर/प्रेसमड*, 0.3 टन फर्नेस ऐश, 1200 (1125-1300) लीटर अल्कोहल एवं 10,000 अतिरिक्त बिजली (ऊर्जा) प्राप्त होती है। इस कारण गन्ने के बहुद्देशीय प्रयोग के कारण, गन्ना उत्पादन की मांग देश में दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। गन्ने का बढ़ता हुआ उत्पादन एवं उत्पादकता पूरे चीनी उद्योग में एक महत्वपूर्ण, आवश्यक एवं अनुकूल प्रभाव डालते हैं।

क्षेत्रफल की दृष्टि से गन्ने के उत्पादक क्षेत्रों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है: उपोष्ण एवं कटिबंधीय। कटिबंधीय क्षेत्रों के अंतर्गत् मुख्य रूप से महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, गुजरात, छत्तीसगढ़, उड़ीसा एवं केरल राज्य आते हैं, जो भारत के कुल गन्ना उत्पादन में 42.9 प्रतिशत भागीदारी रखते हैं। उपोष्ण क्षेत्रों का गन्ने में 57.1 प्रतिशत का योगदान है। मुख्य रूप से इनमें उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, झारखंड, असम एवं उत्तर पूर्वी के राज्य आते हैं। राज्यों में उत्पादन के दृष्टिकोण से गन्ने की खेती के लिए उत्तर प्रदेश एक प्रमुख गन्ना उत्पादक राज्य है, जो 22 लाख हे. क्षेत्रफल गन्ने की खेती के लिए अच्छादित करता है।

उपोष्ण क्षेत्रों हेतु गन्ना की प्रमुख किस्में

गन्ना उपज में वृद्धि का मूल आधार उन्नत किस्मों के विकास में निहित है। अब तक विभिन्न जलवायु क्षेत्रों के लिए उपयुक्त 113 उन्नत गन्ना किस्में विससित की गयी हैं जिसमें 53 गन्ना किस्मों को विभिन्न क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय किस्म विमोचन समिति द्वारा संस्तुत किया गया है जबकि कुछ गन्ना किस्में राज्य स्तर पर भी संस्तुत की गयी हैं।

भारत में गन्ना उत्पादक क्षेत्रों को मुख्यतः चार परिक्षेत्रों में विभाजित किया गया है। जिससे से दो परिक्षेत्र, उत्तर पश्चिम परिक्षेत्र, व उत्तर मध्य एवं उत्तर पूर्वी परिक्षेत्र, उपोष्ण जलवायु क्षेत्र में आते हैं तथा अन्य दो प्रायद्वीप परिक्षेत्र एवं पूर्वी तटीय परिक्षेत्र उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र में आते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर भारत में गन्ना किस्मों का मूल्यांकन एवं उनका विमोचन इन्ही चारों परिक्षेत्र के आधार पर अलग-अलग किया जाता है। उपोष्ण क्षेत्र में आने वाले दोनों उत्तर पश्चिम और उत्तर मध्य एवं उत्तर पूर्वी परिक्षेत्रों हेतु संस्तुत गन्ना किस्में सारणी 1 में दी गयी है।

गन्ने की किस्मों को मुख्यतः दो समूहों में बांटा जाता है। एक-अगेती दो-मध्य देर। अगेती किस्में 10 महीने तथा मध्य देर श्रेणी की किस्में 12 महीने पर परिपक्व होती हैं। गन्ने में परिपक्वता रस में शर्करा की मात्रा (16 प्रतिशत) के आधार पर निर्धारित की जाती है।

उत्पादकता पर जलवायु कीट एवं बीमारियों का प्रभाव

उपोष्ण जलवायु क्षेत्रों में गन्ने के लिए कम या अधिक दोनों ही तरह की जलवायु परिस्थितियां पायी जाती हैं। इन क्षेत्रों में सिंचित दशा में उपयुक्त एवं बेहतर सस्य क्रियाओं से उत्पादन किया जाता है, परिणामस्वरूप अच्छा उत्पादन प्राप्त होता है। उपोष्ण जलवायु क्षेत्र, अधिक गन्ना व चीनी उत्पादन के लिए अनुकूल होता है, क्योंकि इन क्षेत्रों में बढ़वार के लिए अधिक समय मिल जाता है। ये क्षेत्र लगभग 58 प्रतिशत कुल गन्ने के उत्पादन में भागीदारी रखता है। इन क्षेत्रों में गन्ने की औसत उत्पादकता

सारणी 1: विभिन्न जलवायु परिक्षेत्रों हेतु संस्तुत की गई उन्नत किस्में

ifj{k=	vxrh	iNrh
प्रायद्वीपीय	को 85004, को 95004, को 0403, कोशंक 05103	को 86032, को 87025, को 87044, को 8371, कोएम 7714, कोएम 88212, को 91010, को 99004
पूर्वी तटीय परिक्षेत्र	कोशा 01061, कोउ 03151	को 86249, को 06030
उत्तर पश्चिमी परिक्षेत्र	कोह 92201, कोशा 95255, को 98014, कोशा 96268, को 0118, को 0238, कोपीके 05191, को 05009	कोशा 91230, कोपंत 90223, कोशा 94270, कोह 119, कोपंत 97222, कोजे 20193 कोशा 96275, को 0124, कोह 128, को 05011, कोलख 11208, को 06034 को 09022, कोलख 09204
उत्तरी मध्य एवं उत्तर पूर्वी परिक्षेत्र	को 87263, को 87268, को 98029, कोसे 95422, कोसे 96234, कोलख 94184, कोसे 01421, को 0232	बीओ 128, कोसे 92423, को 0233, कोयू 06436

काफी अच्छी होती है। समुद्र तटीय क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाले आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु में अधिक गन्ने का क्षेत्रफल है जिनकी उत्पादकता अधिक व अच्छी है। लाल सड़न जैसी गंभीर बीमारी, बाढ़ग्रस्त एवं जलभराव वाले क्षेत्रों के लिए प्रमुख समस्या है। गन्ने की शुरूवाती बढ़वार के समय मार्च-जून तक पानी या नमी की कमी भी एक प्रमुख समस्या है, जो उत्पादन पर काफी विपरीत प्रभाव डालती है। प्रायद्वीप क्षेत्र में कडुँआ एक प्रमुख समस्या है, जो गन्ना उत्पादन पर काफी प्रभाव डालती है। समुद्र तटीय क्षेत्रों में *आफ लेट* एवं पीली पत्ती रोग एक प्रमुख समस्या है। इन क्षेत्रों में *अर्ली शूट बोरर* (विशेषकर देर से बोई गयी फसल में), व ऊनी माहू भी गंभीर समस्या है।

भूमि की तैयारी एवं मृदा का चुनाव

गन्ने की फसल का पूरा जीवन चक्र 12-15 महीने का होता है। इससे काफी मात्रा में फसल अवशेष व जड़ अवशेष प्राप्त होता है तथा यदि हम इसका उचित प्रबंधन करें तो परिणामस्वरूप मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि होती है। सघन कृषि एवं भारी मशीनीकरण से एक *हार्ड पैन* का निर्माण होता है, जिससे मृदा की जलधारण क्षमता, मृदा में वायु का संचार, खराब जल निवारण की समस्या होती है। पारम्परिक जुताई, *सब स्वायलर* का प्रयोग एवं गहरी जुताई करने से (3-4 वर्ष के अंतराल पर) मृदा की अनूकूल दशा में सुधार होता है। एक मीटर की दूरी पर 25-30 से.मी. गहराई वाले *चिजल प्लाऊ* से विपरीत दिशा में जुताई करने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं। मृदा जैविक कार्बन की प्रचुर मात्रा मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि करती है। मृदा जैविक कार्बन, मृदा की अच्छी भौतिक दशा के लिए अति आवश्यक है। गन्ने की अच्छी उत्पादन प्रणाली हेतु 0.65 प्रतिशत या इससे अधिक मृदा जैविक कार्बन का होना आवश्यक है, परन्तु इन क्षेत्रों में इसकी मात्रा 0.5 प्रतिशत से भी कम हो गयी है परिणमस्वरूप गन्ना उत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। मृदा में जैव खाद जैसे- गोबर की सड़ी खाद, गंधक युक्त (सल्फीटेशन) *प्रेस मड, वर्मी कम्पोस्ट* इत्यादि का लगातार प्रयोग 10 से 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से करने से मृदा की कुल घनत्व में कमी, जिससे जल का मृदा के अन्दर प्रवेश सुचारू रूप से होता है। साथ ही पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि व मृदा में पाये जाने वाले लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता में वृद्धि होती है, जो गन्ना उत्पादन के लिए अच्छे संकेत हैं। यह प्रयोग भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के विगत कई वर्षों के प्रयोगों में सिद्ध हुआ है, जो बहु पेड़ी प्रणाली में प्राप्त हुआ है। गन्ने की खेती में संसाधन संरक्षण तकनीक मुख्यतः कम भूपरिष्करण फसल अवशेष *(ट्रेश)* का वैज्ञानिक प्रबंधन एवं बिछावन *(मल्चिंग)* इत्यादि का प्रयोग लाभकारी है। गन्ना-पेड़ी प्रणाली में अधिक संख्या में पेड़ी लेने हेतु कम कर्षण क्रियाएं भी अधिक प्रभावी एवं लाभदायक है। एक हेक्टेयर गन्ने की अच्छी फसल से प्रत्येक वर्ष 10-15 टन/हे. सूखी पत्ती प्राप्त होती है जिसके समुचित प्रबंधन से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में बढ़ोत्तरी होती है।

बीज एवं बुआई की विधि

चाहे किसी भी प्रकार के मौसम में हम गन्ने की खेती करना चाहते हैं, बीज की गुणवत्ता एवं बुआई की विधि पर्याप्त संख्या में पौधों की संख्या निर्धारित करती है, जिसका उत्पादन पर बहुत ही महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। गन्ने की खेती में बीज की लागत काफी अधिक होती है एवं बीज की गुणवत्ता इसके उत्पादन में अहम् भूमिका अदा करती है। उपोष्ण जलवायु क्षेत्र में 5-6 टन/हे. की दर से बीज की मात्रा पर्याप्त होती है। अधिक मात्रा में बीज दर होने के कारण एवं उसकी ढुलाई खर्च अधिक होने के कारण गन्ना उत्पादक प्रत्येक वर्ष गन्ना अनुसंधान संस्थान या किसी अन्य शोध केंद्र या प्रमाणित बीज विक्रय केंद्र से बीज प्राप्त नहीं कर पाते वरन अपने ही प्रक्षेत्र पर उगाए गन्ने को बीज के रूप में प्रयोग करते हैं, परन्तु यदि उक्त प्रमाणित संस्थाओं से गुणवत्तायुक्त बीज का प्रयोग गन्ने की खेती के लिए किया जाय

तो उत्तम होता है। 8-10 माह की गन्ने की फसल का बीज जो कीट एवं बीमारियों जैसे-लाल सड़न, कडुँवा, सूखा रोग से संक्रमित न हो, अच्छे उत्पादन के लिए आवश्यक होता है। इससे समय से अंकुरण होता है और साथ ही साथ पर्याप्त मात्रा में पौधे प्राप्त होते हैं। गन्ने के दो या तीन आँख वाले टुकड़ों की कूँड़ या नाली विधि से बुआई की जाती है। बुआई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी मौसम एवं जलवायु पर निर्भर करती है। गन्ने के बीज के टुकड़े की 50 पी.पी. एवं सांद्रता वाली इथ्रेल नामक हार्मोन को घोल में पूरी रात विलयन में डुबोकर बीज की *प्राईमिंग* करने पर अंकुरण एवं बढ़वार में अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं। मृदा के प्रकार एवं जलवायु का बीजांकुरण में अहम महत्व देखा गया है। गन्ने के उचित बीजांकुरण के लिए 20-30 डिग्री सेल्सियस तापक्रम उत्तम होता है। अधिक ठंड (<10 डिग्री सेल्सियस) एवं अधिक तापक्रम (>40 डिग्री सेल्सियस) गन्ना बीजांकुरण के लिए अनुपयुक्त होता है। उपोष्ण जलवायु में नियत तापक्रम के आधार पर अपने देश में गन्ने की बुआई के लिए निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत किया गया हैः

शरदकालीन बुआई

अक्टूबर-नवम्बर माह में बोए जाने वाले गन्ने को हम शरदकालीन गन्ना कहते हैं। सामान्यतः खरीफ फसल की कटाई के बाद शरदकालीन गन्ने की बुआई की जाती है। शरदकालीन गन्ना अपेक्षाकृत अधिक दिन (15 महीने की फसल) होती है। इस कारण शरद्कालीन गन्ने का अंकुरण एवं बढ़वार अच्छी होती है। परिणामस्वरूप अपेक्षाकृत बसंतकालीन एवं गर्मी की फसल से इसकी पैदावार अधिक होती है। यद्यपि शरद्कालीन गन्ने की बुआई करने के लिए किसान को एक रबी की फसल से वंचित रहना पड़ता है। इस हानि से बचने के लिए, अल्प अवधि वाली रबी की फसलों को गन्ने की दो कतारों के बीच में अंर्तवर्ती फसल के रूप में बोने से एक अतिरिक्त फसल ली जा सकती है, जिससे रबी की फसल से वंचित होने से भी बचा जा सकता है और अतिरिक्त आय भी प्राप्त किया जा सकता है। अर्न्तवर्ती फसल के रूप में गेहूँ, सब्जी, आलू, दलहन व तिलहनी फसलें आसानी से ली जा सकती हैं।

बसंतकालीन बुआई

बसंतकालीन गन्ना भारत के उपोष्ण जलवायु क्षेत्रों में बहुत ही लोकप्रिय एवं प्रचलित फसल प्रणाली है। इस गन्ने की बुआई कम अवधि वाली रबी फसलों जैसे-सरसों, तोरिया एवं आलू इत्यादि की कटाई के तुरन्त बाद की जाती है। इसकी बुआई किसान फरवरी-मार्च के महीने में करते हैं। वैसे गन्ने के बीजाकुंरण अच्छा हो, इसके लिए 15 फरवरी से 30 मार्च के बीच का समय बुआई के लिए सबसे उपयुक्त होता है।

गर्मी की मौसम या देर से बुआई

उपोष्ण क्षेत्रों में इस श्रेणी के अंतर्गत किसान गन्ने की बुआई गेहूँ की कटाई के बाद करते हैं। इस मौसम में अत्याधिक गर्मी होने के कारण एवं कल्ले निकलने के लिए कम समय मिलने के कारण गन्ने की फसल को नुकसान होता है। हरियाणा, पंजाब व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसान गेहूँ की फसल को अपनी फसल प्रणाली से नहीं हटाते जिस कारण गन्ने की उत्पादन एवं खराब गुणवत्ता के साथ संतोष कर लेते हैं।

उपोष्ण जलवायु वाले क्षेत्रों में निम्नलिखित बुआई की विधियाँ अपनानी चाहिए :

फ्लैट (समतल) बुआई पद्धति

इस विधि के अंतर्गत सबसे पहले अच्छी तरह कर्षण क्रियाओं को अपनाते हुए एक या दो गहरी जुताई करते हैं। इसके बाद *हैरो* या *कल्टीवेटर* से अच्छी प्रकार जुताई करके पाटा लगा देते हैं। 10-15 से.मी. गहरी व 90 से.मी. दूरी पर शरदकालीन गन्ने हेतु व 75 से.मी. की दूरी पर बसन्तकालीन गन्ने की बुआई हेतु नालियाँ बना लेते हैं। तत्पश्चात गेंड़ी से गेंड़ी या आँख से आँख जो तीन आँखों वाली हों, नालियों में ठीक प्रकार से डाल देते हैं और अच्छी तरह से पाटा लगा देते हैं। जिससे नालियाँ ठीक प्रकार से बराबर ढ़क जाएं। ध्यान देने की बात हैं कि कोई भी नाली में खुला स्थान न छूटने पाये, इससे मृदा में नमी संरक्षित रहती है और अंकुरण और फसल की बढ़वार में अच्छे परिणाम मिलते हैं। यह विधि उत्तरी भारत में बहुत ही प्रचलित है। *शुगरकेन कटर-प्लान्टर,* जो भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित किया गया है, की सहायता से यदि हम बुआई करते हैं तो श्रम व समय के साथ-साथ ही लागत में बचत की जा सकती है। इस विधि से मात्र 5 मजदूरों द्वारा ही एक हेक्टेयर की बुआई की जा सकती है जबकि परम्परागत *फ्लेट* बुआई में जो किसान बहुतायत से प्रयोग कर रहे हैं उसमें 30-40 मजदूर प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

रिंग पिट (गोल गड्ढा) बुआई पद्धति

इस *रिंग पिट* बुआई पद्धति को *मदर शूट टेक्नॉलाजी* या *नो टिलर टेक्नोलाजी* भी कहा जाता है। इस विधि में एक गोलाकार 30 से.मी. गहरी व 75 से.मी. व्यास का गढ्ढा, जिसकी गोलाकार गढ्ढे के व्यास के मुख्य बिन्दु से दूसरे गढ्ढे के व्यास के मुख्य बिन्दु की दूरी 105 से.मी. हो, बना लेते हैं। इस प्रकार लगभग 9,000 गोलाकार गढ्ढा प्रति हेक्टेयर तैयार होते हैं। यह विधि सूखाग्रस्त क्षेत्रों, ऊबड़-खाबड़ जमीन, लवणीय एवं क्षारीय मृदा,

बहुपेड़ी फसल, हल्की मृदा, अधिक उत्पादन देने वाली लम्बी ऊँचाई की मोटी किस्मों के लिए यह तकनीक सबसे उपयुक्त है। इस विधि में औसत उत्पादन लगभग 125 टन/हे. एवं लागत लाभ अनुपात 1.83 प्राप्त होता है।

ट्रेंच (नाली) विधि

उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में यह विधि बहुत तेजी से प्रचलित हो रही है। इस विधि में लागत उपयोग क्षमता काफी अच्छी होती हैं व अन्तर्रासस्यन के लिए यह विधि उपयुक्त है। इस विधि में 30 से.मी. गहरी व 30 से.मी. चौड़ी नाली बना ली जाती है। एक नाली के केंद्र बिन्दु से दूसरी नाली के केंद्र बिंदु की दूरी 120 से.मी. होनी चाहिए। इसमें गन्ने की गेड़ी को नाली की दीवार के सहारे (30:90 से.मी.) पर बुआई कर देते हैं। यह विधि मशीनीकृत प्रक्षेत्र के लिए सर्वोत्तम है, जिससे जल उपयोग क्षमता बढ़ जाती है साथ ही कम श्रमिकों की भी आवश्यकता पड़ती है, जिससे लागतः लाभ अनुपात 2.15 होता है। इस विधि से औसतन 110 टन/हे. उपज प्राप्त की जा सकती है।

जल प्रबंधन

गन्ने की फसल की जल मांग अन्य फसलों की तुलना में अधिक होती है। उपोष्ण क्षेत्र में गन्ने की वार्षिक जल मांग 1,400-1,500 मि.मी. होती है। वैज्ञानिक विधि व समय से सिंचाई करके गन्ने की सिंचाई उपभोग क्षमता 30-45 प्रतिशत तक बढ़ाई जा सकती है। कुछ ऐसे वैकल्पिक सिंचाई व जल प्रबंधन की विधियाँ हैं, जैसे- *स्किप फरो* विधि, टपक सिंचाई पद्धति एवं जल माँग की क्रांतिक अवस्थाओं पर सिचाई करना एवं सूखी पत्ती की *मल्चिंग* इत्यादि अपनाकर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है एवं जल की बचत भी की जा सकती है।

स्किप फरो विधि

इस विधि में प्रत्येक एकान्तरित अंतर पंक्ति को *फ्लेट* विधि से बोई गयी फसल में सिंचाई की जाती है। इसके लिए, बीजांकुरण के बाद 45 से.मी. चौड़ी व 15 से.मी. गहरी कूँड़ एकान्तरित रूप से बनाई जाती है। इस प्रकार बनाई गयी कूँड़ में ही सिंचाई की जाती है, न कि पूरे खेत में बुआई हेतु बनाई गयी कूँड़ में। इस विधि में *फ्लड* रूप से सिंचाई की गयी फसल की तुलना में कम ही पानी में पूरी सिंचाई हो जाती है व सिंचाई दक्षता बढ़ने के साथ-साथ पानी की बचत, श्रम की बचत व लागत में कमी आती है। इस प्रकार 35-40 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत, 60-65 प्रतिशत जल उपयोग दक्षता में वृद्धि होती है। लाभ:लागत अनुपात 1.95 तक प्राप्त होती है।

टपक सिंचाई

गन्ना चूंकि दूर-दूर बोई जाने वाली फसल है, इसी कारण टपक सिंचाई पद्धति, गन्ने के अधिक उत्पादन के लिए अधिक उपयुक्त है। इससे जल जैसे महत्वपूर्ण निवेश की बचत होती है और अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। सतही टपक सिंचाई हेतु, *लेटेरल प्लास्टिक* की पाइप गन्ने की दो लाइनों के बीच में बिछा दी जाती है जिसमें छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। उचित दबाव पर जब पानी दिया जाता है, तो इन पाईप के माध्यम से बूंद-बूंद कर पौधों की जड़ के पास सिंचाई जल पहुँचता है। इस पाईप के माध्यम से बराबर रूप से सिंचाई जल के साथ उर्वरकों के घोल को भी प्रयोग किया जा सकता है, जिसे *'फर्टिगेशन'* कहते हैं। इस विधि से 40-50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है और तत्व (उर्वरक) उपयोग क्षमता में *फ्लड* सिंचाई की तुलना में 30 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इससे लाभः लागत अनुपात 2.17 तक प्राप्त होती है। देश की कई राज्य सरकारें इस विधि को बढ़ावा देने के लिए भारी-भरकम अनुदान देती हैं। एक बार इस विधि को लगा देने पर मुख्य फसल व दो पेड़ी की फसल (यानी तीन वर्षों तक) आसानी से ली जा सकती है, जो लागतःलाभ दृष्टि से उपयुक्त होती है।

फसल की क्रांतिक बढ़वार की अवस्था पर सिंचाई

जिन गन्ना क्षेत्रों में जल की सम्भावनाएं सीमित हैं, वहां पर फसल बढ़वार के लिए सिंचाई जल का क्रांतिक अवस्थाओं पर ही उचित सिंचाई विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए। गन्ने में सिंचाई जल के आधार पर क्रांतिक अवस्थाएं मुख्यतः जो निर्धारित की गयी हैं, वे हैं; अंकुरण के समय (45 दिन बाद), कल्ले निकलने की प्रथम अवस्था (बुआई के 65 दिन बाद), कल्ले निकलने की द्वितीय अवस्था (बुआई के 85 दिन बाद) एवं कल्ले निकलने की तीसरी अवस्था (बुआई के 105 दिन बाद)। इस प्रकार सिंचाई जल की उपलब्धता होने पर उपरोक्तानुसार ही सिंचाई प्रबंधन करना चाहिए।

सूखी पत्तियों का बिछावन

गन्ने की फसल सबसे अधिक मात्रा में सूखी पत्ती उत्पादित करती है। ये पत्तियां किसानों को तो एक समस्या के रूप में दिखाई देती हैं और वे इसकी महत्ता को समझे बिना ही खेत में जला देते हैं। ऐसा कदापि नहीं करना चाहिए। ये पत्तियां कार्बनिक पदार्थ व पोषक तत्वों के लिए एक अच्छा स्रोत का काम करती हैं। इन पत्तियों को एक *मल्च* के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए, जो खरपतवारों को उगने से रोकती हैं, साथ ही साथ मृदा में जल संरक्षण को बढ़ावा देने के साथ पोषक तत्वों का भण्डार भी होती हैं। सूखी पत्ती (10 टन प्रति हे.) को पूरे खेत में बराबर

तरह से या एक पंक्ति छोड़कर एकान्तरित रूप में 7-10 से.मी. मोटाई की तह में मृदा सतह पर समान रूप से फैला देनी चाहिए जिससे उपरोक्तानुसार लाभ प्राप्त हो सके। इस प्रकार ऐसा करने से 40-45 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत हो जाती है और लाभ:लागत अनुपात 2-4 तक प्राप्त होता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

गन्ने की फसल, मृदा से अधिक मात्रा में पोषक तत्वों का दोहन करती है। 100 टन प्रति हे. गन्ने का उत्पादन प्राप्त करने में 208 कि.ग्रा. नत्रजन, 53 कि.ग्रा. फास्फोरस, 280 कि.ग्रा. पोटेशियम, 3.4 कि.ग्रा. लौह तत्व, 1.2 कि.ग्रा. मैगनीज, 0.6 कि. ग्रा. जस्ता, 0.2 कि.ग्रा. ताँबा एवं 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हे. खर्च होता है। भारत में उत्तर पूर्वी क्षेत्र को छोड़कर, लगभग सभी मृदाओं में नत्रजन की कमी देखी गयी है। इसके अतिरिक्त, 50 प्रतिशत मृदा में फास्फोरस एवं 20 प्रतिशत मृदाओं में पोटैशियम की कमी होती है। अतः क्षेत्र विशेष के लिए संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन से गन्ने की उपज को बढ़ाया जा सकता है। उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उत्पादकता में स्थायित्व रखते हुए उत्पाद गुणवत्ता को भी बढ़ाने में मदद मिलती है। उचित पोषक तत्व प्रबंधन से गन्ने की वृद्धि, गन्ने के रस की गुणवत्ता एवं चीनी की मात्रा के गन्ने में संचयन में मदद मिलती है। गन्ने में कल्ले निकलते समय पोषक तत्व का उपयोग एवं पूर्ति बहुत ही अहमियत रखती है, जिससे पेराई योग्य गन्नों का उत्पादन एवं उसकी गुणवत्ता निर्धारित होती है। अधिकतम गन्ना उत्पादन के लिए 1.95-2.0 प्रतिशत नत्रजन की सांद्रता, कल्ले निकलते समय नियत की गयी है। नत्रजन प्रबंधन, पोषक तत्व प्रबंधन के अनतर्गत अधिक गन्ना उत्पादन हेतु बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। नत्रजन, गन्ने में पेराई योग्य गन्नों की संख्या एवं गन्ने का भार दोनों ही बढ़ता है। उपोष्ण क्षेत्र में विभिन्न प्रयोगों के आधार पर इसकी मात्रा 120 से 200 कि.ग्रा. प्रति हे. निर्धारित की गयी है। सघन कृषि प्रणाली एवं खराब मृदा स्वास्थ के प्रबंधन को ध्यान में रखते हुए औसतन 150 कि.ग्रा. नत्रजन/हे. की दर गन्ने की बावक फसल एवं 225 कि.ग्रा. प्रति हे. की दर से पेड़ी फसल के लिए प्रयोग किया जाता है। नत्रजन प्रबंधन में इस बात का खास ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि कल्ले निकलते समय नत्रजन की कमी नहीं होनी चाहिए। उत्तर प्रदेश एवं बिहार में नत्रजन की पूरी मात्रा कूँड़ में ही गन्ना गेड़ी के नीचे दे देते हैं या 2-3 बार में बुआई के बाद 90 दिन के अन्दर दे देते हैं। जबकि पंजाब व हरियाणा में 50 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा को बुआई के समय ही कूँड़ में गन्ना गेड़ी के नीचे व शेष आधी मात्रा अप्रैल से जून तक पौधों को या लाइन में दे देनी चाहिए। शरदकालीन गन्ना बुआई के अन्तर्गत उत्तरी भारत में 1/3 नत्रजन की मात्रा बुआई के समय व शेष 2/3 मात्रा बराबर-बराबर भाग में मार्च, अप्रैल व मई में दे देनी चाहिए। वर्षा आधारित क्षेत्रों में 75 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हे. की दर से देनी चाहिए, जिससे हमें वांछित उपज प्राप्त हो जाती है।

पोटेशियम का महत्व गन्ने में प्रोटीन एवं शर्करा के संश्लेषण एवं स्थानान्तरण में सहायक होता है। साथ ही साथ शर्करा के संचयन में भी मददगार होता है। एक टन गन्ना पैदा करने में मृदा से 3.4 कि.ग्रा. पोटैशियम का दोहन होता है। यद्यपि भारतीय मृदा सामान्यतः पोटैशियम की दृष्टिकोण से परिपूर्ण है परन्तु राज्य व क्षेत्रानुसार इसकी मृदा में मात्रा एवं उपलब्धता परिवर्तित होती रहती है। इसलिए मृदा जाँच के आधार पर ही इसकी संस्तुति की जानी चाहिए। चूंकि पोटैशियम का महत्व पौधे व जल के सम्बंध में बहुत ही अधिक है इसलिए इसकी खड़ी फसल में पर्णीय प्रयोग की संस्तुति फसल की बढ़वार के अंतिम चरण में भी संस्तुत की जाती है, जिससे सूखे की स्थिति में फसल को पानी की कमी के कारण होने वाले नुकसान से बचाया जा सके। पोटैशियम की संस्तुति क्षेत्रवार क्रमशः उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी पूर्वी क्षेत्र में क्रमशः 40-90, 75-190, 120-150 एवं 60-120 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से की जाती है। सल्फेट आयन पोटैशियम, क्लोराइड आयन युक्त पोटैशियम से अच्छा होता है क्योंकि पोटैशियम सल्फेट का प्रभाव, कल्ले निकलने में, *प्राइमरी इन्डेक्स,* शर्करा का संचयन एवं गन्ने के उत्पादन पर अपेक्षाकृत अच्छा प्रभाव पड़ता है। पोटैशियम का प्रयोग अपेक्षाकृत बार-बार खड़ी फसल में करने से एक ही बार में बुआई के समय करना अच्छा होता है। पोटैशियम की अधिक मात्रा के प्रयोग से कोशिकाओं में पानी की मात्रा बनी रहती है जो सूखे से पड़ने वाले विपरीत प्रभाव को सहन करने में सहायक होती है। साथ ही साथ रस की मात्रा में भी वृद्धि होती है। परन्तु ध्यान देने वाली बात यह है कि पोटैशियम की अत्याधिक एवं असंतुलित मात्रा भी गन्ने के रस से चीनी बनने में बाधक होती है और चीनी की मात्रा शीरे में चली जाती है जिससे कम चीनी प्राप्त होती है।

द्वितीय पोषक तत्वों में गंधक तत्व, नाइट्रोजन के *नाइट्रेट रिडक्टेजेज एक्टीविटी* को बढ़ाता है, जिससे नाइट्रोजन की उपयोग क्षमता बढ़ती है। अतः गंधक की कमी वाली मृदा में 30 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना लाभदायक सिद्ध हुआ है। मैंगनीज की कमी वाले क्षेत्रों में पत्तियों में पीलापन की समस्या देखने को मिलती है। प्रयोगों में पाया गया है कि मध्य उत्तर प्रदेश की मृदा में मैंगनीज की कमी पायी गयी है। सघन कृषि के साथ-साथ अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे- जस्ता, लौह तत्व व ताँबा की भी कमी देखी भी जा रही है। सूक्ष्म पोषक तत्वों का पर्णीय छिड़काव, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब में लाभकारी सिद्ध हुआ

है। बिहार में, जस्ता, मैंगनीज व लौह तत्व (प्रत्येक तत्व की) 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। साथ ही साथ कैल्केरियस मृदा में गोबर की सड़ी खाद के साथ 5 कि.ग्रा. बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग लाभकारी होता है।

जैविक खाद एवं उर्वरक के बीच एक सही सम्बंध स्थापित करने में जैव उर्वरक का महत्वपूर्ण स्थान है। गन्ने में *ग्रेडेड नाइट्रोजन* के प्रयोग के अन्तर्गत *एजोटोबैक्टर* के साथ-साथ प्रयोग करने से 9.3 टन प्रति हेक्टेयर एवं *एजोस्पाइरिलम* के साथ-साथ प्रयोग करने से 1.34 टन प्रति हेक्टेयर तक गन्ने के उत्पादन में वृद्धि देखी गयी है। एक नये सूक्ष्म जीव *ग्लूकोनएसीटोबैक्टर डायजोट्राफिक्स* का प्रयोग गन्ने में उत्कृष्ट नत्रजन स्थिरीकरण करता है। यह *एन्डोफाइट बैक्टीरियम,* जो गन्ने के जड़ क्षेत्र, स्टाक, पत्ती एवं सूखी पत्तियों में जाया जाता है, एक अच्छी मात्रा में नाइट्रोजन पौधे की प्राप्त कराता है। चीनी मिलों के अन्य उत्पाद, जैसे - *प्रेस मड* एवं *डिस्टिलरी* से निकलने वाले पानी, गन्ने में अतिरिक्त पोषण प्रदान करता है। *प्रेस मड,* जिसमें प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व जैसे- नत्रजन (1.2 प्रतिशत), फास्फोरस (4 प्रतिशत), पोटैशियम (0.5-1.5 प्रतिशत) होता है, मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि करता है। यह विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उपयोग को बढ़ाता है, परिणामस्वरूप गन्ने का उत्पादन एवं रस की गुणवत्ता बढ़ती है। बिहार में सल्फीटेशन युक्त *प्रेसमड* खली के अकार्बनिक उर्वरकों के साथ प्रयोग करने से वांछित उपज प्राप्त होती पायी गयी है, बल्कि गोबर एवं सूखी पत्ती तैयार कम्पोस्ट की खाद प्रयोग करने से भी तुलनात्मक उपरोक्त सल्फीटेशन युक्त *प्रेसमड* का प्रयोग किया जाय तो बेहतर होगा। *डिस्टिलरी* से प्राप्त *इफ्लयूएन्ट* कार्बनिक पदार्थ भी पौधे के पोषण में वांछित परिणाम देते हैं। चीनी मिल के *इफ्लयूएन्ट* का 800 क्यूबिक मीटर प्रति हेक्टेयर का प्रयोग किसी प्रकार का विपरीत प्रभाव नहीं डालता है, जबकि यह गन्ने में कल्ले निकलने में सहायक होता है व गन्ना उत्पादन 10-15 प्रतिशत एवं कल्ले निकलने में 7-10 प्रतिशत तक बढ़ोत्तरी होती है।

खरपतवार प्रबंधन

अन्य फसलों की भांति गन्ने की फसल में खरपतवार से नुकसान होता है। इसकी वजह से 10 प्रतिशत से लेकर पूरी फसल के *फेल* होने तक नुकसान हो सकता है। गन्ने के धीमे अंकुरण होने के कारण खरपतवारों के बीज एवं अन्य भागों द्वारा प्रसार व अंकुरण होने में सहायक होता है। गन्ने में खरपतवारों का प्रबंधन यांत्रिक, कर्षण एवं रासायनिक तीनों विधियों का प्रयोग खरपतवारों के प्रकार व प्रवृति के अनुसार करना चाहिए। यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ मृदा की भौतिक अवस्था भी सुधरती है, जो गन्ने की बढ़वार के लिए लाभदायक होती है। यांत्रिक विधि में हाथ द्वारा खुरपी से या कुदाल से बैल चालित यंत्र से कर्षण क्रियाएं प्रमुखता से अपनायी जाती हैं। कर्षण एवं यांत्रिक विधियाँ अपनाने से मुख्यतः गन्ने की फसल में उगने वाले वार्षिक खरपतवार नियंत्रित/प्रबंधित हो जाते हैं। उपोष्ण क्षेत्रों में फसल-खरपतवार की प्रतियोगी क्रांतिक अवस्था खरपतवार के आने से ही प्रारम्भ हो जाती है। अतः कर्षण एवं यांत्रिक विधि से खरपतवार प्रबंधन अपनाने से गन्ना उत्पादन पर होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है। यांत्रिक विधि से होइंग 30, 60, 90 दिन पश्चात् करने पर उपज के नुकसान को कम किया जा सकता है। कर्षण क्रियाओं के अंतर्गत सूखी पत्ती का बिछावन एवं अन्तरावर्तीय फसलों से खरपतवार का प्रभावी प्रबंधन होता है। गन्ने की फसल की पंक्तियों के बीच अन्य फसलें जैसे चना, मटर, अरहर (शरदकालीन गन्ने में) व मूंग, लोबिया (बसंतकालीन गन्ने में) उगाने से खरपतवारों से गन्ने की फसल व उक्त अंतर्रासस्यन फसलों से प्रतियोगिता कम हो जाती है। *स्ट्राइगा* नामक खरपतवार के प्रबंधन में *ट्रैप क्राप* जैसे- *कोलम* एवं *पास्पेलम स्पेशीज* की फसलों को लगाने से गन्ने के खेत में *स्ट्राइगा* पर प्रभावी नियंत्रण/प्रबंधन किया जा सकता है। इस *ट्रैप* फसलों की बुआई करने से *स्ट्राइगा* को नष्ट किया जा सकता है।

यांत्रिक व कर्षण क्रियाओं के साथ-साथ, रासायनिक विधियों का भी प्रयोग आवश्यकतानुसार करना चाहिए। खरपतवार के जमने से पहले *एट्राजीन* नामक दवा का 2 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से व बुआई के 60 दिन पश्चात् *2,4-डी* का 1.00 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से उचित मात्रा में पानी के साथ घोल बनाकर *फ्लेट फैन नाजल* वाले *स्प्रेयर* से छिड़काव करने से खरपतवारों के अधिक क्षति के स्तर को बनाये रख कर प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है। *बांइडिंग* खरपतवार (लपेटने वाले खरपतवार) जैसे- *काक्सिनिया, आईपोमिया* एवं हिरनखुरी, पूर्वी उत्तर प्रदेश व बिहार के तराई वाले क्षेत्रों में गन्ने की उपज को बुरी तरह प्रभावित करते हैं। इसके प्रभावी नियंत्रण के लिए *मेट्रीब्यूजीन* नामक दवा का 1.25 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खरपतवारों के उगने से पहले *प्री-इमरजेंस* के रूप में प्रयोग करने से प्रभावी प्रबंधन/नियंत्रण हो जाता है। एक विधि के प्रयोग से बेहतर है कि सभी संभव खरपतवार प्रबंधन/नियंत्रण की विधियों का प्रयोग किया जाय। उदाहरण स्वरूप खरपतवारों के जमने से पहले *मेट्रीब्यूजीन* नामक दवा का प्रयोग, इसके पश्चात *2,4-डी* का गन्ने की बुआई के 60 दिन बाद प्रयोग व एक होइंग बुआई के 90 दिन पश्चात करने से केवल रासायनिक विधि से प्रबंधन की तुलना में बेहतर परिणाम मिलते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

tLrk % euq"; ,oa ikni iks"k.k ds fy, vko';d rRo

vkuUn flag] mn; izrki 'kkgh ,oa ize flag
lqjnkj oYyHkHkkbZ iVsy] d`f"k ,oa izkS|kfxdh fo'ofo|ky;] esjB

अनिवार्य पोषक तत्व

पौधों (फसलों) की समुचित वृद्धि और विकास के लिए कुछ पोषक तत्व अनिवार्य होते हैं। अभी तक के शोधों के आधार पर पूरे फसल चक्र के लिए 17 अनिवार्य पोषक तत्वों की पहचान हुई है। प्रायः यह देखा गया है फसल उत्पादन हेतु मृदा में इन 17 तत्वों में से अगर किसी भी तत्व की कमी है तो फसल उत्पादन कम हो सकता है। जस्ता सूक्ष्म पोषक तत्वों की श्रेणी में आता है लेकिन यह उतना ही महत्वपूर्ण है जितने मुख्य पोषक तत्व।

जस्ते की भूमिका

जस्ता फसलों के समुचित विकास के लिए आवश्यक है। यह पौधों में होने वाले विभिन्न उपापचय गतिविधियों को नियंत्रित करता है और ऑक्सिन नामक वृद्धि नियामक हार्मोन का उत्पादन करता है। जस्ता पौधों के प्रकाश-संश्लेषण और नाइट्रोजन उपापचय के लिए अति आवश्यक तत्व है। जस्ता न सिर्फ अधिक फसल उत्पादन के लिए आवश्यक है अपितु गुणवत्ता युक्त उपज के लिए भी जरूरी है। इसका सीधा प्रभाव किसान की आमदनी और उपभोक्ता के स्वास्थ पर पड़ता है।

पादप पोषण के साथ-साथ जस्ता मानव शरीर के लिए भी अति आवश्यक है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए विभिन्न प्रकार के विटामिन और खनिजों की आवश्यकता होती है। इनमें से एक आवश्यक खनिज जस्ता होता है। शरीर निम्न प्रक्रियाओं के लिए जस्ता का उपयोग करता है:

- प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने के लिए।
- कोशिकाओं के विभाजन में मदद करने के लिए।
- सूंघने और जीभ के स्वाद को बनाए रखने के लिए।
- घाव भरने की गति को बढ़ाने के लिए।

अनुशंसित आहार भत्ता के अनुसार जस्ते की मात्रा जन्म से 6 महीने की उम्र के शिशु को 2 मिलीग्राम देनी चाहिए। 9 से 13 साल के बच्चे को 8 मिलीग्राम, 14 से 18 साल के पुरूष और 14 से 18 साल की महिला को क्रमशः 11 मिलीग्राम और 9 मिलीग्राम के करीब जस्ता लेना चाहिए। 19 से 50 साल के पुरूष और महिला को 11 मिलीग्राम के करीब जस्ता लेना चाहिए। मनुष्यों में जस्ते की कमी से भ्रूण के मस्तिष्क का विकास बाधित होता है। *एक्रोडर्मिटाटिस एन्टेरोपैथिका* जैसे जन्मजात रोग भी हो सकते हैं। इसलिए जस्ता न सिर्फ पौधों अपितु मनुष्यों के लिए भी समान रूप से आवश्यक तत्व है।

कमी के लक्षण

जस्ता सभी प्रकार की फसलों के लिए आवश्यक तत्व है। जस्ते की कमी होने पर विभिन्न प्रकार की फसलों में विभिन्न प्रकार के लक्षण दिखाई देते हैं। अनेक शोधों में यह पाया गया है कि जस्ते की कमी के लक्षण फसलों की बुबाई के एक महीने बाद दिखाई देते हैं। पुरानी पत्तियों की शिराओं के बीच हल्के हरे, पीले से लेकर फीकी चित्तियाँ दिख सकती हैं। नई निकलने वाली पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है और अत्यधिक कमी के मामले में अंतर्ग्रन्थीय दूरी कम हो जाती है। मक्का और गन्ना में कमी प्रमुख तौर पर होती है जो पत्तियों की पीली धारियों के रूप में नजर आती है जो अत्यधिक कमी के मामले में सफेद हो जाती है। जस्ते की कमी से धान की पत्तियां जंग के रंग की हो जाती है। इसकी कमी से धान की फसल में खैरा नामक रोग होता है। इसका नाम खैरा इसलिए रखा गया क्योंकि यह खैर के पेड़ से निकलने वाले कत्थे के रंग जैसा दिखता था। सोयाबीन के पौधे का विकास भी रूक जाता है। सघन फसलीकरण, एचवाईवी बीजों के इस्तेमाल और सूक्ष्म-तत्वों का कम प्रयोग मृदा में इनकी कमी के मुख्य कारण हैं, जिनमें कि जस्ता सबसे ज्यादा कमी वाला सूक्ष्म-पोषक तत्व है।

मिट्टी में जस्ते की उपलब्धता और जस्ता उर्वरकों के स्रोत

मिट्टी में जस्ते की उपलब्धता को प्रभावित करने वाले कई कारक हैं जैसे मृदा का पी.एच. मान, उपयोग होने वाले उर्वरक, मौसम इत्यादि। प्रायः यह पाया गया है कि सर्दियों के दौरान जस्ते की कमी होती है। अपेक्षाकृत गर्मियों के समय अम्लीय मृदा में जस्ते की उपलब्धता बढ़ जाती है जो लवणीय और कैल्शियम युक्त मृदा में कम हो जाती है। धान की फसल की मृदा में जलप्लावन से भी क्षारीय भूमि में जस्ते की उपलब्धता में सुधार होता है लेकिन अम्लीय मिट्टी के निरंतर जलप्लावन से जस्ते की

जस्ता उर्वरकों के चार मुख्य स्रोत हैं :

mo✓jd@lkzr	ftad rRo dk izfr'kr	Ekk=k e✓ iz;kx ¼fd-xzk- mo✓jd@g-½	Ikf.k; fNM+dko ¼izfr'kr ?kksy½
जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट	21	25	0.5 जिंक सल्फेट एवं 0.25 प्रतिशत बुझा हुआ चूना
जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट	33	20	
जिंक आक्साइड	60–80	13	
जिंक ई.डी.टी. (चिलेटेड जिंक)	12	0.5, 10 कि. ग्रा. मृदा में	

कमी बढ़ जाती है। मृदा में फास्फोरस की अधिक उपलब्धता भी जस्ते की उपलब्धता को कम करता है।

जस्ते के उर्वरकों के उपयोग की विधियाँ

जस्ते के उर्वरकों को निम्न प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है-

आधारीय खुराक

मृदा परीक्षण के अनुसार सर्वोत्तम परिणामों के लिए जिंक सल्फेट को एन.पी.के. उर्वरकों और कम्पोस्ट के साथ आधारीय खुराक के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता हैं। मृदा परीक्षण की सुविधा उपलब्ध न होने पर 10 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की आवश्यक खुराक डाली जा सकती हैं। जिंक-ईडीटीए को भी आधारीय खुराक के रूप में उपयोग किया जा सकता हैं। यह मिट्टी में अवक्षेपण स्थिरीकरण प्रतिक्रिया को रोकता हैं और जस्ते की उपलब्धता को भी बढ़ाता हैं।

पत्तियों पर छिड़काव

पौधों में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई देने पर प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में 2 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और 1 कि.ग्रा. चूना मिलाकर इस घोल का छिड़काव करना चाहिए। यदि एक छिड़काव से कमी दूर न हो तो दूसरा छिड़काव भी करना चाहिए।

बीजोपचार

बीजों को बुबाई से पहले जिंक सल्फेट से उपचार किया जा सकता है जो कि पत्तियों पर छिड़काव से बेहतर परिणाम देता है। आलू के बीजोपचार के लिए 100 लीटर पानी में 50 ग्राम जिंक सल्फेट (33 प्रतिशत) का घोल तैयार करके उसमें आलू के बीजों/कंदों को 25 घंटे तक भिगोकर छाया में रखें।

बायोफॉर्टिफिकेशन

फसल उत्पादों में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जस्ता, लोहा आदि की जैव उपलब्धता बढ़ाने की प्रक्रिया को *बायोफॉर्टिफिकेशन* कहते हैं। इसके लिए दो विधियाँ अपनायी जाती हैं। पादप प्रजनन एवं सस्य क्रिया द्वारा। सस्य क्रिया में हम वांछित तत्व की संतुलित व भरपूर मात्रा मृदा में या पर्णीय छिड़काव द्वारा प्रयोग करते हैं जिससे फसल उत्पादन में इन तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। इस प्रकार सूक्ष्म तत्वों से भरपूर अनाज प्रयोग करने से उन तत्वों की कमी हमारे शरीर में नहीं होती है।

जस्ते की कमी को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की फसलों में अनेक प्रजातियाँ विकसित की जा रहीं है। जिनमें से कुछ मुख्य निम्नलिखित हैं-

Qly	QkfVQkbM iztkfr;k
धान	डीआरआर धान–45 (जस्ता–22.6 पीपीएम) छत्तीसगढ़ जिंक राईस (जस्ता–22 पीपीएम)
गेंहूँ	डब्लूबी–02 (जस्ता–42 पीपीएम) एचपबीडब्लू–01 (जस्ता–40.6 पीपीएम)
बाजरा	एचएचबी–299 (जस्ता–41.0 पीपीएम)

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

dkaxzsl ?kkl ds çHkko vkSj fu;a=.k

fgeka'kq jk; ,oa ih-ds- flag

Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

कांग्रेस घास एक बहुमुखी, वार्षिक जड़ी बूटी है जो फूलों के पौधों के एस्टेरसिया परिवार से संबंधित है। गाजर के पौधों से बहुत अधिक मिलती-जुलती पत्तियों के कारण इसे गाजर घास के नाम से भी जाना जाता है। कांग्रेस घास का वैज्ञानिक नाम *'पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस'* है। यह उष्णकटिबंधीय अमेरिका का मूल निवासी है, जहाँ इसे *सांता मारिया, व्हाइट टॉप* और *रैग वीड* के नाम से जाना जाता है। कांग्रेस घास एक लंबे समय तक बढ़ने वाली, गहरी जड़ों वाली, ज्यादा शाखाओं वाली द्विबीजपत्री पौधों की प्रजातियाँ हैं। भारत में इसे अलौकिक घास के नाम से भी जाना जाता है। खरपतवार कई छोटे सफेद फूलों को एक साथ एकत्रित करते हैं जो कि कैपिटुलम पुष्पक्रम बनाते हैं। परिपक्वता पर कैपिटुलम को सिप्सेला प्रकार के फल में बदल दिया जाता है, जिसमें कई बीज होते हैं। पौधों को मुख्य रूप से बीज के माध्यम से प्रचारित किया जाता है।

विदेशी पौधे क्या हैं?

विदेशी मूल के पौधों को विदेशी पौधों के रूप में जाना जाता है। महाद्वीपों के बीच जबरदस्त प्रजाति विनिमय के परिणामस्वरूप विदेशी पौधे पिछली पांच शताब्दियों के भीतर दुनिया के अधिकांश क्षेत्रों की वनस्पतियों के तत्व बन गए हैं। विदेशी पौधों को या तो जानबूझकर पेश किया जाता है (उदाहरण टमाटर, आलू, कस्टर्ड सेब, अमरूद आदि) या दुर्घटनावश (उदाहरण बकरी की घास, पानी जलकुंभी, कांग्रेस घास आदि)। भारत में पाए जाने वाले पौधों की प्रजातियों में से लगभग 40 प्रतिशत विदेशी हैं। भारत के गंगा के मैदान और भारत के थार मरूस्थलीय क्षेत्र विदेशी पौधों से समृद्ध हैं जबकि भारत के हिमालयी और प्रायद्वीपीय क्षेत्र विदेशी पौधों में खराब हैं।

कांग्रेस घास की विशेषताएं?

कांग्रेस घास को भारत में बीज रूप में मैक्सिको से आयात किए गए खाद्यान्न के रूप में पेश किया गया था। भारत में यह पहली बार 1956 में पुणे (महाराष्ट्र) में बेकार स्थानों पर आवारा पौधों के रूप में विकसित होने की सूचना मिली थी। एक दशक के भीतर यह भारत के मैदानी इलाकों में इतनी तेजी से फैल गयी थी कि इसके विनाश की समस्या खरपतवार समस्या बन गयी। इस खरपतवार का सबसे बुरा प्रभाव कर्नाटक राज्य में देखा गया है, जहाँ कांग्रेस घास के पराग कणों के कारण तीव्र पुरानी श्वसन संबंधी परेशानियों (*अस्थमा, ब्रोंकाइटिस,* घास का बुखार और सामान्य सर्दी) के बाद कई आत्महत्या के मामले दर्ज किए गए हैं।

भारत में, यह खरपतवार बसंत के मध्य में अर्थात फरवरी के अंत में *फ्लश* में दिखाई देने लगता है और सर्दियों की शुरूआत तक दिखाई देता रहता है। जुलाई और अगस्त के दौरान कांग्रेस घास की शानदार वृद्धि देखी जाती है, जबकि सर्दियों में यह रोसेट उपस्थिति बनाने से निष्क्रिय रहती है।

कांग्रेस घास बहुत आक्रामक और मजबूत खरपतवार है। भारत के मैदानी इलाकों में, यह खरपतवार सड़कों और रेल की पटरियों, अनियंत्रित भूमि और बंजर भूमि पर, औद्योगिक क्षेत्रों में और खुले जल निकासी प्रणाली और सिंचाई की नहरों के किनारे पर बढ़ती है। कांग्रेस घास अपने बढ़ते निवास स्थान में ऐलोपैथिक संपत्ति के कारण एकाधिकार प्राप्त करती है। खरपतवार मिट्टी में विकास अवरोधकों को छोड़ता है जो इसके आसपास के क्षेत्र में अन्य शाकाहारी वनस्पति के विकास को दबा देता है। इस प्रकार यह देशी पौधों की प्रजातियों की जगह एक बड़े क्षेत्र में खड़ी हो जाती है। खरपतवार मुख्य रूप से बीजों से फैलता है। इसमें प्रति वर्ग मीटर लगभग 1,54,000 बीजों का उत्पादन करने की क्षमता है। एक एकल पौधा 620 मिलियन पराग कण और लगभग 15,000-25,000 बीज पैदा कर सकता है। बीज शराबी, आकार में बहुत छोटे और वजन में आसानी से हवा, पानी या विभिन्न मानव गतिविधियों के माध्यम से फैल जाते हैं। कांग्रेस घास में कटे या टूटे हुए हिस्सों से भी उगने की क्षमता है। भारत में इसके तेजी से फैलने के लिए कीड़ों और बीमारियों जैसे प्राकृतिक दुश्मनों की अनुपस्थिति दो महत्वपूर्ण कारक हैं।

कांग्रेस घास के हानिकारक प्रभाव?

कांग्रेस घास मनुष्य और पशुओं की आबादी के लिए एक बड़ा स्वास्थ्य खतरा है। खरपतवार के पराग कण एलर्जी पैदा करने वाले *ब्रोंकाइटिस, अस्थमा, राइनाइटिस,* नेत्रश्लेष्मलाशोथ, घास का बुखार, *साइनसाइटिस,* सामान्य सर्दी, गर्दन में दर्द और यहाँ तक की मानव में अवसाद भी पैदा करते हैं। खरपतवार के लगातार संपर्क में आने से *डर्मेटाइटिस, एक्जिमा, पैलर्टोन्सिस* और *गैंग्रीन* भी होने का खतरा होता है।

गन्ना फसल के क्षेत्र में कांग्रेस घास का प्रभाव

यह खरपतवार मानव जाति के साथ-साथ पशुओं की आबादी के लिए भी घातक है। ये जानवर खुजली, शरीर के बालों का गिरना, खाल का उखड़ना, बदबूदार उबटन इत्यादि से पीड़ित हैं। यह भी बताया गया है कि कांग्रेस घास की टॉक्सिन पार्थेनिन के कारण दूध में कड़ुवे स्वाद के विकास के लिए जिम्मेदार है।

चूंकि कृषि फसलों की खरपतवार घास की फसलों में राइजोबिया (*नाइट्रोजन फिक्सिंग बैक्टीरिया*) के विकास और उपनिवेश पर प्रभाव को चिहित करती है। यह 60% तक *नोडुलेशन* को कम कर सकता है और इस प्रकार से दलहनी फसलों की नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता को काफी हद तक कम कर सकता है। बीमारी के अलावा, यह कई अन्य समस्याओं का भी कारण बनता है, जैसे कि सामान्य रास्ते में रूकावट और पार्कों, उद्यानों और आवासीय कॉलोनियों के सौंदर्य मूल्यों में कमी।

कांग्रेस घास को कैसे नियंत्रित किया जाए?

कांग्रेस घास सभी नियंत्रण उपायों को धता बताती है, लेकिन खरपतवार पर नियंत्रण रखने के लिए निम्नलिखित विधियों का पालन किया जा सकता है। *एट्राजीन*, 2, 4-*डाइक्लोरोफेनो-एसेटिक एसिड, पैराक्वैट, ग्माईफोसैट, ड्रिन और दालपैन* जैसे खरपतवारनाशी रसायनों का उपयोग कुछ हद तक खरपतवार को दबाने के लिए किया जाना चाहिए क्योंकि ये खरपतवार के खिलाफ आंशिक रूप से प्रभावी पाए जाते हैं। घास को बदलने के लिए *कैसिसेरिया, कैसिया अनफ्लोरा* और *कैसिया तोरा* के पौधे उपयुक्त पाए गए हैं। इसलिए खरपतवार को खत्म करने के लिए उन्हें प्रतिस्थापन प्रजातियों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। कृषि क्षेत्रों में उगने वाली कांग्रेस घास के फूलों की स्थापना से पहले खेत की जुताई करके जून के महीने में नष्ट कर देना चाहिए। नवंबर के शुरू में जब पूरा पौधा सूख जाता है और बीज परिपक्व हो जाते हैं तो पौधों को जला देना चाहिए।

वर्तमान में *मैक्सिकन बीटल (जिगोग्रामा बाइकोलोराटा)* के माध्यम से इस खरपतवार जैविक नियंत्रण का सबसे प्रभावी तरीका है। यह कीट दक्षिण अमेरिका से भारत में लाया गया था। संगरोध परिस्थितियों में विस्तृत मेजबान- विशिष्टता परीक्षणों ने देश में खेती की जाने वाली फसलों के लिए *बीटल* की सुरक्षा की पुष्टि की। इस *बीटल* के वयस्क और लार्वा दोनों कांग्रेस घास की पत्तियों पर खाने में सक्षम हैं। लार्वा के बाद लार्वा नरम बढ़ने वाले पत्तों पर खिलना शुरू कर देता है, पहले टर्मिनल और सहायक कली पर हमला करता है और बाद में पत्ती के ब्लेड पर आक्रमण करता है। इस प्रकार पौधे की वृद्धि और फूलों के गठन की जांच करता है। वयस्क कीट पौधे को बुरी तरह से विकृत कर देता है। *बीटल* फूलों के नीचे नरम ऊतकों को चबाने के प्रयास में अपरिपक्व फूलों को काट देता है। पूरी तरह से खराब हो चुके पौधे मरने के लक्षण दिखाने लगते हैं और धीरे-धीरे मारे जाते हैं।

कांग्रेस घास भारत के मैदानी क्षेत्रों में एक भयानक खरपतवार है जो न केवल फसल की उपज और जैविक विविधता को प्रभावित करती है, बल्कि मानव और पशुधन आबादी के लिए एक गंभीर स्वास्थ्य खतरा भी है। इसलिए जैविक विविधता, मानव और पशुधन स्वास्थ्य और फसल पौधों पर इसके हानिकारक प्रभावों से बचने के लिए सभी संभव नियंत्रण विधियों को नियोजित करके इस खरपतवार के विकास और प्रसार को नियंत्रित करना समय की आवश्यकता है।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानी देव वयुनानि विद्वान्।
यूयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नाम उक्तिं विधेम।।

यजुर्वेद 5/36

अर्थात- हे अग्निदेव**!** अप हमें सुपथ पर ले चलें। अप सभी सन्मार्गों को जानने वाले हैं। आप हमें कुटिलता देने वाले पाप से मुक्त करें। आपके प्रति अधिक-से-अधिक समर्पित होकर इस पथ का पालन करें।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Qly mRiknu e: t\o mojdk dk mi;kx ,o egRo

vui dekj[1]] vfHk"kd lkxj[1]] foUuh t,u[1]] vfer dekj ek;k[1] vkj ed'k dekj[2]

[1]lie fgfXxuc,Ve —f"k] çk|kfxdh ,o foKku fo'ofo|ky;] ç;kxjkt

[2]Hkk—vui&Hkkjrh; xUuk vu|l/kku lLFkku] {k=h; dæ] ekrhij] et¶Qjij

भारत के कृषि विकास में उन्नत किस्म के बीजों, उर्वरकों, सिंचाई जल एवं पौध सुरक्षा का उल्लेखनीय योगदान रहा है। वर्तमान ऊर्जा संकट और निरंतर क्षीणता की ओर अग्रसर ऊर्जा स्रोतों के कारण रासायनिक उर्वरकों की कीमतें आसमान को छूने लगी हैं। इतना ही नहीं, भूमि में डाले गए उर्वरकों का 40-50 प्रतिशत ही फसलें उपयोग कर पाती हैं, शेष 50-60 प्रतिशत भाग जल के साथ बह जाता है या *डिनाइट्रीफिकेशन* के द्वारा वायुमंडल में चला जाता हैं अथवा भूमि में ही निष्क्रिय अवस्था में पड़ा रहता हैं। अन्य पोषक तत्वों की तुलना में भूमि में उपलब्ध नत्रजन की मात्रा न्यूनतम स्तर की होती है। यदि प्रति कि.ग्रा. पोषक तत्व की कीमत की ओर ध्यान दें तो नत्रजन ही सबसे अधिक कीमती है। अतः नत्रजनधारी उर्वरक के एक-एक दाने का उपयोग सावधानी से करना आज की अनिवार्य आवश्यकता हो गयी है।

भारत जैसे विकासशील देश में नत्रजन की इस बड़ी मात्रा की आपूर्ति केवल रासायनिक उर्वरकों से कर पाना छोटे और मध्यम श्रेणी के किसानों की क्षमता से परे है। अतः फसलों की नत्रजन आवश्यकता की पूर्ति के लिए पूर्णरूप से रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहना तर्कसगंत नहीं है। वर्तमान परिस्थितियों में नत्रजनधारी उर्वरकों के साथ-साथ नत्रजन के वैकल्पिक स्रोतों का उपयोग न केवल आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बल्कि मृदा की उर्वरा शक्ति को टिकाऊ व अक्षुण रखने के लिए भी आवश्यक है। ऐसी स्थिति में नत्रजन के रूप में जैव उर्वरकों एवं संद्रिय पदार्थों के एकीकृत उपयोग करने की अनुशंसा की गयी है। भूमि में सूक्ष्म जीवों की सम्मिलित सक्रियता के लिए निम्न दशाएं अनुकूल होती हैं :

- जीवांश पदार्थों की उपस्थिति
- नमी
- वायु संचार
- निरंतर उदासीन के आस पास पी.एच. मान

जैव उर्वरक

भूमि मात्र एक भौतिक माध्यम नहीं है बल्कि यह एक जीवित क्रियाशील तंत्र है। इसमें सूक्ष्मजीवी जीवाणु, फफूंदी, शैवाल, प्रोटोजोआ आदि पाये जाते हैं। इनमें कुछ सूक्ष्मजीवी वायुमंडल में स्वतंत्र रूप से पाई जाने वाली 78 प्रतिशत नत्रजन को अमोनिया एवं नाइट्रेट तथा कुछ मृदा में उपस्थित फॉस्फोरस को उपलब्ध अवस्था में बदल देते हैं। जैव उर्वरक इन्हीं सूक्ष्म जीवों का समूह, लिग्नाइट या कोयले के चूर्ण का मिश्रण है जो पौधों को नत्रजन एवं फॉस्फोरस आदि की उपलब्धता बढ़ाता हैं। ये भूमि, जल एवं वायु को प्रदूषित किये बिना कृषि उत्पादन स्तर में स्थायित्व लाते हैं, इन्हें जैव संवर्धन, जीवाणु खाद, टीका अथवा *इनॉकुलेंट* भी कहते हैं।

जैव उर्वरक निम्न प्रकार के होते हैं :

1. *राइजोबियम* संवर्धन 2. *एजोटोबैक्टर* संवर्धन 3. *एजोस्पाईरिलम* संवर्धन 4. नील हरित शैवाल 5. *फास्फेटिका* संवर्धन 6. *एजोला* फर्न 7. *माइकोराइजा* 8. *ट्राइकोडर्मा*

राइजोबियम संवर्धन

यह एक नम चारकोल एवं जीवाणुओं का मिश्रण हैं, जिसके प्रत्येक एक ग्राम भाग में 10 करोड़ से अधिक *राइजोबियम* जीवाणु होते हैं। इस खाद का प्रयोग केवल दलहनी फसलों में ही किया जा सकता है तथा ये फसल विशिष्ट होते हैं, अर्थात अलग-अलग फसल के लिए अलग-अलग *राइजोबियम* जीवाणु का प्रयोग होता हैं। इस खाद से बीज उपचार करने पर ये बीज पर चिपक जाते हैं। बीज अंकुरण होने पर जीवाणु जड़ के मूलरोमों द्वारा पौधों की जड़ों में प्रवेश कर जड़ों पर ग्रंथियों का निर्माण करते हैं। ये ग्रंथियां नत्रजन स्थिरीकरण इकाईयां हैं तथा पौधों की बढ़वार इनकी संख्या पर निर्भर करता है। पौधे की जड़ में अधिक ग्रंथियों के होने पर उपज में बढ़वार अधिक होती हैं।

प्रयोग विधि

200 ग्राम राइजोबियम से 10-12 कि.ग्रा. बीज उपचारित कर सकते हैं। एक पैकेट को खोलें तथा 200 ग्राम राइजोबियम संवर्धन लगभग 300-400 मि. ली. जल में डालकर अच्छी प्रकार घोल बना लें। बीजों को एक साफ सतह पर एकत्रित कर जीवाणु खाद के घोल को बीजों पर धीरे-धीरे डालें और बीजों को हाथ से उलटते-पलटते जाएं जब तक कि सभी बीजों पर जीवाणु खाद की समान परत न बन जाए। ध्यान रखें कि बीजों पर लेप करते समय बीज के छिलकों को नुकसान न पहुँचे। उपचारित बीजों को

साफ कागज या बोरी पर फैलाकर छाया में 10-15 मिनट सुखाने के बाद तुरंत बुवाई कर दें।

राइजोबियम जीवाणु के प्रयोग से लाभ

- इसके प्रयोग से 10-20 कि.ग्रा. रासायनिक नत्रजन की बचत होती हैं।
- इसके प्रयोग से फसल की उपज में 20-35 प्रतिशत वृद्धि होती हैं।
- *राइजोबियम* जीवाणु हारमोन एवं विटामिन भी बनाते हैं, जिससे पौधों की बढ़वार एवं जड़ों का विकास अच्छा होता हैं।
- प्रथम फसल लेने के बाद दूसरी फसल पर भी जैविक उर्वरक का प्रभाव पड़ता हैं एवं उपज में वृद्धि होती हैं।

फसल विशिष्ट राइजोबियम

Ø-l-	Qly	jkbtkfc;e çdkj
1	मटर समूह	*रा. लेगुमिनोसोरम*
2	सेम समूह	*रा. फसोली*
3	चारा समूह	*रा. मेलीटी*
4	*क्लोवर* समूह	*रा. ट्राईफोलाई*
5	*लूपाइन* समूह	*रा. लूपाइन*
6	*सोयाबीन* समूह	*रा. जैपानिकम*
7	*काऊपी* समूह	*राइजोबियम स्पीशीज*

एजोटोबैक्टर संवर्धन

यह जीवाणु पौधे के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक नम चूर्ण रूप उत्पाद है जो वायुमंडल की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसके एक ग्राम में लगभग 10 करोड़ जीवाणु होते हैं। मुख्यतः यह जीवाणु दलहनी फसलों को छोड़कर सभी फसलों के उपयोग में लाई जाती हैं।

एजोस्पाइरिलम संवर्धन

यह जीवाणु भी मृदा में पौधे के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक नम चूर्ण उत्पाद है जो वायुमंडल की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। यह जीवाणु खरीफ के मौसम में धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल हेतु विशेष उपयोगी है।

एजोटोबैक्टर/एजोस्पाइरिलम जीवाणु से लाभ

- फसलों की 10-20 प्रतिशत पैदावार में वृद्धि होती हैं तथा फलों एवं दानों का प्राकृतिक स्वाद बना रहता हैं।
- इसके प्रयोग करने से 20-30 कि.ग्रा. नत्रजन की बचत होती हैं।
- *एजोटोबैक्टर* जीवाणु कुछ वृद्धि कारक हारमोंस (जैसे-*जिब्रेलिक एसिड*) तथा विटामिन (जैसे-विटामिन बी) का उत्सर्जन करते हैं, जिससे पौधे के विकास में सहायता मिलती है।
- बीज अंकुरण शीघ्र एवं स्वस्थ और जड़ों का विकास तेजी से होता हैं।
- फसलें भूमि से फॉस्फोरस का अधिक प्रयोग कर लेती हैं जिससे कल्ले अधिक बनते हैं।
- इन जैव उर्वरकों के जीवाणु *एंटीबायोटिक* पदार्थों का भी निर्माण करते हैं जिससे पौधे की रोग प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है तथा फसलों का बीमारियों से बचाव होता है।
- ऐसे जैव उर्वरकों का प्रयोग करने से जड़ों एवं तनों का अधिक विकास होता हैं जिससे पौधे में तेज हवा, अधिक वर्षा एवं सूखे की स्थिति को सहने की क्षमता बढ़ जाती हैं।

नील हरित शैवाल

नील हरित शैवाल एक कोशिकीय सूक्ष्म जीव होते हैं जो नम मृदा तथा स्थिर जल में स्वतंत्र रूप से रहते हैं। धान के खेत का वातावरण इसके लिए सर्वथा उपयुक्त होता हैं। इसकी वृद्धि के लिए आवश्यक ताप, प्रकाश, नमी और पोषक तत्वों की मात्रा धान की खेत में विद्यमान रहती है।

प्रयोग विधि

धान की रोपाई के 3-4 दिन बाद स्थिर जल में 12.5 कि.ग्रा. प्रति हे. की दर से नील हरित शैवाल का प्रयोग करें तथा 4-5 दिन तक खेत में पानी लगातार भरा रहने दें। तीन वर्ष तक लगातार खेत में प्रयोग करने के बाद इसे पुनः डालने की आवश्यकता नहीं होती है। यदि धान में किसी खरपतवारनाशी का प्रयोग किया हैं तो इसका प्रयोग खरपतवारनाशी के प्रयोग के 3-4 दिन बाद करें।

नील हरित शैवाल से लाभ

- 30 कि.ग्रा. प्रति हे. नत्रजन प्राप्त होती हैं।
- धान के उत्पादन में 15-20 प्रतिशत की वृद्धि होती हैं।
- इसके प्रयोग से वृद्धि नियंत्रक, विटामिन-बी$_{12}$, अमीनो अम्ल भी स्रवित होते हैं जिससे पौधे में अच्छी वृद्धि होती हैं और गुणवत्ता भी बनी रहती हैं।

फास्फेटिका संवर्धन *(पी.एस.बी)*

फास्फेटिका जीवाणु भी स्वतंत्रजीवी जीवाणुओं का एक नम चूर्ण रूप में उत्पाद हैं, इसे *पी.एस.बी. (फॉस्फोरस सोलुबुलाजिंग बैक्टीरिया)* भी कहते हैं। नत्रजन के बाद दूसरा महत्वपूर्ण पोषक

तत्व फॉस्फोरस है जिसे पौधे सर्वाधिक उपयोग में लाते हैं। फास्फेटिक उर्वरकों का लगभग एक तिहाई भाग पौधे अपने उपयोग में ला पाते हैं। शेष अघुलनशील अवस्था में जमीन में ही पड़ा रहता हैं जिसे पौधे ग्रहण नहीं कर पाते। फास्फेटिका जीवाणु युक्त खाद का प्रयोग करने से मृदा में उपस्थित अघुलनशील फॉस्फोरस को ये जीवाणु घुलनशील अवस्था में बदल देतें हैं तथा इसका प्रयोग सभी फसलों में किया जा सकता हैं।

पी.एस.बी. से लाभ

- फास्फेटिका जीवाणु के प्रयोग से फसलों की 10-20 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती हैं।
- इसके प्रयोग करने से 20-30 कि.ग्रा. प्रति हे. की दर से उपलब्ध फास्फेट की बचत की जा सकती हैं।
- जड़ों का विकास अधिक होता हैं, जिससे पौधा स्वस्थ बना रहता हैं।

एजोला फर्न : यह ठण्डे मौसम में स्थिर जल में ऊपर तैरते हुए पाया जाता हैं जो दूर से देखने में हरे या लाल रंग की चटाईनुमा लगता हैं इसकी पत्तियाँ बहुत छोटी तथा मोटी होतीं हैं। इन पत्तियों के नीचे छिद्रों में सहजीवी *साइनो-बैक्टीरिया (एनाविना एजोली)* पाया जाता हैं, जो नत्रजन स्थिरीकरण में सहायक हैं, जलमग्न धान के खेतों में बुवाई के एक सप्ताह बाद 10 क्विंटल प्रति हे. की दर से उगाया जाता हैं जो दो कि.ग्रा. नत्रजन प्रति दिन की दर से स्थिर कर सकता हैं। इसका प्रयोग कम्पोस्ट बनाने में अथवा 10 टन प्रति हे. की दर से हरी खाद के रूप में भूमि में मिलाकर किया जा सकता हैं। इसके प्रयोग से धान में खरपतवार कम पनपते हैं तथा नत्रजन के प्रयोग में 40-80 कि.ग्रा. तक बचत की जा सकती हैं।

माईकोराइजा (कवक खाद)

इसमें फफूँदी का पौधे की जड़ों से सह जीवन होता हैं, जिसमें फफूँदी अपनी जड़ों से पोषक तत्वों को अवशोषित करती हैं और पौधों को इन तत्वों को तुरंत उपलब्ध कराती है। इसके बदले वे पौधों से भोजन प्राप्त करते हैं। यह दो प्रकार का होता है :

- *एक्टमाईकोराइजा*
- *इन्डोमाईकोराइजा*

माईकोराइजा से लाभ

- इसके प्रयोग से फॉस्फोरस, पोटाश, कैल्शियम एवं सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
- इसके प्रयोग से वृद्धि वर्धक *(साईटोकाईनिन)* हारमोंस भी पौधे को उपलब्ध होता है।
- इसके प्रयोग से पौधे हेतु जल उपलब्धता बनी रहती हैं।

जैव उर्वरकों के प्रयोग में सावधानियाँ

सामान्यतया यह आवश्यक नहीं है कि मृदा में भी उपस्थित जीवाणु सक्षम एवं क्रियाशील हों। अतः संवर्धन के माध्यम से किसानों को क्रियाशील जीवित पदार्थ या जीवाणु उपलब्ध कराए जाते हैं। जैव उर्वरकों के प्रयोग में निम्नलिखित सावधानियां रखनी चाहिए :

- जीवाणु खाद धूप व गर्मी से दूर, सूखे एव ठण्डे स्थान पर रखें।
- जीवाणु खाद या इससे उपचारित बीजों को किसी भी रसायन खाद के साथ न मिलाएं।
- *राइजोबियम* जीवाणु फसल विशिष्ट होता हैं। अतः पैकेट देखकर ही प्रयोग करें।
- यदि बीजों पर फफूँदीनाशी बाविस्टिन का प्रयोग करना हो तो बीजों को पहले फफूँदनाशी से उपचारित कर फिर जीवाणु खाद की दोगुनी मात्रा से उपचारित करें।
- जैव उर्वरकों का प्रयोग पैकेट पर लिखी अंतिम तिथि से पहले अवश्य कर लेना चाहिए।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

tSfod [ksrh dk egRo

inhi dqekj flag[1] ,oa foodkuan flag[2]

[1]'kj d'ehj Ñf"k ,oa izkS|ksfxdh fo'ofo|ky;] d'ehj] 'kkyhekj] Jhuxj ¼tEew d'ehj½

[2]—f"k foKku dsanz] Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

भारतीय किसान हरित क्रांति के आगमन से सैकड़ों वर्ष पहले से जैविक खेती ही करते आ रहे थे। देश भर में कई आदिवासी समुदाय अभी भी झूम खेती का तरीका अपनाते हैं जो जैविक खेती जैसा ही है। लगभग पिछले दशक से किसान समुदायों, नीति निर्धारकों और वैज्ञानिकों ने अहसास किया है कि हरित क्रांति द्वारा कृषि-रसायनों के अत्यधिक इस्तेमाल को बढ़ावा देने से स्थिति यहाँ तक आ गयी है, जहाँ इसे सीमित एवं गैर-नवीकरणीय संसाधनों के सहारे चलाया जा रहा है। इस प्रकार, हर कीमत पर जीवन के अस्तित्व की खातिर एक टिकाऊ और प्राकृतिक संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। यह जैविक खेती के तौर तरीकों को अपनाने से ही संभव है।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है और कृषकों की मुख्य आय का साधन खेती है। हरित क्रांति के समय से बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए एवं आय की दृष्टि से उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। अधिक उत्पादन के लिये खेती में अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग करना पड़ता है जिससे सीमान्त एवं छोटे कृषकों के पास कम जोत में अत्यधिक लागत लग रही है और जल, भूमि, वायु और वातावरण भी प्रदूषित हो रहा है साथ ही खाद्य पदार्थ भी जहरीले हो रहे हैं।

वर्ष 2004-05 में पहली बार खेती पर राष्ट्रीय परियोजना की शुरूआत की गई। सन 2004-05 में जैविक खेती को करीब 42 हजार हेक्टेयर में अपनाया गया जिसका रकबा मार्च 2010 तक बढ़कर करीब 11 लाख हेक्टेयर हो गया। इसके अतिरिक्त 34 लाख हेक्टेयर जंगलों से फसल प्राप्त होती है। इस तरह कुल 45 लाख हेक्टेयर में जैविक उत्पाद उत्पन्न किये जा रहे हैं। भारत दुनिया में कपास का सबसे बड़ा जैविक उत्पादक है। पूरी दुनिया का जैविक कपास का 50 प्रतिशत उत्पादन भारत में किया जाता है।

जैविक खेती से लाभ : जैविक खेती किसान एवं पर्यावरण के लिए लाभ का सौदा है।

जैविक खेती से किसानों को कम लागत में उच्च गुणवत्तापूर्ण फसल प्राप्त हो सकती है। इसके अन्य लाभ निम्नलिखित हैं-

- जैविक खेती से भूमि की गुणवत्ता में सुधार होता है। रासायनिक खादों के उपयोग से भूमि बंजरपन की ओर बढ़ रही है। जैविक खादों से उसमें जिन तत्वों की कमी होती है, वह पूर्ण हो जाती है एवं उसकी गुणवत्ता में अभूतपूर्व वृद्धि हो सकती है।
- जैविक खादों एवं जैविक कीटनाशकों के उपयोग से जमीन की उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।
- जैविक खेती में सिंचाई की कम लागत आती है क्योंकि जैविक खाद जमीन में लम्बे समय तक नमी बनाए रखती है जिससे सिंचाई की आवश्यकता रासायनिक खेती की अपेक्षा कम पड़ती है।
- रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से जमीन के अंदर फसल की उत्पादकता बढ़ाने वाले जीवाणु नष्ट हो जाते हैं जिस कारण फसल की उत्पादकता कम हो जाती है। जैविक खाद का उपयोग कर पुनः उस उत्पादकता को प्राप्त किया जा सकता है।
- जैविक खेती से भूमि की जल धारण शक्ति में वृद्धि होती है। रासायनिक उर्वरक भूमि के अंदर के पानी को जल्दी सोख लेते हैं जबकि जैविक खाद जमीन की ऊपरी सतह में नमी बना कर रखती हैं जिससे जमीन की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
- जैविक खेती करने से किसान की खेती की लागत रासायनिक खेती की तुलना में करीब 80 प्रतिशत कम हो जाती है। इन दिनों रासायनिक उर्वरकों की कीमतें आसमान छू रही हैं जैविक खाद बहुत ही सस्ते दामों में तैयार हो जाती है।
- जैविक खेती से प्रदूषण में कमी आती है। रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों से पर्यावरण प्रदूषित होता है। खेतों के आसपास का वातावरण जहरीला हो जाता है जिससे वहाँ की वनस्पति, जानवर एवं पशु-पक्षी मरने लगते हैं। जैविक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग से वातावरण शुद्ध होता है।
- जैविक खेती से उत्पादों की गुणवत्ता रासायनिक खेती की तुलना में कई गुना बेहतर होती है एवं ऊँचे दामों में बाजार में बिकते हैं।

- स्वास्थ्य की दृष्टि से जैविक उत्पाद सर्वश्रेष्ठ होते हैं एवं इन के प्रयोग से कई प्रकार के रोगों से बचा जा सकता है।
- जैविक उत्पादों की कीमतें रासायनिक उत्पादों से कई गुना ज्यादा होती हैं जिससे किसानों की औसत आय में वृद्धि होती है।

जैविक खेती हेतु खाद का निर्माण

रासायनिक उर्वरक फसल के लिए उपयुक्त जीवाणुओं को नष्ट कर देता है। इन सूक्ष्म जीवाणुओं के तंत्र को विकसित करने के लिए जैविक खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए। जिससें फसल के लिए मित्र जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि, हवा का संचार, पानी को पर्याप्त मात्रा में सोखने की क्षमता में वृद्धि होती है। जैविक खाद बनाने की कुछ प्रमुख विधियाँ निम्न हैं :

नाडेप विधि

इस विधि में 12 फीट लम्बा, 5 फीट चौड़ा एवं 3 फीट गहरा गड्ढा खोद कर उसमे 75 प्रतिशत वनस्पति अवशेष, 20 प्रतिशत हरी घास व 5 प्रतिशत गोबर 200 लीटर पानी में डालकर अच्छे से मिलाते हैं। इस गड्ढे को चार इंच मोटी मिट्टी की परत से ढककर रखते हैं। 60 दिन बाद इस गड्ढे में कुछ छेद करके उनमें पीएसबी एवं एजेक्टोबेक्टर कल्चर गड्ढे के अंदर डालकर उन छिद्रों को बंद कर देते हैं। 15 से 20 क्विंटल प्रति एकड़ की दर से इस खाद का उपयोग करें। हर 21 दिन बाद इस खाद को डाल सकते हैं।

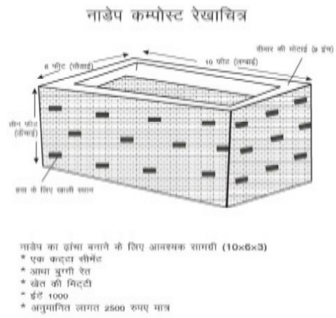

नाडेप कम्पोस्ट का रेखाचित्र

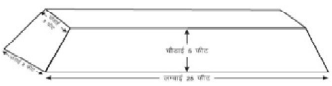

वर्मीकम्पोस्ट खाद

फसल में पोषक तत्वों का संतुलन बनाने में वर्मीकम्पोस्ट खाद की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। वर्मीकम्पोस्ट खाद को विशेष प्रकार के केंचुओं से बनाया जाता है। इन केचुओं के माध्यम से अनुपयोगी जैविक वानस्पतिक जीवांशों को अल्पावधि में मूल्यवान जैविक खाद का निर्माण किया जा सकता है इसके उपयोग से मृदा के स्वास्थ्य में आशातीत सुधार होता है एवं मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ती है जिससे फसल उत्पादन में स्थिरता के साथ गुणात्मक सुधार होता है। वर्मीकम्पोस्ट में नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म पोषक तत्व भी पाये जाते हैं। वर्मीकम्पोस्ट पोषक पदार्थों से भरपूर एक उत्तम जैव उर्वरक है। यह केंचुआ आदि कीड़ों के द्वारा वनस्पतियों एवं भोजन के कचरे आदि को विघटित करके बनाई जाती है। वर्मीकम्पोस्ट में बदबू नहीं होती है और मक्खी एवं मच्छर नहीं बढ़ते हैं तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता है।

तापमान नियंत्रित रहने से जीवाणु क्रियाशील तथा सक्रिय रहते हैं। वर्मीकम्पोस्ट डेढ़ से दो माह के अंदर तैयार हो जाता है। इसमें 2.5 से 3 प्रतिशत नाइट्रोजन, 1.5 से 2 प्रतिशत गंधक तथा 1.5 से 2 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है।

हरी खाद

हरी खाद उस सहायक फसल को कहते हैं, जिसकी खेती मुख्यतः भूमि में पोषक तत्त्वों को बढ़ाने तथा उसमें जैविक पदार्थों की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। प्रायः इस तरह की फसल को इसकी हरी स्थिति में ही हल चलाकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। हरी खाद से भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ती है और भूमि की रक्षा होती है। मृदा के लगातार दोहन से उसमें उपस्थित पौधों की बढ़वार के लिए आवश्यक तत्त्व नष्ट होते जा रहे हैं। इन की क्षतिपूर्ति हेतु व मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाए रखने के लिये हरी खाद एक उत्तम विकल्प है। बिना गले-सड़े हरे पौधे (दलहनी एवं अन्य फसलों अथवा उनके भाग) को जब मृदा की नत्रजन या जीवांश की मात्रा बढ़ाने के लिये खेत में दबाया जाता है तो इस क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं।

मटका खाद

गौमूत्र 10 लीटर, गोबर 10 कि.ग्रा., गुड़ 500 ग्राम, बेसन 500 ग्राम- सभी को मिलाकर मटके में भरकर 10 दिन सड़ाएं फिर 200 लीटर पानी में घोलकर गीली जमीन पर कतारों के बीच छिड़क दें। 15 दिन बाद इसका पुनः छिड़काव करें।

जीवामृत

यह एक लाभदायक सूक्ष्म जीवों का भंडार है। इसे आसानी से बनाया जा सकता है। इस खाद को बनाने के लिए गोबर की खाद 10 कि.ग्रा., गोमूत्र 5-10 लीटर, गुड़ 2 कि.ग्रा. प्रति 4 लीटर गन्ने का रस, दाल का आटा 2 कि.ग्रा. एवं उर्वर युक्त मिट्टी 1 कि.ग्रा. जहां किसी रसायन का उपयोग नहीं किया गया हो एवं पानी 200 लीटर, पात्र मिट्टी/पक्का/प्लास्टिक में मिश्रण बनाकर छाया में 24-48 घंटे तक रख देते हैं। तत्पश्चात प्रत्येक 15 दिनों के बाद भूमि में इसका छिड़काव करने से जीवामृत में लाभदायक सूक्ष्म जीव *(पी.एस.एम., स्यूडोमोनास, यीस्ट* एवं *मोल्ड)* भारी मात्रा में पाये जाते हैं। इसके उपयोग से भूमि में विद्यमान लाभदायक जीवाणु तथा केंचुओं की संख्या एवं खाद बनने की प्रक्रिया तेज हो जाती है।

पंचकाव्य

पंचकाव्य एक प्राचीन उत्पाद है, जो पौधा प्रणाली में वृद्धि को बढ़ावा और प्रतिरोधक क्षमता की वृद्धि करने में मदद करता है। इसमें 10 लीटर पानी, 7 कि.ग्रा. गाय का गोबर, 10 लीटर गौमूत्र, 3 लीटर गाय का दूध, 2 लीटर दही, 3 लीटर कोमल नारियल का पानी, 3 कि.ग्रा. गुड़, 1 कि.ग्रा. घी और 12 अच्छी तरह पके केले जैसे 9 घटक होते हैं।

बायोडायनमिक/माइक्रोब्स मेडिएटेड

इस खाद को *बायोडायनमिक* सूत्र 502-507 द्वारा विशेष विधि से खेत में उपलब्ध सूखे तथा हरी घास की पत्तियों एवं गोबर से तैयार किया जाता है। पोषक तत्वों के संतुलन के लिए कुछ अवयव जैसे बुझा चूना, रॉक फॉस्फेट, जिप्सम, बोनमील इत्यादि का प्रयोग करते हैं। परंपरागत खाद की तुलना में *बायोडायनमिक* खाद को कम मात्रा में खेत में डाला जाता है। इसमें एक सामान्य यूनिट का आकार 15×5×4 फुट होता है। इस खाद को तैयार होने में 90-100 दिन लगते हैं।

सींग खाद

मृत गाय के खोखले सींग में दुधारू गाय के ताजा गोबर को भरकर बसंत ऋतु में जमीन में गाड़ देते हैं। लगभग 6 महीने के बाद यह खाद तैयार हो जाती है। इसको फसल की विभिन्न अवस्थाओं में छिड़काव के लिए उपयोग में लाते हैं। इससे फसल की वृद्धि एवं जमीन की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है। इसको पानी (25 ग्राम/लीटर) में मिश्रित करके फसलों पर छिड़का जाता है।

बायोगैस स्लरी

बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 25 प्रतिशत ठोस पदार्थ रूपान्तरण गैस के रूप में होता है और 75 प्रतिशत ठोस पदार्थ का रूपान्तरण खाद के रूप में होता हैं। जिसे *बायोगैस स्लरी* कहा जाता है। दो घन मीटर के बायोगैस संयंत्र में 50 कि.ग्रा. प्रतिदिन या 18-25 टन गोबर एक वर्ष में डाला जाता है। उस गोबर में 80 प्रतिशत नमीयुक्त लगभग 10 टन *बायोगैस स्लरी* की खाद प्राप्त होती हैं। ये खेती के लिये अति उत्तम खाद होती है। इसमें 1.5 से 2 प्रतिशत नत्रजन, 1 प्रतिशत स्फुर एवं 1 प्रतिशत पोटाश होता है।

बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 20 प्रतिशत नाइट्रोजन अमोनियम नाइट्रेट के रूप में होता है। अतः यदि इसका तुरंत उपयोग खेत में सिंचाई नाली के माध्यम से किया जाए तो इसका लाभ रासायनिक खाद की तरह फसल पर तुरंत होता है और उत्पादन में 10-20 प्रतिशत बढ़त हो जाती है। स्लरी की खाद में नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश के अतिरिक्त, सूक्ष्म पोषक तत्व एवं ह्यूमस सभी होता हैं जिससे मिट्टी की संरचना में सुधार होता है तथा जल धारण क्षमता बढ़ती है। असिंचित खेती में सूखी खाद 5 टन एवं सिंचित खेती में 10 टन प्रति हेक्टेयर आवश्यक होगी। ताजी *गोबरगैस स्लरी* सिंचित खेती में 3-4 टन प्रति हैक्टर में लगेगी। सूखी खाद का उपयोग अन्तिम बख रनी के समय एवं *ताजी स्लरी* का उपयोग सिंचाई के दौरान करें। *स्लरी* के उपयोग से फसलों को तीन वर्ष तक पोषक तत्व धीरे-धीरे उपलब्ध होते रहते हैं।

बायोसोल

बायोसोल पादप पोषण का नया स्रोत है। इस विधि में जैविक अवशेष को अग्निहोत्र वातावरण में अग्निहोत्र भस्म एवं यंत्रम के साथ बनाया जाता है। तरल *बायोसोल* का प्रयोग पौधों एवं भूमि के स्वास्थय में वृद्धि हेतु किया जाता है। *बायोसोल वर्मीवाश* तथा अन्य जैव नियामक से अच्छा होता है क्योंकि कार्बनिक अवशेष का जैविक किण्वन अग्निहोत्र भस्म के साथ 30 दिनों तक किया जाता है। इसको बनाने के लिए वर्मीकम्पोस्ट 90 कि.ग्रा., गाय का गोबर 75 कि.ग्रा., गौमूत्र 100 लीटर, अग्नि होत्र भस्म 500 ग्राम, श्री यंत्र 1, अग्नि होत्र घोल 250 ग्राम एवं प्लास्टिक की टंकी 500 ग्राम लीटर क्षमता वाली जिसका ढक्कन अच्छी तरह से बंद किया जा सके। *बायोसोल* को सभी तरह की फसलों पर छिड़का जा सकता है। यह घोल फसल की उपज में वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण है।

जैव सक्रिय (सी.पी.पी.)

यह एक आधारभूत जैविक क्रियाशील पदार्थ है जिसको 'भूमि का *शैम्पू*' भी कहा जाता है। इसमें *बैक्टीरियल* एवं फफूंद परिवार के विभिन्न समूह तेजी से बढ़ते हैं। इसका प्रयोग बीजोपचार एवं भूमि उपचार तथा *बायोडायनमिक* खाद बनाने में किया जाता है। एक सामान्य यूनिट का आकार 2.1-5.1 फुट होता है। इस खाद को तैयार होने में 60 दिन लगते हैं। इसके लिए दूधारू गाय का गोबर 40 कि.ग्रा., *बेसाल्ट* पाउडर या *बेनोमिल* 100 ग्राम, अंडे के पिसे हुए छिलके 200 ग्राम बी डी नुस्खा (502-507 तक) गुड़ 50 ग्राम की आवश्यकतानुसार जरूरत होती है।

वर्मीवाश

वर्मीवाश से फसलों में बढ़ोतरी, विकास एवं उत्पादन में वृद्धि होती है। जिससे इनकी बीमारियों से लड़ने की क्षमता बढ़ती है। इसके बनाने के लिए नलका लगा हुआ 100-200 लीटर ड्रम में पहले मिट्टी कंकड़ एवं 2-3 से.मी. पतली परत बिछा देते हैं। जिससे नलका बंद न हो जाए। इसके ऊपर सूखी घास की तह 5-10 से.मी. बिछा दें, तत्पश्चात 15-20 दिन पुरानी गोबर की खाद डाल दें। उसके बाद उसमें 800-1000 केंचुए छोड़ दें एवं

इसके ऊपर जैविक अवशेष या घास की पत्तियों की तह बिछा दें। फिर पानी का छिड़काव करके किसी छायादार स्थान पर ड्रम रख दें। इसके ऊपर एक घड़ा पानी से भरकर रख दें। जिसमें एक ऐसा छेद करें कि ड्रम में पानी बूंद-बूंद टपकती रहे। ड्रम वाले घड़े से निकलने वाले धोवन को एकत्रित कर लें। इस घोल को 4-5 गुना पानी में घोलकर इसका फसल पर छिड़काव करें। अच्छे परिणाम के लिए वर्मीवाश एवं गौमूत्र की बराबर मात्रा में मिलाकर 10 गुना पानी में मिलाकर छिड़काव करते हैं।

पंचगव्य

यह एक महत्वपूर्ण जैव पदार्थ है जिसे गाय का गोबर, गौमूत्र, दूध, दही और घी से तैयार किया जाता है। पंचगव्य एक उत्प्रेरक के जैसे कार्य करता है। इसके प्रयोग से पौधों में वृद्धि, सूखारोधी क्षमता, कीट एवं रोग रोधक क्षमता एवं फसल की गुणवत्ता में वृद्धि होती है। 3 प्रतिशत पंचगव्य का घोल बीज छोटे पौधों एवं वानस्पतिक वृद्धि के लिए लाभकारी होता है।

बीजामृत

इसको बनाने के लिए 5 कि.ग्रा. गाय का गोबर, 5 लीटर गौमूत्र, 1 लीटर गाय का दूध एवं 250 ग्राम बुझा चुना को 100 लीटर ड्रम में पानी में अच्छी तरह से मिलाएँ और बीज को छाया में सुखाएँ। यह प्रक्रिया बीज बोने से पहले करनी चाहिए।

कम्पोस्ट टी (खाद पेय)

यह एक तरल खाद है। इसको फसल की विभिन्न अवस्थाओं में बढ़ोत्तरी के लिए खेत में बीमारियों एवं कीटों से बचाव हेतु छिड़का जाता है। इसके लिए पूर्ण रूप से तैयार कम्पोस्ट खाद 5.0 कि.ग्रा., सूती कपड़ा 1 मीटर (पोटली बनाने के लिए), रस्सी आवश्यकतानुसार ड्रम या बाल्टी (15 लीटर क्षमता की), और पानी 10 लीटर की आवश्यकता पड़ती है। कम्पोस्ट को सूती कपड़े में बांध कर रस्सी की सहायता से पानी से भरी बाल्टी इस ड्रम में लटका देते हैं। 1 सप्ताह तक सुबह शाम प्रतिदिन कम्पोस्ट की भरी पोटली को हिलाएँ जिससे पोषक तत्व एवं सहयोगी जीवाणु कम्पोस्ट से निकलकर पानी में आ जाते हैं। इस प्रकार 7-10 दिन में यह घोल फसलों के छिड़काव के लिए तैयार हो जाता है। इस घोल को 7-8 गुना पानी में मिलाकर प्रयोग करते हैं।

जैविक कीट एवं व्याधि नियंत्रण

- 5 लीटर देशी गाय के मट्ठे में 5 कि.ग्रा. नीम के पत्ते डालकर 10 दिन तक सड़ायें, बाद में नीम की पत्तियों को निचोड़ लें। इस नीमयुक्त मिश्रण को छानकर 150 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ की दर से समान रूप से फसल पर छिड़काव करें। इससे इल्ली व माहू का प्रभावी नियंत्रण होता है।

जैविक हरी खादों में पोषक तत्व (प्रतिशत में)

Øekad	tSfod [kkn	ikVk'k	QkLQkjl	ukbVªkstu
1	वर्मीकम्पोस्ट	0.67	2.20	1.60
2	कम्पोस्ट	1.07	1.92	1.24
3	प्रेसमड	1.31	1.34	1.59
4	जलकुम्भी	2.30	1.00	2.00
5	मुर्गीखाद	2.35	2.93	2.87
6	नीमकेक	1.4	1.00	5.2
7	सनफ्लावर	1.9	2.2	7.9
8	विनौला	1.6	1.8	2.5

- 5 लीटर मट्ठे में, 1 कि.ग्रा. नीम के पत्ते व धतूरे के पत्ते डालकर, 10 दिन सड़ने दें। इसके बाद मिश्रण को छानकर इल्लियों का नियंत्रण करें।
- 5 कि.ग्रा. नीम के पत्ते, 3 लीटर पानी में डालकर उबालें। जब आधा रह जाए तब उसे छानकर 150 लीटर पानी में घोल तैयार करें। इस मिश्रण में 2 लीटर गौ-मूत्र मिलावें। अब यह मिश्रण एक एकड़ की दर से फसल पर छिड़कें।
- आधा कि.ग्रा. हरी मिर्च व लहसुन पीसकर 150 लीटर पानी में डालकर छान लें तथा एक एकड़ में इस घोल का छिड़काव करें।
- मारूदाना, तुलसी (श्यामा) तथा गेदें के पौधे फसल के बीच में लगाने से इल्ली का नियंत्रण होता हैं।
- गौमूत्र, कांच की शीशी में भरकर धूप में रख सकते हैं। जितना पुराना गौमूत्र होगा उतना अधिक असरकारी होगा। 12-15 मि.मी. गौमूत्र प्रति लीटर पानी में मिला कर *स्प्रेयर पंप* से फसलों में बुआई के 15 दिन बाद, प्रत्येक 10 दिवस में छिड़काव करने से फसलों में रोग एवं कीड़ों में प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है जिससे प्रकोप की संभावना कम रहती है।
- 100-150 मि.ली. छाछ 15 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने से कीट-व्याधि का नियंत्रण होता है। यह उपचार सस्ता, सुलभ, लाभकारी होने से कृषकों में अत्यन्त लोकप्रिय है।

जैविक खेती से उत्पन्न फसल न केवल स्वास्थ्य के लिए वरन पर्यावरण के लिए भी अनुकूल होती है। जैविक कृषि पद्धति से उत्पादित शुद्ध अनाज, सब्जी, फलों का सेवन करने से देश के लाखों करोड़ों रुपये (स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च) की बचत की जा सकती है। जैविक कृषि पद्धति से सामाजिक समरसता बढ़ाकर अप्रत्यक्ष रूप से देश के आर्थिक विकास में सहभागी बना जा सकता है।

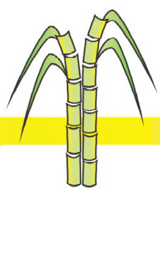

e`nk dh moZjk 'kfä ,o vf/kd QlyksRiknu gsrq gjh [kkn dh mi;ksfxrk

vke çdk'k[1], vt; dqekj lkg[1], vf'ouh nÙk ikBd[1], cã çdk'k[1] ,o iYyoh ;kno[2]
[1]Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku laLFkku, y[kuÅ
[2]pUæ Hkkuq xqIrk —f"k egkfo|ky;, cD'kh dk rkykc, y[kuÅ

मृदा स्वास्थ्य को टिकाऊ बनाए रखने के लिए आवश्यक है कि खेत में हरी खाद, गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट व जैव उर्वरक आदि को कृषि प्रणाली में समावेश किया जाए। हरी खाद का प्रयोग खेत की उर्वरता व उत्पादकता वृद्धि हेतु वरदान साबित हो सकता है। हरी खाद भूमि की उर्वरता व उत्पादकता बढ़ाने हेतु सस्ता जैविक साधन है। हरी खाद की फसलों को उगाकर उनकी उचित वानस्पतिक वृद्धि की अवस्था में जुताई करके खेत में मिला दिया जाता है जो खेत में सड़ने-गलने के बाद भौतिक, रासायनिक व जैविक दशा में सुधार करती है जिससे भूमि की उर्वरता व उत्पादकता में वृद्धि होती है।

अपने सीमित संसाधनों का समुचित उपयोग करके किसान एक फसली, द्विफसली अथवा विभिन्न फसल चक्र अपना रहे हैं जिससे मिट्टी का लगातार दोहन हो रहा है जिससे उसमें उपस्थित पौधों की बढ़वार हेतु आवश्यक पोषक तत्व समाप्त होते जा रहे हैं। इन पोषक तत्वों की क्षतिपूर्ति करने हेतु किसानों द्वारा विभिन्न प्रकार के उर्वरकों एवं खादों का उपयोग किया जाता है। उर्वरक द्वारा मिट्टी में केवल आवश्यक पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, जस्ता इत्यादि की आपूर्ति की जाती है परंतु मृदा की संरचना, वायु संचार, मृदा की जल धारण क्षमता एवं उसमें उपस्थित सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता बढ़ाने में रासायनिक उर्वरक कोई भूमिका नहीं निभाते। अतः उपरोक्त कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए हरी खाद का प्रयोग परम आवश्यक है। मृदा की उर्वरा शक्ति, जीवाणुओं की मात्रा एवं उनकी क्रियाशीलता पर निर्भर रहती है क्योंकि अनेकों रासायनिक क्रियाओं हेतु सूक्ष्म-जीवों की आवश्यकता रहती है। अधिकाधिक जीवांश मृदा ही जीवित अथवा सक्रिय मृदा कहलाती है। जीवाणुओं का भोजन भी प्रायः कार्बनिक पदार्थ ही होता है। इनकी अधिकता से मृदा की उर्वरा-शक्ति पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। मात्र कार्बनिक खादों जैसे गोबर की खाद, हरी खाद, जीवाणु खाद द्वारा ही मृदा की क्रियाशीलता को स्थायी रूप से बढ़ाया जा सकता है। इन खादों में हरी खाद का महत्वपूर्ण स्थान है। भूमि में पोषक तत्वों को बढ़ाने एवं उसमें जैविक पदार्थों की आपूर्ति करने हेतु सहायक फसल की खेती को 'हरी खाद' कहा जाता है। इस प्रकार की फसलों को हरी अवस्था में ही मृदा में मिला दिया जाता है। बिना सड़े-गले दलहनी अथवा अदलहनी पौधों की खड़ी फसल को अथवा उनके भाग को जब मिट्टी की नाइट्रोजन या जीवांश की मात्रा बढ़ाने हेतु उपयुक्त समय पर ट्रैक्टर द्वारा हल चलाकर खेत की मिट्टी में दबाया जाता है तो इस क्रिया को हरी खाद देना कहते हैं। मृदा की उर्वरा शक्ति को अक्षुण रखने हेतु हरी खाद एक सस्ता एवं प्रभावी विकल्प है। दलहनी फसलों की जड़ों में *राइजोबियम* की गांठों के पूर्ण विकसित होने, तने में कठोर रेशे बनने से पूर्व तथा पौधों में पुष्पन अवस्था आरंभ होने से पूर्व ही हरी खाद को खेत की मिट्टी में दबा दिया जाता है।

हरी खाद बनाने हेतु उपयुक्त फसल के आवश्यक गुण

आदर्श हरी खाद में निम्नलिखित गुण होने चाहिए :

- फसल की तीव्र व अधिक वानस्पतिक वृद्धि
- फसलों के अधिकांश वानस्पतिक भागों का मुलायम व रेशेरहित होना
- मिट्टी को भुरभुरा बना सकने वाली गहरी जड़ें
- नाइट्रोजन की अधिक मात्रा में स्थिरीकरण करने हेतु फसल की जड़ों में अधिक ग्रंथियां
- फसल को उगाने में न्यूनतम लागत का लगना
- फसल की सिंचाई आवश्यकता का कम से कम होना
- फसल को कीटों व रोगों से बचाने में कम से कम खर्च होना
- न्यूनतम समय में अधिकतम हरी खाद बना सकने की क्षमता
- अधिक तापमान व वर्षा जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी फसल की उगने की क्षमता
- खरपतवारों से फसल की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ना
- उपलब्ध संसाधनों एवं वातावरण में अधिकतम उपज प्रदान करना

हरी खाद बनाने हेतु उपयुक्त फसलें

ढैंचा, बरसीम, सेंजी, लोबिया, मूंग, उर्द, ग्वार कुछ ऐसी मुख्य फसलें हैं जिनका प्रयोग करके हरी खाद बनाई जा सकती है। उपरोक्त फसलों में ढैंचा व बरसीम हरी खाद बनाने में प्रमुखता से प्रयोग की जाती हैं। ढैंचा जिसका वैज्ञानिक नाम *सेस्बेनिया*

एजिप्टकाए, एस. रोस्ट्रेटा तथा *एस. एक्वेलेटा* है, अपने शीघ्र खनिजीकरण *पैटर्न,* नाइट्रोजन की अधिक मात्रा के कारण बाद में बोई गई मुख्य फसल की उत्पादकता पर उल्लेखनीय प्रभाव डालने में सक्षम है।

दलहनी फसलें

दलहनी या फलीदार फसलें अपनी जड़ों की ग्रंथियों में उपस्थित राईजोबियम जीवाणु द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन का मृदा में स्थिरीकरण करती हैं। इसी कारण ये फसलें हरी खाद बनाने के लिए अधिक उपयुक्त होती हैं। इस विशिष्ट गुण के साथ ही साथ, इन फसलों की अल्पावधि तथा गहरी जड़ें एवं अच्छी वानस्पतिक वृद्धि भी दलहनी फसलों को हरी खाद बनाने के लिए अधिक उपयुक्त बनाती हैं।

सनई

उत्तर भारत में हरी खाद के लिए प्रायः सनई का ही प्रयोग किया जाता है। इस फसल को बुवाई के 6-8 हफ्तों पश्चात मिट्टी में पलट दिया जाता है जिससे लगभग 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 280 कि.ग्रा. वानस्पतिक हरा पदार्थ प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाता है।

ढैंचा

ढैंचा हरी खाद के रूप में प्रयुक्त होने वाली प्रमुख फसल है। मृदा की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के साथ-साथ ढैंचा की फसल ऊसर भूमि के सुधार के कार्य में भी लायी जाती है। इसी फसल को बुवाई के 45 दिनों पश्चात मिट्टी में पलट दिया जाता है जिससे लगभग 75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाती है।

ग्वार

भारत के उत्तर पश्चिमी भागों में जहाँ प्रायः कम बरसात होती है, हरी खाद के लिए ग्वार की फसल का प्रयोग किया जाता है। इस फसल को मिट्टी में पलट देने से लगभग 65 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाती है।

लोबिया

अच्छी वानस्पतिक बढ़वार के कारण लोबिया की फसल को खरीफ ऋतु में हरी खाद बनाने के लिए अधिक प्रयुक्त किया जाता है। इस फसल को मिट्टी में पलट देने से लगभग 60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 1500 कि.ग्रा. वानस्पतिक हरा पदार्थ प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाता है।

अदलहनी फसलें

यद्यपि अदलहनी फसलें मृदा में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण तो नहीं करती हैं परंतु विलेय नाइट्रोजन का संरक्षण जरूर करती हैं एवं मिट्टी में जीवांश की मात्रा भी बढ़ाती हैं जिससे मृदा की दशा में सुधार होता है।

हरी खाद बनाने हेतु उपयुक्त कुछ प्रमुख फसलों की बुवाई का समय, बीज दर, हरे पदार्थ की मात्रा एवं उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा

हरी खाद हेतु उपयुक्त कुछ प्रमुख फसलों की बुवाई का समय, बीज दर, हरे पदार्थ की मात्रा एवं उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा सारणी 1 में दर्शाया गया है।

सारणी 1: हरी खाद बनाने हेतु उपयुक्त फसलों की बुवाई का समय, बीज दर, हरे पदार्थ की मात्रा एवं उपलब्ध नाइट्रोजन की मात्रा

gjh [kkn cukus gsrq Qly	cqokbZ dk le;	cht dh ek=k ¼fd-xzk-@gs-½	Qly ls çkIr gjs inkFkZ dh ek=k ¼Vu@gs-½	ukbVªkstu dh miyC/k ek=k ¼çfr'kr½	dqy çkIr ukbVªkstu ¼fd-xzk-@gs-½
[kjhQ Qlysa					
सनई	अप्रैल–जुलाई	80–100	18–28	0.43	60–70
ढैंचा	अप्रैल–जुलाई	80–100	20–25	0.42	84–105
लोबिया	अप्रैल–जुलाई	45–55	15–18	0.49	74–88
उर्द	जून–जुलाई	20–22	10–12	0.41	40–49
मूंग	जून–जुलाई	20–22	8–10	0.48	38–48
ज्वार	अप्रैल–जुलाई	30–40	20–25	0.34	68–85
jch Qlysa					
सेंजी	अक्टूबर–दिसंबर	25–30	26–29	0.51	120–135
बरसीम	अक्टूबर–दिसंबर	20–30	16	0.43	60
मटर	अक्टूबर–दिसंबर	80–100	21	0.36	67

हरी खाद को कैसे तैयार करें?

असिंचित अवस्था में मानसून आने के तुरंत बाद अच्छी तरह से खेत तैयार करके हरी खाद की फसल के बीज बोने चाहिए। हरी खाद बनाने के लिए अप्रैल-मई के महीनों में गेहूँ की कटाई के उपरांत खेत की सिंचाई कर लें। पानी भरे खेत में 50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से ढैंचा का बीज छिटक दें। फसल बोने के समय 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 40-60 कि.ग्रा. गंधक प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। आवश्यकतानुसार 15 से 20 दिनों में फसल की हल्की सिंचाई कर लें। 20 दिनों की अवस्था पर 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से यूरिया के प्रयोग से फसल के पौधों की जड़ों में गाँठे बनने लगती हैं। 55 से 60 दिनों की अवस्था पर फसल की बढ़वार अच्छी हो जाने के उपरांत व फली आने से पूर्व हल या *डिस्क हैरो* द्वारा हरी खाद को खेत में मिला दिया जाता है। इस प्रकार 10 से 15 टन प्रति हेक्टेयर हरी खाद तैयार हो जाती है।

सारणी 2 : विभिन्न मृदाओं हेतु उपयुक्त हरी खाद की फसलें

feêh	Qly:
उचित जल निकास के गुण वाले बलुई दोमट मिट्टी	मूंग, उर्द, ग्वार, सनई एवं ढैंचा
लवणीय एवं क्षारीय मिट्टी	ढैंचा एवं सनई
शुष्क क्षेत्रों की हल्की बलुई दोमट मिट्टी	उर्द, मूंग, ग्वार एवं लोबिया

यदि खेत में 5-6 से.मी. पानी भरा रहता है तो पलटने व मिट्टी में दबाने में कम मेहनत लगती है। खेत की जुताई उसी दिशा में करनी चाहिए जिसमें पौधों को गिराया गया है। इसके पश्चात खेत में 8-10 दिनों तक 4-6 से.मी. पानी भरे रखना चाहिए जो पौधों के शीघ्र सड़ने में सहायक होता है। पौधों को दबाते समय खेत में पानी की कमी होने एवं देर से जुताई करने की अवस्था में पौधों के सड़ने में अधिक समय लगता है। हरी खाद के प्रयोग के बाद बोयी गई फसल में आधार नाइट्रोजन के प्रयोग की आवश्यकता कम होती है। यह विधि उस खेत में ही अपनाई जाती है जहाँ जल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। पर्याप्त मात्रा में जल की उपलब्धता न होने की दशा में हरी खाद की फसल एक क्षेत्र में उगाकर उसकी पत्तियों व तने को दूसरे क्षेत्र में ले जाकर दबाते हैं।

हरी खाद वाली फसल को खेत में मिलाने का सही समय

सिंचित अवस्था में हरी खाद हेतु बोयी गई फसल 55 से 60 दिन बाद जोत कर मृदा में मिलाने के लिए उपयुक्त हो जाती है। इस अवस्था पर पौधों की लंबाई व हरा शुष्क अंश अधिकतम होता है। इस अवस्था पर तना नरम व मुलायम होता है जो सुगमता से मृदा में सड़कर विघटित हो जाता है। कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात कम होने के कारण इस अवस्था में पौधे रसीले व जैविक पदार्थों से सम्पन्न होते हैं। इस अवस्था पर नाइट्रोजन की मात्रा की उपलब्धता अत्यंत अधिक होती है। यदि ऊपर वर्णित 55 से 60 दिनों की अवस्था पर हरी खाद के पौधों को मृदा में न मिलाया जाए तो धीरे-धीरे कार्बन : नाइट्रोजन अनुपात बढ़ता जाता है।

हरी खाद के प्रयोग से लाभ

- हरी खाद के प्रयोग से मृदा की भौतिक संरचना में सुधार होता है।
- हरी खाद के प्रयोग से मृदा की उर्वरता अक्षुण रहती है।
- हरी खाद केवल नाइट्रोजन व कार्बनिक पदार्थों का ही स्रोत नहीं होती अपितु इससे मृदा में कई पोषक तत्व भी उपलब्ध हो जाते हैं। एक अध्ययन में एक टन ढैंचे के शुष्क पदार्थ से नाइट्रोजन 26.2 कि.ग्रा., फास्फोरस 7.3 कि.ग्रा., पोटाश 17 कि.ग्रा., गंधक 1.9 कि.ग्रा., कैल्शियम, 1.4 कि.ग्रा., मैगनीशियम 1.6 कि.ग्रा., 25 पीपीएम जस्ता, लौह तत्व 105 पीपीएम तथा तांबा 7 पीपीएम पाया गया है (सारिणी 3)।
- हरी खाद टिकाऊ खेती में उल्लेखनीय योगदान देता है।
- हरी खाद के प्रयोग से फसलों में लगने वाले मृदाजनित रोगों में कमी आती है।
- हरी खाद का प्रयोग सूक्ष्म-जीवाणुओं की संख्या एवं क्रियाशीलता में वृद्धि करता है जिससे उत्पादन क्षमता भी बढ़ती है।
- हरी खाद के प्रयोग से मृदा की संरचना में सुधार होने से फसल की जड़ों का फैलाव बेहतर होता है।
- हरी खाद की फसल में उपयोग में लायी गई दलहनी कुल की फसलों की जड़ों पर गांठों में *राइजोबियम* नामक जीवाणु निवास करते हैं जो वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन को अपनी गांठों में स्थिरीकरण कर एकत्रित कर लेते हैं। हरी खाद के लिए उपयोग में लाए गए पौधों को जब खेत में हल चलाकर दबाया जाता है तो उनके सड़ने-गलने से इन पौधों का विघटन हो जाता है तथा उनकी जड़ों की गांठों में एकत्रित नाइट्रोजन जैविक रूप में मृदा में वापस मिल जाती है जिससे मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है तथा हरी खाद के प्रयोग के बाद बोयी गई फसल में नाइट्रोजन की कम मात्रा का ही प्रयोग करना पड़ता है तथा मृदा की उर्वरा शक्ति भी बढ़ जाती है।
- पौधों के मृदा में विघटित होने से मृदा में वायु संचार बढ़ता है तथा मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है। हरी खाद के सड़ने-गलने से निकलने वाली कार्बन डाईऑक्साइड गैस मृदा में से आवश्यक पोषक तत्वों को मुक्त करवाकर मुख्य फसल के पौधों को आसानी से उपलब्ध कराने में सहायक होती है। इस प्रकार हरी खाद का प्रयोग मृदा में विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करता हैं।
- हरी खाद के प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग में बचत होती है।
- मृदा की अम्लीयता/क्षारीयता में सुधार होता है।
- हरी खाद के प्रयोग से मृदा क्षरण भी कम होता है।
- हरी खाद का प्रयोग खरपतवारों की वृद्धि रोकने में सहायक होता है। हरी खाद दबाने के बाद बोयी गई धान की फसल में एकिनोक्लोयाया जाति के खरपतवार हरी खाद के *एलीलोकेमिकल* प्रभाव के कारण नगण्य हो जाते हैं।
- हरी खाद के प्रयोग से धान, गेहूँ, गन्ना, आलू व कपास जैसी विभिन्न फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

thok.kq [kkn % e`nk esa iks"kd rRo izca/ku dk mÙke lk/ku

fnO;k lkguh[1], lxhrk JhokLro[1], lat; vjksMk[2] ,oa jk?kosUnz JhokLro[1]
[1]HkkÑvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku, y[kuÅ
[2]HkkÑvuqi&dsUnzh; e`nk yo.krk vuqla/kku laLFkku, {ks=h; dsUnz, y[kuÅ

फसल उत्पादन में पोषक तत्वों का अति महत्वपूर्ण स्थान है। इन पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए रासायनिक उर्वरक, देशी खाद, जीवाणु खाद, कम्पोस्ट आदि का उपयोग मुख्य रूप से किया जाता है।

फसलों द्वारा भूमि से लिए जाने वाले प्राथमिक मुख्य पोषक तत्वों नत्रजन, फॉसफोरस एवं पोटाश में से नत्रजन का सर्वाधिक अवशोषण होता है क्योंकि इस तत्व की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। इतना ही नहीं भूमि में डाले गए नत्रजन का 40-50 प्रतिशत ही फसल उपयोग कर पाती है और शेष 50-60 प्रतिशत भाग या तो पानी के साथ बह जाता है या वायुमंडल में *डिनाइट्रीफिकेशन* से मिल जाता है या जमीन में ही रह जाता है। अन्य पोषक तत्वों की तुलना में भूमि में उपलब्ध नत्रजन की मात्रा सबसे न्यून स्तर पर होती है। यदि प्रति किलो पोषक तत्व की कीमत की ओर ध्यान दें तो नत्रजन ही सबसे अधिक कीमती है।

उर्वरकों की बढ़ती कीमतों, मांग एवं पूर्ति के बीच का अंतर, छोटे व सीमांत किसानों की सीमित क्रय शक्ति एवं ऊर्जा की कमी जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं के कारण आवश्यक है कि पादप पोषण के कुछ ऐसे सार्थक एवं सस्ते वैकल्पिक स्रोत हों, जो सस्ते होने के साथ-साथ, पर्यावरण मैत्री भी हों। ऐसे में जीवाणु खाद ही सबसे उत्तम विकल्प दिखाई पड़ता है।

आज पूरे विश्व में जैविक खेती को रासायनिक खेती का विकल्प माना जा रहा है। साठ के दशक में हरित क्रांति के फलस्वरूप अन्न उत्पादन में देश आत्मनिर्भर हुआ। परंतु इसके दुष्परिणाम भी सामने आए जैसे मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा में कमी, मृदा क्षारीयता, मृदा उर्वरता में गिरावट, रसायनों के अवशेष के फलस्वरूप मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण तथा मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव।

इन सभी समस्याओं से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय जैविक खेती ही है। विभिन्न प्रकार की जैविक खाद (केंचुआ खाद, गोबर खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष आधारित खाद) तथा जीवाणु खाद का प्रयोग अति आवश्यक हो जाता है जिससे फसल उत्पादन तथा उत्पादकता में गिरावट न हो तथा मृदा की उर्वरा शक्ति बनी रहे।

पादप पोषण में नत्रजन तथा फॉस्फोरस दो महत्वपूर्ण पोषक तत्व है। नत्रजन वायुमंडल में प्रचुर मात्रा में (लगभग 79 प्रतिशत) उपलब्ध है परंतु पौधे इसका उपयोग तभी कर सकते हैं जब इस नत्रजन को पौधों के उपयोगी स्वरूप में बदल दिया जाए जोकि रासायनिक क्रियाओं द्वारा या विशिष्ट तरह के सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा ही सम्पन्न किया जा सकता है।

नत्रजन के बाद फॉस्फोरस दूसरा मुख्य पादप पोषक तत्व है जिसकी आपूर्ति हेतु पृथ्वी के गर्भ में उपलब्ध सीमित स्रोतों का खनन कर प्राप्त रॉक फॉस्फेट से फॉस्फोरस युक्त उर्वरकों का निर्माण किया जाता है। फॉस्फोरस उर्वरकों की उपयोग दक्षता बहुत ही कम होती है। क्योंकि मृदा में फॉस्फोरस अचल रूप में होता है और क्रिया के फलस्वरूप स्थिर हो जाता है।

भारतीय कृषि में जीवाणु खाद का महत्वपूर्ण स्थान है एवं इनका अधिक से अधिक मात्रा में प्रयोग कर उर्वरकों की खपत कम की जा सकती है और पर्यावरण को होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। फसल उत्पादन में लागत में कमी की जा सकती है एवं फॉस्फोरस उर्वरकों की उपयोग क्षमता बढ़ाई जा सकती है।

जीवाणु, कवक, नील हरित शैवाल इत्यादि के सक्रिय प्रभावी विभेद की पर्याप्त संख्याओं के उत्पाद को मुख्यतः जीवाणु खाद कहते हैं। जीवाणु खाद मृदा में मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवों का वैज्ञानिक तरीकों से चुनाव कर प्रयोगशालाओं में तैयार की जाती है। वायुमंडल की नत्रजन व भूमि की फॉसफोरस को पौधों को उपलब्ध कराने हेतु जीवाणुओं को जीवित अवस्था में लिग्नाइट व कोयले के चूरे में मिलाकर जीवाणु खाद तैयार की जाती है। जीवाणु खाद में इन लाभदायक जीवाणुओं की संख्या एक ग्राम में दस करोड़ से अधिक रखी जाती है। ये जीवाणु निम्न प्रकार के होते हैं :

***राइजोबियम* :** यह एक मृदा जीवाणु है जो दलहनी फसलों की जड़ों में गुलाबी रंग की गांठे बनाकर रहते हैं तथा वायुमण्डल से नत्रजन लेकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसके द्वारा मृदा में स्थिर की गई नत्रजन की मात्रा जीवाणु का प्रकार, पौधे की किस्म, मृदा गुण, वातावरण एवं अन्य क्रियाओं पर निर्भर करती है।

इसके द्वारा मृदा में स्थिर की गई नत्रजन कार्बनिक अवस्था में होती है उसका नुकसान बहुत कम होता है एवं पौधे ज्यादा क्षमता से उसका उपयोग कर पाते हैं।

एजोटोबैक्टर : यह जीवाणु खाद बिना दलहन वाली फसलों में उपयोग की जाती है। यह जमीन में स्वतंत्र रूप से रहकर वायुमण्डल की नत्रजन को ग्रहण कर भूमि में छोड़ते हैं जो पौधों को उपलब्ध होती है। मृदा में इनकी संख्या में बढ़ोत्तरी मृदा में पाये जाने वाले जैविक कार्बन पर निर्भर करती है।

फॉस्फेट विलयक जीवाणु (पी.एस.बी.) : फसलों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने हेतु मुख्यतया डी.ए.पी. एवं सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग किया जाता है। जिसका एक बहुत बड़ा भाग जमीन में अघुलनशील हो जाता है जिसे पौधे आसानी से ग्रहण नहीं कर पाते हैं। जीवाणु खाद पी.एस.बी. इसी अघुलनशील फॉस्फोरस को पौधों को घुलनशील बनाकर उपलब्ध कराता है।

एजोस्पाइरिलम कल्चर : यह जीवाणु खाद मृदा में पौधों के जड़ क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाले जीवाणुओं का एक प्रकार है जो वायुमंडल की नत्रजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। यह जीवाणु खाद खरीफ के मौसम में धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल के लिए विशेष उपयोगी है। इसके अलावा गेहूँ व जौ की फसल के लिए भी लाभकारी है। इसके प्रयोग से फसल के उत्पादन में 10-12 प्रतिशत वृद्धि होती है तथा 15 से 20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर नत्रजन की बचत होती है।

नील हरित शैवाल : ये शैवाल मिट्टी के सदृश्य सूखी पपड़ी के रूप में होते हैं तथा धान की फसल के लिए, जिसमें पानी भरा रहता हैं विशिष्ट लाभकारी होते हैं। ये सूक्ष्म जीवाणु 20-30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर उपलब्ध कराते हैं तथा फसल की 10-15 प्रतिशत तक उपज में बढ़ोत्तरी करते हैं।

जीवाणु खाद के लाभ

- ये जीवाणु फसलों की पोषक तत्वों की जरूरत को पूरा करके उनका उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु मृदा में मौजूद फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों के लिए उपलब्ध कराते हैं।
- ये सूक्ष्म जीव कुछ मात्रा में सूक्ष्म आवश्यक पोषक तत्वों जैसे जस्ता, ताँबा, गंधक, लोहा, बोरॉन, कोबाल्ट तथा मोलिब्डेनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु खेती में शेष कार्बनिक अपशिष्ट पदार्थों को सड़ाकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाए रखते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु प्रत्येक मौसम में प्रति फसल लगभग 20-30 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर तथा फॉस्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु प्रति हेक्टेयर लगभग 30-40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति फसल उपलब्ध कराते हैं।
- ये सूक्ष्म जीवाणु पादप वृद्धि करने वाले हार्मोन्स, प्रोटीन, विटामिन तथा अमीनो अम्ल का उत्पादन करते हैं तथा यह सूक्ष्म जीवाणु मृदा में पनप रही रोगजनक फफूंद नष्ट कर लाभकारी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करते हैं।
- इन सूक्ष्म जीवाणुओं के प्रयोग से लगभग 15-20 प्रतिशत तक फसलोत्पादन बढ़ता है और उत्पाद की गुणवत्ता में भी बढ़ोत्तरी होती है।
- इन सूक्ष्म जीवाणओं के प्रयोग से मृदा की जलधारण क्षमता तथा उर्वरा शक्ति बढ़ती है जिससे फसलोत्पादन में भी वृद्धि होती है।

जीवाणु खाद उपयोग की विधि

बीजोपचार द्वारा : आवश्यकतानुसार पानी में 150 ग्राम गुड़ 1 लीटर पानी के हिसाब से घोलकर गर्म करें। इसे ठंडाकर इसमें जीवाणु खाद की मात्रा (1 हेक्टेयर क्षेत्रफल के अनुसार) घोलें। अब इस घोल को एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए आवश्यक बीज की मात्रा पर छिड़कते हुए हल्के हाथ से बीजों को पलटते जाए। जिससे बीजों के ऊपर जीवाणु खाद की एक परत चढ़ जाए। अब इन बीजों को किसी छायादार स्थान पर सुखाकर शीघ्र ही बुआई करनी चाहिए।

जड़ों के उपचार द्वारा : फल, सब्जियां एवं अन्य पौधों की जड़ों को रोपाई से पूर्व जीवाणु खाद के घोल में लगभग 30 मिनट तक डुबोकर रखने पर बाद में इनकी भूमि में रोपाई करनी चाहिए।

भूमि उपचार : जीवाणु खाद को नम मिट्टी में अच्छी तरह से मिलाकर पूरे खेत में सायंकाल के समय छिटककर सिंचाई कर देनी चाहिए अथवा पानी के साथ मिलाकर घोल तैयार करें तथा फिर इसे सिंचाई के जल के साथ मिलाकर खेत में पहुचाएं।

जीवाणु खाद उपयोग में सावधानियां

- जीवाणु खाद को अत्यधिक ठंड, गर्मी तथा धूप से बचाकर रखना चाहिए।
- जीवाणु खाद को पैकेट पर लिखी फसल के लिए ही उपयोग करें तथा पैकेट पर लिखी अंतिम तिथि से पूर्व उपयोग करें।
- जीवाणु खाद को रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशकों के साथ नहीं मिलाना चाहिए।
- जीवाणु खाद को गुड़ के गर्म घोल में नहीं मिलाना चाहिए अन्यथा जीवाणु मर जाऐगें।
- जीवाणु खाद से उपचारित बीज को छाया में सुखाना चाहिए।
- बीज को कवकनाशी, कीटनाशी एवं जीवाणु खाद सभी से उपचारित करना हो तो इसी क्रम में उपचारित करना चाहिए।
- जैव उर्वरक किसी प्रमाणित संख्या से क्रय करें अन्यथा उसके जीवाणु क्रियाशील नहीं होते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Qly vo'k"k icU/ku e`nk LokLF; d fy, ojnku

jru vk;k[1]] lkue vk;k[2] ,o vkj-,y- vk;k[3]

[1]df"k foKku dUnz] cgjkbp

[2]dky t vkQ ,lykbM ,t d'ku ,.M gYFk lkbUl] ejB

[3]df"k foHkkx] dkui j ngkr

मृदा फसलोत्पादन के लिए एक भौतिक माध्यम है, इसके सुदृढ़ीकरण के लिए कई प्रयास किये जाते हैं, जिससे मृदा का स्वास्थ्य बरकरार रहे। आधुनिक समय में फसल उत्पादन के लिए कृषक केवल रासायनिक उर्वरकों का ही प्रयोग करते हैं। वर्तमान समय में अधिकांश मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा 0.3-0.5 प्रतिशत है जबकि अच्छी उर्वराशक्ति वाली मृदाओं में इसकी मात्रा 1.0-1.2 प्रतिशत होनी चाहिए। खेती में यंत्रीकरण हो जाने के कारण पशु आधारित खेती को न बराबर हो गई है। जिससे मृदा में गोबर/कम्पोस्ट की खाद का प्रयोग बहुत कम हो गया है, साथ ही साथ परम्परागत खेती में हरी खाद का अहम स्थान है परन्तु आधुनिक युग में कृषक हरी खाद की फसल उगाकर प्रयोग करना चाहना है तो उसको एक फसल का नुकसान होता है जिसके कारण कृषक हरी खाद का प्रयोग भी नहीं करना चाहते हैं। यदि कृषक अपने खेत में हरी खाद का प्रयोग करते हैं तो मृदा में रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से छोड़े गये रासायनिक पदार्थों के अवशेष की मात्रा को कम करने में सहायक होता है जिससे मृदा को उर्वरकता विकास की समस्या से निजात मिल सकती है।

मृदा के समृद्धीकरण एवं उर्वराशक्ति बढ़ाने में फसल अवशेषों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। दलहनी फसलें जैसे अरहर, चना, मसूर, लोबिया आदि फसलों में फसल की कटाई के पूर्व समस्त पत्तियां, अपरिपक्व पुष्प तथा फलियां आदि झड़कर मृदा में सड़ जाती हैं एवं दलहनी फसलों की जड़ों में जड़ ग्रन्थियां बहुत अधिक संख्या में पाई जाती हैं जो वायुमंडल की नत्रजन का स्थिरीकरण करती है। इनकी बहुत अधिक मात्रा पौधों द्वारा ग्रहण कर ली जाती है शेष बची हुई मात्रा ग्रंथियों में अवशेष रह जाने के कारण मृदा की उर्वरता में वृद्धि करती है। मृदा में न केवल कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते बल्कि पर्यावरण में होने वाले प्रदूषण से भी मुक्ति दिलाते हैं। जिसके कारण उत्पादन में आशातीत वृद्धि हो सकती है।

फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से लाभ

कृषक यदि इन फसल अवशेषों को मृदा में मिला देते हैं तो निम्न लाभ प्राप्त होते है।

- एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में फसल अवशेष प्रमुख एवं अहम योगदान प्रदान करतें हैं। फसल अवशेष मृदा में मिलाए जाने से मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। जिसके फसस्वरूप उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।
- दलहनी फसलों के अवशेष से नत्रजन एवं अन्य पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने में सहायक होते हैं।
- फसल अवशेष जैसे धान के पुआल को जुताई द्वारा जब मृदा में मिलाया जाता है तब मृदा में इसका सड़ाव होता है। सड़ाव की प्रक्रिया होने के पश्चात कार्बनिक अम्ल का निर्माण होता है जो कि उसरीली अथवा क्षारीय भूमि का पीएच मान कम करके मृदा की उदासीन बनाकर उपजाऊ मृदा में परिवर्तित कर सकती है।
- फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने अथवा दबाने के पश्चात कार्बनिक अम्ल का निर्माण होता है। विशेषकर समस्याग्रस्त मृदाओं में उपस्थित पोषक तत्व अप्राप्य अवस्था में रहते हैं। यह कार्बनिक पदार्थ मृदा में अप्राप्य पोषक तत्वों को प्राप्य अवस्था में परिवर्तित कर देते हैं जिनका पौधों द्वारा आसानी से ग्रहण कर लिया जाता है जिसके परिणामस्वरूप मृदा की उत्पादकता में वृद्धि होकर अधिक उपज प्राप्त होती है।
- हरी खाद अथवा फसल अवशेषों का मृदा में प्रयोग करने से मृदा में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है तथा बीमारियां फैलाने वाले जीवाणुओं की संख्या में कमी हो जाती है। अतः फसल में लगने वाली विभिन्न बीमारियों का काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है।
- विशेषकर मटियार अथवा भारी मृदाओं की संरचना बहुत महीन होती है जिससे मृदा में वायुसंचार कम होने से लाभदायक जीवाणुओं की क्रियाशीलता प्रभावित होती है। जब फसल अवशेषों को मृदा में मिलाया जाता है तो मृदा सरन्ध्र तथा पोली हो जाती है जिससे मृदा में वायुसंचार में वृद्धि हो जाने जीवाणुओं की सक्रियता में वृद्धि होने से फसलों के उत्पादन में वृद्धि हो जाती है।
- सघन फसलोत्पादन के कारण फसल अवशेषों को मृदा में न मिलाने से जीवांश पदार्थ की मात्रा में निरंतर कमी होती जाती है जिसके फसलस्वरूप फसल उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पाती

है। इन फसल अवशेषों को मृदा में मिला देने से जीवांश में हो रहे लगातार हास को कम करने में योगदान करता है।

- फसल अवशेषों का प्रयोग पलवार के रूप में करने से असिंचित क्षेत्रों में जहां पर जल की कमी होती है वहां पर मृदा नमी का संरक्षण होने से फसलों की वृद्धि एवं बढ़वार अच्छी हो जाती है जिसके फसस्वरूप फसलोत्पादन में वृद्धि हो जाती है। इसके अतिरिक्त, फसलों की पंक्तियों के मध्य में इन फसल अवशेषों का प्रयोग करने से जिन क्षेत्रों में मृदा कटाव की समस्या होती है वहां पर जल अपवाह में रूकावट होने से मृदा एवं जल संरक्षण अधिक मात्रा में किया जा सकता है। फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा कटाव भी काफी हद तक हो जाता है।
- फसल अवशेषों का प्रयोग कम्पोस्ट बनाने में बहुत ही सहायक है। नाडेप विधि द्वारा इन फसल अवशेषों का प्रयोग करके अच्छी गुणवत्तायुक्त कम्पोस्ट बनाई जा सकती है। कृषक इस नाडेप कम्पोस्ट का प्रयोग करने पर मृदा की भौतिक, रसायनिक तथा जैविक संरचना में सुधार किया जा सकता है। जिसके फलस्वरूप मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि करके फसलोत्पादन में आशातीत वृद्धि की जा सकती है।
- फसल अवशेषों को मृदा में मिलाने से मृदा में सुधार हो जाने से मृदा की जलशोषण या जल धारण क्षमता में वृद्धि हो जाती है जिससे से प्रतिकूल परिस्थितियों में भी पौधों को मृदा जल की उपलब्धता होने से फसलों से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मृदा की गहराई से पोषक तत्वों तथा मृदा जल का अवशोषण करने में सक्षम हो जाती हैं।

फसल अवशेषों के जलाने से हानियाँ

जहाँ पर फसलों की कटाई के लिये कम्बाइन का प्रयोग किया जाता है वहां पर फसलों के अवशेष डंठल के रूप में खड़े रह जाते हैं जिनको कृषक आग लगाकर जला देते हैं। फसल अवशेषों को जलाने से कई प्रकार की हानियां है जो निम्न हैं :

- फसल अवशेषों को जलाने से मृदा ताप में बढ़ोत्तरी हो जाती है। जिसके कारण मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- गेहूँ का भूसा, धान का पुआल, गन्ने की सूखी एवं हरी पत्तियों आदि को जला देने से पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है।
- चूँकि मृदा को एक जीवित माध्यम माना जाता है। एक ग्राम मृदा में असंख्य जीवाणुओं का वास है। मृदा में इन सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा पोषक तत्वों का रूपांतरण होतो है।
- फसलों के अवशेषों जैसे तना, पत्तियों आदि में पोषक तत्वों की काफी अधिक मात्रा पाई जाती है। जिसके जलाने से पोषक तत्व भी नष्ट हो जाते हैं।

उपरोक्त फसल अवशेषों से लाभ एवं हानियों को दृष्टिगत रखते हुए कि किसी भी प्रकार के फसल अवशेषों को जलाए नहीं बल्कि मृदा में कार्बनिक पदार्थों (जैव पदार्थों) की वृद्धि हेतु पादप अवशेषों को मृदा में मिलायें/दबायें/सड़ाएं। कृषक भाई, यदि फसलों की कटाई में *कम्बाइन* का प्रयोग करते है। तो उपयुक्त *कम्बाइन* का प्रयोग करें जिससे भूसा बनें और पशुओं को गुणवत्तायुक्त भरपूर चारा मिल सके। इसके अतिरिक्त, *पेड़ी स्ट्रा चोपर, हैपी सीडर, सुपर एस.एम.एस. जीरो टिल सीडट्रिल, रोटरी, मल्चर, श्रेडर, रिवरसिबल मरोल्डबोर्ड प्लाउ* आदि कृषि यंत्रों का प्रयोग किया जा सकता है। जिन पर राज्य सरकार 50 प्रतिशत का अनुदान भी दे रही हैं।

माननीय राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा फसल अवशेषों को जलाये जाने पर निम्नलिखित दण्ड की व्यवस्था की गयी है :

- कृषि भूमि का क्षेत्र 02 एकड़ से कम होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना ₹ 2500.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।
- कृषि भूमि का क्षेत्र 02 एकड़ से अधिक परन्तु 05 एकड़ से कम होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना ₹ 5000.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।
- कृषि भूमि का क्षेत्र 05 एकड़ से अधिक होने की दशा में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रति घटना ₹ 15000.00 आर्थिक दण्ड घोषित किया गया है।
- खेतों में अवशेष जलाने की लगातार दो घटनाएं होने की दशा में सम्बन्धित कृषक को सरकार द्वारा दिये जाने वाले अनुदान आदि से वंचित कर दिये जाने के निर्देश मा. राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा दिये गये हैं।
- फसलों की कटाई में *कम्बाइन हार्वेस्टिग विद बाइन्डर* अथवा स्टिपर का प्रयोग अनिवार्य कर दिया है। बिना *रीपर मशीन* के *कम्बाइन मशीन* प्रयोग करने वाले मालिकों के विरूद्ध सिविल दायित्व भी निर्धारित किये जायेंगे।

फसलों की कटाई के पश्चात जड़, तना, पत्तियों आदि के रूप में पादप अवशेष भूमि के अन्दर एवं भूमि के ऊपर उपलब्ध होते है। इनको यदि 20 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ की दर से छिड़क कर मिट्टी पलटने वाले हल से अथवा रोटावेटर से जुताई करके मिला देने से यह पादप अवशेष लगभग 20-30 दिन के अन्दर जमीन में सड़ जाते हैं जिससे मृदा में कार्बनिक पदार्थों एवं अन्य तत्वों की बढ़ोत्तरी हो जाती है। जिसके परिणमस्वरूप फसल उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

—f"k esa cUnjksa dk 'kkjhfjd fØ;kdyki lss —f"k mit dh lqj{kk

;hrs'k dqekj[1], vfHk"ksd dqekj flag[2], iznhi Hkkxo[1], vfuç;k pækdj[3] ,oa euh"kk vízdh[4]

[1]bfUnjk xka/kh —f"k fo'ofo|ky;] jk;iqj

[2]Hkkd'vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

[3]tokgjyky usg: fo'ofo|ky;] fnYyh

[4], l-oh- —f"k egkfo|ky;] vk-,u-th-j-fo-] fr#ifr

वानर एक प्रसिद्ध चिर-परिचित जीव है। वानर वैसे तो खूब शरारती होते हैं जो दिनभर अपनी उछलकूद के लिए खूब प्रसिद्ध हैं। यह एक ऊर्जावान व गतिशील जीव है जो दिन भर चंचलता से भरा रहता है व धार्मिक दृष्टिकोण से इस जीव का बहुत महत्व है। भगवान श्री राम की सेना, बंदर और रीछ की थी जिसमें हनुमान एक प्रसिद्ध सेनानायक और श्रीराम के प्रिय थे। अतः इस वजह से हिंदू धर्म में बंदरों को एक पूज्यनीय स्थान प्राप्त है।

वानर वर्ग के अंतर्गत- बंदर, लजीले वानर, लंगूर और वनमानुष इत्यादि आते हैं। कृषि में बंदर और लंगूर आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। अतः इस लेख में केवल बंदर और लंगूर के बारे में ही जानकारी दी जा रही है। भारत में बंदर की दो प्रजातियाँ *रेहसस माककी* तथा *मकाका मुलाट्टा* और लंगूर की *सेमनोपिथेकस इन्टेलस* जाति प्रायः पायी जाती हैं।

स्तनपायी जानवरों द्वारा कृषि उपज को नुकसान हमेशा से एक पुरातन समस्या रही है, जिससे किसान अपने परंपरागत विधियों से निपटते आ रहे हैं, परंतु यह समस्या वर्तमान काल में कुछ अत्यधिक ही बढ़ गई है। वास्तविकता में यह समस्या वन्य-अभ्यारण्यों और इन जानवरों के प्राकृतिक आवास के समीप कुछ अत्यधिक मात्रा में है।

वानरजनित समस्या में वृद्धि के मुख्य कारण

- सघन कृषि एवं एकाकी फसल अर्थात् एक फसल का वृहद स्तर में कृषि
- इंसानों की लगातार बढ़ती आबादी
- दिन-प्रतिदिन कृषि जोत में अधिकता करने हेतु बढ़ती आवश्यकता
- वन्य आवासों व कृषिहीन भूमियों का कृषि योग्य भूमि से घिरा होना
- युवाओं व मजदूरों का शहर की ओर पलायन जिससे कि बंदरों के प्रकोप से सुरक्षा करने वाले मानव धन में कमी बढ़ती जा रही है।
- जंगलों की दिन-प्रतिदिन घटती सीमा।

स्वभाव

सामान्यतः बंदर झुंड में पाए जाते हैं। झुंड में रहने के कारण यह सामाजिक प्राणी जैसे प्रतीत होते हैं, परंतु अभी तक इनकी सामूहिक जीवन के संबंध में कुछ खास जानकारियाँ उपलब्ध नहीं हैं। यह जीव शाकाहारी होते हैं, इसलिए ये वन्य व कृषि उत्पादों के लिए बेहद हानिकारक होते हैं। ये जीव खाते कम और नुकसान ज्यादा पहुंचाते हैं। सामान्यतः ये जीव मानव बस्तियों के आसपास नजर आते हैं, जहां इन्हें जान का खतरा कम दिखाई देता है। अपने गुस्सैल स्वभाव के कारण यह इंसानों को कभी-कभी काट व नोच देते हैं। दिनभर इधर-उधर घूमने के उपरांत रात्रिकाल में ये जीव अपने निश्चित आवास स्थान पर लौट आते हैं।

वितरण

बंदरों की सर्वाधिक जनसंख्या विशेषकर उत्तर भारत में पाई जाती है। तीर्थ स्थानों के आसपास इनकी सर्वाधिक घनी आबादी पाई गई है, जबकि दक्षिण भारत में इनकी संख्या नगण्य या नहीं के बराबर आँकी गई है।

वहीं, लंगूर की सर्वाधिक जनसंख्या जंगलों में पाई जाती है। हमारे देश में ये पूरब की ओर बंगाल की पश्चिमी सीमा तक और उत्तर की ओर हिमालय की तराई तक पाये जाते हैं। दक्षिण की ओर यह गुजरात तक फैले हुए हैं। पंजाब में ये बहुत कम या बिल्कुल नहीं पाए जाते।

पहचान

बंदर सुनहरे-भूरे रंग के होते हैं। इनके चेहरे व बैठने के स्थान पर बाल नहीं पाए जाते और ये दोनों स्थान लाल होते हैं। इनके गाल में एक गड्ढा होता है, जिसमें ये फल व अनाज भर लेते हैं। इनके शरीर की लंबाई सामान्यतः 50 से.मी. होती है तथा पूंछ 25 से 30 से.मी. छोटी होती है।

लंगूर के शरीर का रंग मटमैला सिलेटी मायल या भूरा होता है, जिसमें ऊपर का रंग गहरा और नीचे का रंग हल्का होता है।

रेहसस माकको (हनुमान बन्दर) *लंगूर, सेमनोपिथेकस इन्टेलस*

चेहरे, कान, तलवे और हाथ-पैर के ऊपरी हिस्से काले होते हैं। इनके शरीर की लंबाई लगभग 60 से.मी. व पूंछ की लंबाई एक मीटर के आसपास होती है। बंदर की तरह इनके गाल में गड्ढे नहीं होते।

क्षति प्रकृति

अपने प्राकृतिक स्थान में यह मुख्यतः पूरे समय भोजन की तलाश में व्यतीत करते हैं। मुख्य तौर पर ये बीज, फल, नट्स (बादाम, काजू, अखरोट इत्यादि), घास, पत्तियां, जड़ व कभी-कभी कीड़ों का भी भक्षण करते हैं। विभिन्न जातियों के बंदर और लंगूर बाग-बगीचों में फलों तथा खेतों में फसलों व सब्जियों को हानि पहुंचाते हैं। ये जीव खाते कम व नुकसान ज्यादा पहुंचाते हैं। ये प्रायः कच्चे फलों के कुछ भागों को कुतर-कुतर कर खाते हैं और अधिकांश को तोड़कर फेंक देते हैं।

फलों में मुख्य रूप से अमरूद, आम, जामुन, केला, पपीता, अनार, सीताफल इत्यादि को मुख्य रूप से क्षति पहुंचाते हैं। सब्जियों में खीरा, लोबिया, भिंडी, परवल, कुंदरू, टमाटर, करेला, बैगन, बंदगोभी व शाकीय सब्जियों इत्यादि को मुख्य रूप से क्षति पहुँचाते हैं। फसलों में ये चना, मक्का, मटर, ज्वार, बाजरा, मूँगफली इत्यादि को क्षति पहुंचाते हैं। मक्के की फसल के लिए ये सर्वाधिक हानिकारक जीव हैं, जो पूरी फसल को चौपट कर भारी आर्थिक क्षति पहुँचाते हैं। इसके अतिरिक्त, ये जंगली फलों, फूलों व पत्तियों को भी खाते हैं तथा छोटे पौधों को उखाड़ कर फेंक देते हैं। इसके अतिरिक्त, इनके जोर-जोर से उछलने-कूदने के कारण फलदार वृक्ष के अपरिपक्व फल गिर जाते हैं। गाँव में खपरैल से बने छप्पर को भी ये सर्वाधिक क्षति पहुँचाते हैं। कभी-कभी इनके अत्यधिक उछल-कूद से मिट्टी के बने घर ढह भी जाते हैं।

जीवन चक्र

नर-मादा वर्ष के किसी भी माह में संभोग करते हैं किंतु अधिकतर ये अगस्त से सितंबर में होता है। गर्भावस्था 09 महीने की होती है और बच्चे मार्च से मई के महीनों में पैदा होते हैं। मादा एक बार में एक ही बच्चे को जन्म देती है, जो मां के पेट से तब तक चिपका रहता है जब तक कि वह चलने-फिरने लायक न हो जाए। हनुमान लंगूर की औसतन जीवन आयु लगभग 20 वर्ष होती है।

फसलों में बंदरों द्वारा आर्थिक क्षति

छन्गानी और मोनहॉट ने 2004 में एक वृहद स्तर पर हनुमान लंगूर द्वारा पहुंचाए जाने वाले क्षति के बारे में अध्ययन किया। यह अध्ययन भारत के कुम्भलगढ़ वन्यजीव अभ्यारण्य और जोधपुर शहर में किया गया।

कुम्भलगढ़ वन्यजीव अभ्यारण्य, अरावली पर्वत, राजस्थान

इस क्षेत्र में बंदरों के कुल 16 झुण्डों को दर्ज किया गया। जिसमें औसतन 540 लंगूरों की संख्या दर्ज की गयी। यह आंकड़े 1995 से 2002 के दीर्घकालीन अध्ययन से प्राप्त किए गए। इस क्षेत्र में लंगूर सभी प्रकार के प्राकृतिक, कृषिगत व मानव निर्मित भोजन का भक्षण करते दिखाई दिए। किसी भी स्थान पर लंगूर या बंदरों द्वारा क्षति इन जीवों के झुण्ड व उन स्थानों पर किसानों द्वारा अपनाए जाने वाले फसल सुरक्षा विधियों पर आधारित होती हैं। उक्त क्षेत्र में लंगूर द्वारा 27 प्रतिशत फसल क्षति दर्ज की गई, जो 900 अमेरिकी डॉलर के बराबर वार्षिक क्षति के रूप में आँकी गयी।

जोधपुर शहर

वर्ष 1995 से 2000 के मध्य इस शहर व इसके आसपास के क्षेत्रों में लंगूरों की संख्या 1400 से 1700 दर्ज की गयी। जिसकी जनसंख्या इन 05 वर्षों में लगातार बढ़ती हुई पायी गयी। पुराने क्षेत्र में लंगूरों द्वारा अधिकतम 32 प्रतिशत व न्यूनतम 4 प्रतिशत क्षति सीमा का आकलन किया गया, जो कि 1000 अमेरिकी डॉलर के बराबर वार्षिक क्षति के रूप में आँकी गयी।

बंदरों के प्रबंधन हेतु विधियां

- जमीन पर मजबूत रस्सी का जाल बिछाकर उसे टहनियों व पत्तियों से ढककर, ऊपर खाने की चीजें डाल कर उन्हें पकड़ा जा सकता है।

प्रलोभन द्वारा वानर को पिंजड़े में फासना

- बंदरों को फाँसने के लिए बांस का पिंजरा बनाकर बंदरों की आवक-जावक स्थान में स्थापित कर देते हैं, व उनके अन्दर पके फल व अन्य खाने की चीजें फैला देते हैं, जिससे कि बंदर इसके अंदर आकर्षित होकर आ जाते हैं तथा हम रस्सी की मदद से दरवाजा बंद कर देते हैं।
- इन्हें डराकर, शोर मचाकर या रखवाली कर भगाया जा सकता है।
- नर बंध्याकरण तकनीक अपनाकर इनकी संख्या में कमी लायी जा सकती है।
- मक्के की फसल में भुट्टों को आसपास की हरी पत्तियों से लपेट देने पर भी बंदरों द्वारा पहुँचाए जाने वाले क्षति सीमा में कमी लायी जा सकती है। इस प्रक्रिया में खेत के बाहरी किनारों की 4 से 5 पंक्तियों में 50 प्रतिशत् भुट्टों को इस तरह से पत्तियों से लपेट दिया जाए जिससे कि भुट्टे बंदरों को दिखाई ही न दें और नुकसान से बचे रहें।
- रात्रि काल में हाथों में जलते हुए मशाल लेकर वानरों को उनके आवास स्थान जैसे पेड़ों इत्यादि में उनको डराना चाहिए। जलते हुए मशाल की आग से ये चिड़चिड़े व परेशान होकर उक्त स्थान को छोड़कर किसी अन्य सुरक्षित स्थान पर चले जाते हैं।
- बड़े-बड़े अजगर व अन्य खतरनाक सांपों के पुतलों को खेत के किनारों में विभिन्न जगहों में स्थापित करना या फलदार वृक्षों में इनको लपेट देना, जिससे कि ये बंदर उक्त क्षेत्र में प्रवेश करने के बजाय उस स्थान को छोड़कर भाग जाएं।
- सजीव शेर के पुतले को जो साथ में दहाड़ने की आवाज विभिन्न समयान्तराल में निकालते हैं, की स्थापना खेत के किनारे व मध्य में करने से बंदर उस स्थान को छोड़कर भाग जाते हैं।
- कागभगोड़ा की खेतों में जगह-जगह स्थापना करने से बंदर उक्त क्षेत्र में प्रवेश करने से डरते हैं।
- कॉंटेदार टहनियों व शाखाओं वाले पौधों जैसे *यूफोरबिया केडुसीफोलियाँ* को खेत के किनारों में बाढ़ के रूप में उगाने से बंदर खेत में प्रवेश नहीं कर पाते।
- बिजली युक्त बाढ़ को खेत के चारों ओर लगाने से बंदर खेत के अंदर प्रवेश नहीं कर पाते।
- भोज्य पदार्थों के साथ भाँग मिलाकर बन्दरों को खिला देने से वे सुध-बेसुध हो जाते हैं। तदुपरान्त वे उस स्थान में उत्पात् मचाना बन्द कर देते है व बंदरों का झुंड उक्त स्थान का त्याग कर देता है।
- एक पतली गर्दन वाली मिट्टी या प्लास्टिक की सुराही लेते हैं जिसमें बंदर का हाथ खुली अवस्था में सरलतापूर्वक घुस जाए। उक्त सुराही में गर्दन के कुछ नीचे तक भुना चना या लाई भर देते है तथा इस प्रकार से चने से भरी हुई 10-15 सुराहियों को जगह-जगह बन्दरों की आवाजाही के स्थानों में रख कर देते है व उक्त सुराही को रस्सी की सहायता से किसी ठूंठ से बांध कर अविचल कर देते हैं। जब बन्दर इन सुराहियों के पास चना खाने के लिये आते हैं तो वे उसमें अपना हाथ डालते हैं व चने को मुठ्ठी से पकड़ लेते हैं व मुठ्ठी बन्द कर देते हैं। मुठ्ठी बन्द होने के कारण सुराही की पतली गर्दन से बन्दर अपना हाथ बाहर नहीं निकाल पाते व बंदर उक्त स्थान पर फँस कर रह जाते हैं। इस प्रकार से उक्त फँसे हुए बंदर को हम आसानी से पकड़कर किसी दूसरे स्थान पर छोड़ देते हैं।
- मिर्च पाउडर को इंजन आयल या कॉफी के अपशिष्ट (कॉफी बनाने के बाद बचा हुआ अवशेष) के साथ मिलाकर फसल में छिड़काव कर देते हैं। उक्त उपचरित फसल से बंदर दूर रहते हैं।
- आम के पौधे को जाल से ढक देने पर, बंदर आम की फसल को नुकसान नहीं पहुँचा पाते हैं।
- सिसल की रस्सी से हम खेत के चारों ओर बाड़ लगा देते हैं तदुपरान्त मिर्च पाउडर को जल या सस्ते तेल के साथ मिलाकर क्रीम जैसा मिश्रण बनाकर उक्त मिश्रण को सिसल की रस्सी से बनी बाड़ में अच्छी तरह से लेपित कर लेते हैं। उक्त बाड़ को जब बंदर, हाथी व अन्य जानवर लाँघने का

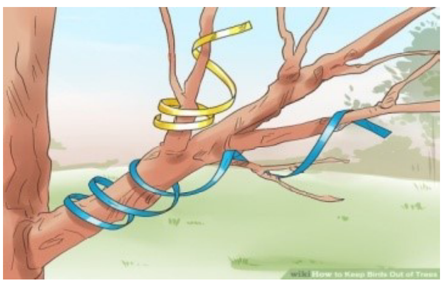

सर्प की आकृति

काकभगोड़ा

प्रयास करते हैं तो इस मिर्च लेपित बाड़ के संपर्क में आने से उन्हें एक तीक्ष्ण जलन का अनुभव होता है, जिस कारण ये जीव उक्त प्रक्षेत्र से दूर ही रहते हैं।

- रतनजोत का पौधा बाड़ हेतु सर्वोत्तम पौधा हैं। इस पौधे को खेत के चारों ओर बाड़ के रूप में लगा देते हैं, जिससे यह बाड़ जानवरों को खेत में प्रवेश करने में अवरोध पैदा करता हैं तथा इससे निकलने वाली गंध बंदरों व अन्य जानवरों को खेत से दूर रखती है।
- तुलसी का पौधा भी बाड़ हेतु सर्वोत्तम है क्योंकि इससे निकलने वाली गंध बंदर, हाथी व अन्य जानवरों के लिये अप्रिय होती है तथा तुलसी के पौधे में जो फूल आते हैं वे भी मधुमक्खियों को खूब आकर्षित करते हैं, परिणामस्वरूप मधुमक्खी के कारण बंदर, हाथी व अन्य जानवर उक्त खेत से दूर ही रहते हैं।

- **प्रतिकर्षक ध्वनि विधि**

इस विधि में विभिन्न तीव्र आवृत्ति की ध्वनि उत्पन्न की जाती है जिससे बंदर डर कर भाग जाते हैं।

क) **पटाखों का उपयोगः** इसमें तेज ध्वनि वाले पटाखों को समय-समय पर जलाया जाता है, जिसकी तीव्र आवाज से बंदर डर कर भाग जाते हैं। इसके लिए सामान्यतः बम व लड़ी वाले पटाखों का ही उपयोग किया जाता हैं।

- ***शेल क्रैकर्स* का उपयोग-** इसको 12 गेज की बंदूक से दागा जाता है जो दागने के 65 से 75 मीटर दूर फटता है तथा तेज रोशनी व ध्वनि उत्पन्न करता है।
- **राकेट-** इसको *लौंन्चिंग रॉड* की सहायता से ऊपर की ओर छोड़ा जाता है। ये *शेल क्रैकर्स* की अपेक्षा अत्यधिक ध्वनि उत्पन्न करता है जो हवा में काफी दूर तक गूँजती है।
- ***एसिटिलीन एक्सप्लोडर*-** इस विधि में बंदरों को डराने के लिए बंदूक व एसिटिलीन गैस का सहारा लिया जाता है। एसिटिलीन गैस, पानी और कैल्शियम-कार्बाइड की क्रिया से पैदा होती है। बंदूक से इस गैस को दागने पर तेज आवाज उत्पन्न होती है, जो बंदरों को डराने के लिए काफी होती है। अतः इसे भिन्न-भिन्न समय पर दागना चाहिए अन्यथा बंदर इसकी आवाज के आदी हो जायेंगे।

ख) बंदरों को डराने वाली स्वचालित यंत्र या *पायरोटेक्निक* विधि

यह मशीन बाजार में आसानी से उपलब्ध हो जाती है। यह केवल तब आवाज करती है जब बंदर खेत में गमन करते हैं। बागानों के लिए यह बहुत उपयोगी होती है। 4 से 5 एकड़ के लिए एक मशीन काफी है।

ग) संकटकालीन पुकार ध्वनि का उपयोग

संकटकालीन पुकार ध्वनि एक प्रकार की ऐसी आवाज है, जो बंदरों द्वारा संकट काल की अवस्था में निकाली जाती है, अर्थात जब कोई परभक्षी इन्हें खाने के लिए पकड़ते हैं, तब यह जो ध्वनि उत्पन्न करते हैं वही संकटकालीन पुकार ध्वनि कहलाती है। सभी अलग-अलग वानरों की संकटकालीन पुकार ध्वनि को यंत्रों की मदद से रिकॉर्ड कर अलग-अलग आवृत्ति में अलग-अलग समय में बजाया जाता है, जिससे कि बंदर डर कर भाग जाते हैं।

घ) चेतावनी पुकार ध्वनि का प्रयोग

इस प्रकार की ध्वनि वानरों द्वारा तभी निकाली जाती है जब उस क्षेत्र में कोई परभक्षी मौजूद हो। इन ध्वनियों को रिकॉर्ड कर अलग-अलग समय में भिन्न आवृत्ति में बजाया जाता है, जिससे कि वानर डरकर दूर भाग जाते हैं।

अच्छा तो यह है कि संकटकालीन व चेतावनी पुकार ध्वनि को एक साथ बजाया जाए जिससे कि वानर अत्यधिक भयभीत होकर दूर भाग जाएं। इन डरावनी ध्वनि के साथ अन्य दृश्यक डरावनी कृतियों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि वानर इनकी आदी नहीं हो पाते। कुछ अन्य डरावनी विधियां जैसे- साँप व सजीव शेर के पुतले की आकृति को खेतों में स्थापित कर सकते हैं, जिससे कि वानर उस जगह के करीब नहीं आते।

भोज्य पदार्थों के साथ भाँग मिलाकर बन्दरों को खिला देने

सिसल की रस्सी में मिर्च के घोल का लेपन

रतनजोत का बाड़

तुलसी का बाड़

से वे सुध-बेसुध हो जाते हैं। तदुपरान्त वे उस स्थान में उत्पात् मचाना बन्द कर देते हैं व बंदरों का झुंड उक्त स्थान का त्याग कर देता है।

मंकी बैरियर (बंदर से बचाव हेतु द्रव्य)

मंकी बैरियर एक द्रव्य आधारित बहुपयोगी व वातावरण हितैषी/मित्र रसायन है, जो एक जैवविघटनशील तत्व है तथा फसलों, मनुष्यों और जानवरों के लिए हानिकारक नहीं है। मंकी बैरियर रसायन का निर्माण व विक्रय *ग्रीन लाइफ सर्वे एंड प्रोटेक्ट प्राइवेट लिमिटेड* नामक कम्पनी करती है। यह एक ऐसी चमत्कारिक रसायन है जिससे एक विशेष प्रकार की गंध उत्पन्न होती है, जो जंगली बंदरों को खेतों से दूर रखती है। जिससे हमारी कृषि उपज बंदरों के उत्पात से बच जाती है। *मंकी बैरियर* में मुख्य रसायन समुद्री घास, ह्युमिक व पृष्ठसक्रियकारक तत्व का मिश्रण होता है, जो 100 मिलीलीटर, 250 मिलीलीटर, 500 मिलीलीटर, 1 लीटर, 5 लीटर की मात्रा में बाजार में उपलब्ध है। इसकी 100 मिलीलीटर मात्रा का 300 फीट के परिधि क्षेत्र में छिड़काव करना प्रभावी पाया गया है।

मंकी बैरियर रसायन

राष्ट्रीय वनस्पति स्वास्थ्य प्रबंधन संस्थान, भारत सरकार, द्वारा वानर नियंत्रण हेतु सुझावित विधियाँ

रखवाली करना तथा बंदरों को दौड़ाना: खेतों में रखवाली करना तथा बंदरों को दौड़ाकर खेतों से दूर खदेड़ना सबसे पुरानी तथा प्रभावी विधि है। इस कार्य हेतु एक से दो व्यक्ति की जरूरत होती है।

शोर मचाना व घण्टा बजाना: टिन का ड्रम बजाना व प्लेट पीटना एक प्रभावी विधि है। इस विधि से उत्पन्न आवाज से बंदर डर कर दूर भाग खड़े होते हैं।

पथराव करना व गुलेल मारना: पत्थर फेंककर भगाना या गुलेल से भगाना एक प्रभावी विधि है, परन्तु इस विधि से किसी जीव को चोट लग सकती है। अतः सावधानी से इस विधि का प्रयोग करना चाहिए।

चावल के गेंद का प्रयोग: उबले चावल में मूंगफली का पाउडर, लाल मिर्च पाउडर और नारियल का तेल मिलाकर गोला बना लेते हैं। इस गेंद को खेतों में जगह-जगह रख देते हैं, जब बंदर इस गेंद को चखकर देखते हैं तो उसे तीखापन महसूस होता है और वे मिर्च की जलन से इधर-उधर उछलते हैं व उस क्षेत्र को छोड़कर दूर भाग जाते हैं।

लाई, मुर्रा व मिर्च विधि: एक चौड़े मुंह वाले बर्तन में लाई अथवा मुर्रा के साथ, तीखी लाल मिर्च को विभिन्न परत में डालकर बंदरों के आने-जाने वाले स्थानों में रख देते हैं तथा सबसे ऊपरी परत में कुछ स्वादिष्ट भोज्य जैसे मूंगफली का चूरा को मिलाकर रख देते हैं। जब बंदर इस भोजन को खाना शुरू करता है तो वह शत्रु भय के कारण जल्दी-जल्दी खाने का प्रयास करता है। ऐसे में तीखी लाल मिर्च खाने से उसका मुंह अत्यधिक जलने लगता है जिससे वे भोजन को स्वास्थ्य के लिए हानिकारक समझ कर वहां से दूर चले जाते हैं।

सूखी मछली का प्रयोग: सूखी मछलियों को खेतों के चारों ओर पेड़ों से टांग देने पर इनसे जो बदबूदार उत्तेजक गंध निकलती है इससे बंदर दूर भागते हैं।

पालतू कुत्ते व लंगूरों का प्रयोग: प्रशिक्षित पालतू कुत्तों व लंगूरों को विनाशी बंदरों को भगाने में प्रयुक्त किया जाता है। ये प्रशिक्षित पालतू आज्ञाकारी जीव इन जीवों को मारपीट व काटकर खेतों से दूर खदेड़ देते हैं।

बंदरों को पकड़कर रंग-रोंगन करना: झुंड में उपस्थित एक मुख्य नर को पकड़ कर उसे लाल या सफेद रंग से रोंगन कर देते हैं और छोड़ देते हैं। यह रंगीन नर जब अपने समूह में वापस जाने का प्रयास करते हैं तो, अन्य बंदर इस रंगीन बंदर से डर कर दूर भागने लगते हैं अर्थात समूह के अन्य बंदर इस रंगीन बंदर को बीमार-ग्रस्त समझ कर दूर भागते हैं। कुछ समय बाद संपूर्ण झुंड उक्त प्रक्षेत्र से पलायन कर जाती है।

बंदरों को भगाने हेतु लंगूर का पालन-पोषण तथा प्रशिक्षण

फसल प्रणाली में बदलाव: फसल प्रणाली में फेरबदल करना एक प्रभावी उपाय है। काँटेदार बैंगन व कुसुम या अदरक की फसल को जिसे बन्दर पसंद नहीं करते है, इन्हें मुख्य फसल के चारों ओर लगा दिया जाता हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

xUu d yky lMu jkx fu;=.k gr ç;kx'kkyk e fd; tku oky 'kk/k dk;

iYyoh] fnu'k flg] fi;e oUnuk ,o noUn flg

Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

गन्ना एक महत्वपूर्ण कृषि औद्योगिक फसल है। भारत सबसे बड़ा चीनी का उपभोक्ता है और साथ ही दूसरे नम्बर का सबसे बड़ा चीनी का उत्पादक है। भारत में, गन्ने में होने वाले फफूँद रोगों के कारण फसल उत्पादन का 18 से 31 प्रतिशत अनुमानित नुकसान होता है। फफूँद से लगने वाले रोगों में, लाल सड़न सबसे प्रमुख रोग है। इस रोग को गन्ने का कैंसर भी कहा जाता है। लाल सड़न रोग से व्यापक नुकसान होने की वजह से इस पर प्रयोगशाला में बहुत तरह के अध्ययन होते रहते हैं। इन्ही अध्ययनों और सावधानियों के चलते इस रोग को नियंत्रित किया गया हैं।

प्रयोगशाला: प्रयोगशाला एक ऐसी सुविधा (कक्ष, भवन, या स्थान) को कहते हैं, जो वैज्ञानिक अनुसंधान, प्रयोग एवं मापन के लिए आवश्यक माहौल प्रदान करता है।

प्रयोगशालाएं विभिन्न प्रकार की होती हैं और सभी प्रयोगशालाओं में उसके कार्य के अनुसार विभिन्न-विभिन्न प्रकार की सावधानियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं।

इसी क्रम में लाल सड़न रोग हेतु प्रयोगशाला में की जाने वाली सावधानियों एवं कार्यों का विवरण निम्नवत किया जा रहा है।

प्रयोगशाला में रोगग्रस्त गन्ने से *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* कवक के अलगाव एवं गुणन जिसको की कल्चर करना कहते है, जिसके दौरान बहुत सारे उपकरण, प्रक्रिया एवं सावधानियाँ अपनाई जाती है।

(अ) प्रयोगशाला में उपयोग होने वाले उपकरण

जैविक ऑक्सीजन माँग इन्क्युबेटर: यह सूक्ष्मजीवों को एक नियंत्रित तापमान, नमी, प्रकाश के साथ-साथ संदूषण मुक्त पर्यावरण प्रदान करने का उपकरण है।

***हॉट एयर* ओवन:** यह सूखी गर्मी के सिद्धांत पर आधारित उपकरण है, जो कि काँच के बने उपकरण एवं सामग्री को जीवाणुमुक्त करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है, जैसे कि पेट्रीप्लेट, फ्लास्क, परखनली आदि।

***आटोक्लेव*:** यह उपकरण नम गर्मी के साथ भाप, दबाव एवं समय के सिद्धांत पर काम करता है। इस उपकरण से फफूँद को दिये जाने वाले कृत्रिम भोजन की तैयार करते है।

***लेमिनार एयर फ्लो*:** इस उपकरण में फिल्टर के माध्यम से हवा पारित होता है, जो कि वायु में पाये जाने वाले जीवाणु प्रदूषण को रोक देता है, तथा स्वच्छ जीवाणु रहित वातावरण प्रदान करता है।

(ब) *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के कल्चर के स्थानांतरण करने की विधि

जीवाणु मुक्तीकरण निजर्मीकरण: इस प्रक्रिया के दौरान सबसे पहले पेट्री-प्लेटस को पानी से अच्छी तरह साफ करते हैं। तत्पश्चात् पानी सूखने के बाद पेट्री-प्लेटों को 121^{0}C तापमान पर जीवाणुमुक्त किया जाता है।

***कोलेटोट्राइकम फाल्केटम*:** फफूँद का कृत्रिम भोजन *(मीडिया)* बनाने की विधि- कल्चर मीडिया विभिन्न प्रकार के होते हैं। प्रयोगों द्वारा यह स्थापित हो चुका है कि *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* के लिए जई मीडिया सर्वोत्तम है।

ओट्स मीडिया की संरचना

ओट्स 40 ग्राम, अगार 15 ग्राम, आंसुत जल 1000 मि.ली, पी.एच. 7.6

ओट्स मीडिया बनाने के पश्चात् इसे फ्लास्क में डालकर *कॉटन प्लग* लगाकर बन्द कर देते हैं। तत्पश्चात् *ऑटोक्लेव* में 15 से 20 मिनट तक 121^{0}C (उच्च तापमान) और 15 पाउंड दबाव में जीवाणुमुक्त करते हैं।

***कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* का *आइसोलेशन*:** पॉलीहाउस या गन्ने के खेत से लाल सड़न रोग से ग्रसित गन्ने को लाते हैं। इस रोगग्रसित गन्ने का निरीक्षण करके उसके उस हिस्से का चुनाव करते हैं, जहाँ सड़ाव कम होता है, लेकिन रोग (फफूँद) का फैलाव रहता है। फिर उस हिस्से को अच्छी तरह से स्प्रिट से साफ कर लेते हैं। तत्पश्चात् रोगग्रसित गन्ने को बीच से दो भागों में लबंवत फाड़ते हैं। गन्ने की ऊपरी परत को अच्छी तरह से छीलकर उनमें से लाल सड़न रोगग्रसित ऊतकों को 2 से 3 मि.मी. छोटे टुकड़े में काट लेते हैं। इस प्रक्रिया को रोगग्रसित ऊतकों का चुनाव एवं पृथककरण करना कहते हैं।

इसके पश्चात् *लेमिनार एयर फ्लो* में यू.वी. लाइट जला कर 20 मिनट के लिए छोड़ देते हैं, ताकि जो भी दूसरे बीजाणु

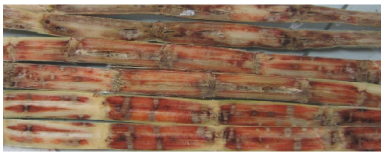

लेमिनार में उपस्थित हों, वे नष्ट हो जाए। तत्पश्चात् *ऑटोक्लेव* के द्वारा जीवाणुमुक्त किये गये *ओट्स मीडिया* को *स्प्रिट लैम्प* के सामने पेट्रीप्लेट में डालकर जमने के लिए छोड़ देते हैं। इसके बाद मर्क्यूरिक क्लोराइड 0.1 प्रतिशत घोल से रोगग्रसित गन्ने के छोटे-छोटे कटे टुकड़े का जीवाणुमुक्त करने के लिए एक मिनट के लिए डुबोते हैं। तत्पश्चात इसको आंसुत जल में दो बार डुबोते हैं। इसके बाद इन रोगग्रसित टुकड़ों को *स्प्रिट लैम्प* के सामने *ओट्स मीडिया प्लेटस* में रखते हैं। इन प्लेटस को अच्छी तरह से *पेराफिल्म* से सील करके 28 ± 2^0 सेल्सियस पर जैविक ऑक्सीजन माँग इन्क्युबेटर में तीन से चार दिन के लिए रखते हैं।

प्योर-कल्चरिंग: तीन से चार दिन बाद गन्ने के ऊतकों के आस-पास कवक जाल दिखने लगता है। ऊतकों के इन छोटे टुकड़ों के आस-पास *कोलेटोट्राइकम फाल्केटम* कवक जाल की एक अलग तरह की बढ़वार होती है, जिसके कारण यह पता लग जाता है कि यह लाल सड़न का फँफूद है या नहीं। उपयुक्त होने पर इसे फिर से दूसरे *ओट्स मीडिया प्लेटस* में स्थानांतरण कर दिया जाता है। अब इस पेट्री प्लेट को बी.ओ.डी. में 7-8 दिन के लिए रख देते हैं। इसके पश्चात् इस पेट्री-प्लेट से लेमिनार में शीशे के *स्प्रेडर* के माध्यम से एक मीडिया युक्त दूसरी पेट्री-प्लेट में *स्प्रेड* करके चार दिन के लिए पुनः बी.ओ.डी. में रख देते हैं। फिर किसी भी एक जगह उगे हुए कवक जाल को उठाकर उगाने को एकल बीजाणु अलगाव कहते हैं और इसी का उपयोग शोध-कार्य में किया जाता है।

प्रयोगशाला की सुरक्षा एवं सावधानियाँ: प्रयोगशाला में सुरक्षा अति आवश्यक है रसायन अथवा भौतिकों में कई प्रकार के ऐसे प्रयोग होते हैं, जिसमें आग लगने या रासायनिक अभिक्रिया होने का खतरा बना रहता है। प्रयोगशाला में व्यावहारिक काम करने के लिए हमें प्रयोगशाला सुरक्षा में अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है। व्यावहारिक कार्य का अभ्यास करते समय किसी भी उपकरण या गतिविधियों की सूची बनाना चाहिए, जो संभवतः खतरनाक हो सकते हैं। प्रयोगशाला में किसी अन्य के प्रवेश करने के पूर्व यह जरूर बताना चाहिए, कि यहाँ क्या और कैसे करना है? इसके साथ ही सभी प्रकार की सावधानी से जुड़ी बाते बताई जाती हैं।

व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण: व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरण ऐसे उपकरण हैं जो आपके शरीर को चोट से बचाने के लिए *डिजाइन* किए जाते हैं।

इन उपकरणों में कपड़े, जूते, आँखों की सुरक्षा, श्रवण सुरक्षा और श्वसन यंत्र शामिल होते हैं। प्रयोगशाला में कभी-कभी संभावित हानिकारक पदार्थों का उपयोग करने से कई तरह के नुकसान पहुँचते हैं, जिससे बचने के लिए हमें कुछ उपकरणों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए जो निम्नवंत हैं।

***लैब कोट या एप्रन* :** कपड़े और त्वचा की रक्षा के लिए प्रयोगशाला *कोट* या *एप्रन* का उपयोग किया जाना चाहिए। *लैब कोट* अक्सर एक ऐसी सामग्री से बने होते हैं, जो जंग के लिए प्रतिरोधी होती है। यह महत्वपूर्ण है कि प्रयोगशाला *कोट* या *एप्रन* उपयोगकर्ता के लिए सही आकार का हो। लम्बी अनुगामी आस्तीन खतरनाक भी हो सकती हैं, क्योंकि वे प्रयोग होने वाली वस्तुओं को खराब कर सकते हैं या संभवित तरल पदार्थों को खराब कर सकते हैं।

सुरक्षा चश्मा: इसका उपयोग आँखों को गर्म या संक्षारक तरल पदार्थ और प्रोजेक्टायल के नुकसान से बचाता है।

दस्ताने: दस्ताने, हाथ और कलाई में होने वाले त्वचा विकारों से बचाते हैं।

***मास्क* :** रासायनिक पदार्थों के तेज गंध से हमारे फेफड़े पर दुष्प्रभाव पड़ सकता है एवं अलग-अलग कवक के प्रभाव से हमें विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ हो सकती हैं। जैसे *एस्पर्जिलस* से मनुष्यों में *एस्पर्जिलोसिस* नामक रोग हो जाता है। यह श्वसन तंत्र के संक्रमण से बचाता है, अतः *मास्क* का प्रयोग करने से हम इन सब खतरों से बच सकते हैं।

प्रयोगशाला में प्रतिबंधित वस्तुयें

- प्रयोगशाला में खाने-पीने के पदार्थों को ले जाने पर प्रतिबंध रहना चाहिए।
- जूते के प्रयोग को प्रयोगशाला के अंदर ले जाना प्रतिबंधित करना चाहिए। प्रयोगशाला के लिए अलग जूते-चप्पल होने चाहिए।
- काम के समय *लेमिनार* में बैठकर बात नहीं करना चाहिए।
- *लेमिनार* में काम करते वक्त अपने सिर को अन्दर नहीं ले जाना चाहिए।
- अनचाहे लोगों का प्रवेश प्रयोगशाला के अंदर वर्जित होना चाहिए।

xUuk [krh e lxerk o dk;{kerk c<ku oky mUUkr ;=

l[kchj flg] vf[ky'k dekj flg ,o vt; dekj lkg

Hkkdvuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

भारत में गन्ना एक प्रमुख नकदी फसल है जिसकी खेती लगभग 50.42 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में होती है जिसकी औसतन उपज लगभग 79.65 टन प्रति हेक्टेयर है। देश भर में गन्ना उत्पादन में उत्तर प्रदेश राज्य प्रथम स्थान पर है। वर्ष 2017-18 के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में 22.34 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में गन्ने की खेती की गई तथा 79.26 टन/हे. की उपज के साथ 1770. 56 लाख टन गन्ने का उत्पादन हुआ। गन्ना खेती में अन्य फसलों की तुलना में श्रमिकों की जरूरत अधिक होती है जो लगभग 350-400 श्रमिक प्रति हेक्टेयर है। गन्ना फसल उत्पादन की विभिन्न सस्य क्रियाओं जैसे खेत की तैयारी, गन्ना बुआई, निराई-गुड़ाई, सिंचाई, रसायन प्रयोग, गन्ना कटाई आदि में से निराई-गुड़ाई, कटाई एवं बोने के लिये श्रमिकों की सबसे अधिक आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न कृषि कार्यों को समय पर संपादित करने के लिये श्रमिकों की उपलब्धता दिन प्रतिदिन कम हो रही है जिससे फसल की पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। अब भी गन्ना खेती के ज्यादातर कार्य पारम्परिक तरीके व पुराने यंत्रों द्वारा ही किये जा रहे हैं जिसमें न केवल समय व लागत अधिक लगती है बल्कि शारीरिक श्रम भी अधिक लगता है। मुख्यतः ज्यादातर किसान गन्ना खेती में बुआई हेतु नाली बनाने के लिये ट्रैक्टर चालित रिजर, गुड़ाई के लिये कल्टीवेटर व हस्तचालित फावड़ा आदि का इस्तेमाल करते हैं। मशीनीकरण द्वारा गन्ने की विभिन्न सस्य क्रियाओं को निश्चित समय पर एवं कम समय व लागत से किया जा सकता है। गन्ना खेती को सरल व सुगम बनाने हेतु देश में विभिन्न संस्थाओं व निर्माताओं विशेषकर भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने गन्ने के विभिन्न यंत्रों का विकास किया है जिनके प्रयोग से समय, लागत व श्रम की बचत होती है एवं फसल की पैदावार में भी वृद्धि होती है।

खेत की तैयारी

गन्ना बुवाई के लिए खेत अच्छे से तैयार होना जरूरी है जिसके लिये मिट्‌टी पलट हल, *कल्टीवेटर, डिस्क हैरो* एवं *लेवलर* का उपयोग आवश्यक है। भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने एक नया ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्र बनाया है जिसे *'कल्टी हैरो'* कहते है, इसमें आगे 9 टाईन कल्टीवेटर लगा है तथा बीच में डिस्क हैरो लगा है जिसमें दो गैंग पर 5-5 डिस्क लगी हैं तथा पीछे पाटा लगा हुआ है। इस मशीन का प्रयोग करने से प्रति हेक्टेयर 4-8 लीटर डीजल तथा 1-1.5 घंटा समय की बचत होती है। ट्रैक्टर कम समय खेत में रहता है जिसके कारण जमीन कठोर नहीं हो पाती है।

गन्ने की बुवाई

गन्ने की बुवाई हेतु भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने कई प्रकार के *शुगरकेन कटर प्लांटर* विकसित किए हैं।

गहरी नाली वाला *शुगरकेन कटर प्लांटर*

संस्थान द्वारा विकसित यह दो पंक्ति वाला यंत्र 35 व अधिक अश्व शक्ति के ट्रैक्टर से चलाया जा सकता है। इस यंत्र में गन्ना बुआई की पंक्ति से पंक्ति की दूरी को 75 सें.मी. या 90 सें.मी. पर समायोजित किया जा सकता है। इस यन्त्र के मुख्य भाग *फरो ओपनर*, गन्ना बीज *कटर* इकाई, रसायनिक खाद इकाई, *गीयर बॉक्स*, सीट आदि है। इसमें लगे *फरो ओपनर* 22 से 25 सें.मी. गहरी नाली बनाते हैं। इस यंत्र की सहायता से गन्ना बुवाई के सभी कार्य जैसे बीज के टुकड़ों की कटाई, कूँड़ बनाना, गन्ना टुकड़ों को कूँड़ में डालना, खाद एवं दवा डालना तथा मिट्‌टी से गन्ने के टुकड़ों को ढ़क कर दबाना एक साथ संम्पादित किये जाते हैं। इस मशीन द्वारा 4 से 5 घंटे में 4 श्रमिकों की सहायता से एक हेक्टेयर क्षेत्रफल की गन्ना बुआई की जा सकती है। जबकि परम्परागत विधि से यह कार्य लगभग 50-60 घंटे में किया जाता है। परम्परागत विधि से बुआई की तुलना में मशीन द्वारा लगभग श्रमिकों की जरूरत व समय में 90 प्रतिशत तथा कार्य की लागत में 50-60 प्रतिशत बचत होती है। इसके साथ-साथ 10 से 12 प्रतिशत फसल की उपज में भी बढ़ोतरी होती है। मशीन के इन सब फायदों को देखते हुए आजकल किसानों के बीच गन्ने की बुआई मशीनों *(कटर प्लांटर)* का प्रचलन बढ़ रहा है। इस मशीन में दो गहरी नालियों में गन्ने के साथ-साथ उभरी शैय्या पर चार पंक्तियों में सहफसली जैसे गेंहूँ, दलहनी व तिलहनी फसलों की बुआई करने की भी व्यवस्था है। इसमें दो लाईन बीच में तथा एक-एक दोनों तरफ दाएं व बाएं आती हैं। इस प्रकार *शुगरकेन कटर प्लांटर-कम-सीडर* द्वारा किसान भाई गन्ने के साथ-साथ अन्य अल्पकालिक फसल लेकर अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं।

ट्रैन्च प्लांटर

ट्रैन्च प्लांटर 25-30 सें.मी. गहरी नाली की तली में दो

पंक्तियों में 30 सें.मी. की दूरी पर गन्ने की बुआई करता है। यह मशीन खाद व दवा डालने के साथ-साथ ड्रिप सिंचाई प्रणाली हेतु पाईप डालने का भी काम करती है। इस यंत्र की सहायता से गन्ना बुआई से संबंधित सभी कार्य जैसे गहरी नाली बनाना, गन्ने के टुकड़े काटना, कटे हुए टुकड़ों को कूँड़ में डालना, खाद व दवा डालना, गन्ना बीज का मिट्टी से ढकना व उसके बाद मिट्टी को दबाने का कार्य एक ही साथ संपादित किए जा सकते हैं। पारम्परिक तरीके की तुलना में मशीन द्वारा बुआई से 51 प्रतिशत कार्य की लागत में तथा श्रमिकों की जरूरत में 80 प्रतिशत की बचत होती है। गन्ने की उपज में 10-15 प्रतिशत की बढ़ोतरी होती है। इस मशीन की कार्यक्षमता 0.20-0.25 हेक्टेयर प्रति घंटा है। इस मशीन में गन्ने के साथ-साथ उभरी शैय्या पर दो पंक्तियों में सहफसली लगाने की भी व्यवस्था है। इसमें एक पंक्ति नाली के दाएं व एक पंक्ति बाएं आती है।

निराई-गुड़ाई

भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ ने एक बहुउद्देशीय निराई-गुड़ाई यंत्र का विकास किया है जिससे गन्ने की पंक्तियों के बीच निराई-गुड़ाई व पौधों से पौधों के बीच में खरपतवारनाशक दवा का छिड़काव किया जा सकता है। इस यंत्र के द्वारा रसायनिक खाद को गन्ने की जड़ों के पास डाला जा सकता है। इसके अलावा, गन्ना बुआई हेतु गहरी नाली बनाने व गन्ने में मिट्टी चढ़ाने का कार्य भी इस यंत्र द्वारा *फरो ओपनर* लगाकर किया जा सकता है। इस यंत्र को गन्ना फसल व पेड़ी दोनों में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसकी कार्य क्षमता लगभग 0.52 हेक्टेयर प्रति घंटा है।

पेड़ी प्रबंधन यंत्र

गन्ने की अच्छी पेड़ी लेने के लिए आवश्यक है कि गन्ने के ठूँठ को जमीन की सतह से काटा जाए ताकि उसमें जमाव अच्छा हो सके। भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ द्वारा ट्रैक्टर चालित तवेदार पेड़ी प्रबंधन यंत्र विकसित किया गया है जो जोड़ी पंक्तियों में बुआई की गई दो पंक्तियों या अधिक दूरी पर बोई गई फसल की एक पंक्ति के लिये उपयोगी है। यह ठूँठ की जमीन की सतह से कटाई, पुरानी जड़ों की कटाई एवं खाद का प्रयोग एक साथ संपादित करता है। इसकी कार्य क्षमता 0.30-0.35 हे./घं. है। यह गन्ने की एक पंक्ति के दोनों तरफ खाद डालता है। इसके प्रयोग से कार्य लागत में पारम्परिक तरीके की तुलना में लगभग 60 प्रतिशत की बचत होती है।

पादप अवशेष टुकड़ा कटाई यंत्र

गन्ने की कटाई के उपरान्त खेत में रह गए ठूँठ, डंठल, पत्तियों इत्यादि का प्रबन्धन एक मुख्य कृषि क्रिया है। यह यंत्र पौधों के अवशेषों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर खेत की सतह पर समान रूप से फैला देता है। पौधों के कटे हुए अवशेष शीघ्र सड़ जाएं, इसके लिए इस यंत्र में इन अवशेषों के ऊपर यूरिया और जीवाणु जैसे *ट्राईकोडर्मा* के छिड़काव का प्रावधान भी किया गया है। इस यंत्र के उपयोग से एक दिन में 1.5 से 2 हेक्टेयर क्षेत्र का प्रबन्धन किया जा सकता है।

गन्ना यांत्रिकीकरण के विकास हेतु सुझाव

आज का युग मशीन का युग है और इस दिशा में हर क्षेत्र में तेजी से प्रगति हो रही है। जरूरी है कि खेती में भी यांत्रिकीकरण हो और विभिन्न कार्यों को सुगमता से कम समय व कम लागत में किया जाये। यांत्रिकीकरण को बढ़ावा देने के लिये केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा किसानों को कृषि यंत्रों व मशीनों की खरीद पर कुछ आर्थिक अनुदान भी दिया जाता है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए कुछ सुझाव भी दिए जा रहे है जो गन्ना यांत्रिकीकरण के विकास को प्रोत्साहन देने की दिशा में सहायक सिद्ध होंगे।

- आधुनिक यंत्रों व मशीनों के प्रचार व प्रसार को बढ़ावा देना चाहिए। किसान के खेतों में मशीनों की दक्षता प्रदर्शित करने के लिए अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों का आयोजन किया जाना चाहिए।
- मशीनों की खरीद पर आर्थिक अनुदान की प्रक्रिया को सरल एवं सर्वसुलभ बनाना चाहिए। कृषि यंत्रों के अनुसंधान व निर्माण पर जोर देना चाहिए। यंत्रों के निर्माण के लिए छोटी-छोटी फर्मों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।
- युवा कृषकों को उन्नत कृषि यंत्रों के संचालन व रख-रखाव पर प्रशिक्षित कर ऋण देकर उन्हें उद्यमी के रूप में विकसित करना चाहिए। सहकारी खेती को बढ़ावा देना चाहिए जिससे अधिक लागत वाली मशीनों का प्रयोग अधिक से अधिक हो सके।

शुगरकेन कटर प्लांटर

ट्रैन्च प्लांटर

पेड़ी प्रबंधन यंत्र

पादप अवशेष टुकड़ा कटाई यंत्र

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

ikoj fVyj dh mfpr n[kHkky] j[k&j[kko o lko/kkuh

l[kchj flag ,oa vf[kys'k dqekj flag
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; XkUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

पावर टिलर का उपयोग आजकल खेती में काफी बढ़ रहा है। किसान इसका उपयोग खेतों में हल्की जुताई व गुड़ाई के लिए कर रहे हैं। आज किसान खेती में यांत्रिकीकरण के महत्त्व को जान गया है और आवश्यकतानुसार वह मशीन खरीद भी रहा है लेकिन मशीन व यंत्रों की मरम्मत, देखभाल व सर्विसिंग की जानकारी का अभाव रहता है जिसके कारण कुछ समय मशीन चलने के बाद उसमें मरम्मत सम्बन्धी समस्या आ ही जाती है और उसको ठीक करवाने में किसान को काफी मशक्कत करनी पड़ती है। अतः किसान को किसी भी कृषि यंत्र व मशीन को बिना किसी बाधा के चलाने के लिये, मरम्मत पर आने वाले खर्च को कम करने के लिये एवं इसकी लम्बी उम्र के लिए यह आवश्यक है कि उसकी उचित देखभाल व रखरखाव की जानकारी हो और उस पर समुचित ध्यान दिया जाए। आमतौर पर किसान भाई निर्माता द्वारा मशीन की देखभाल एवं अनुरक्षण हेतु दिये गए आवश्यक दिशा-निर्देशों पर ध्यान नहीं देते हैं, जिसके कारण मशीन में मरम्मत सम्बन्धी बाधा आ जाती है।

पावर टिलर की उचित देखभाल व रखरखाव के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना जरूरी है :

- सबसे पहले चालक को पावर टिलर की *लॉग-बुक* लगानी चाहिये और उसमें तारीख डालकर हर रोज पावर टिलर का विवरण जैसे कि कितने घंटे चला, कितना तेल डाला, सर्विस करवाई, इंजन आयल बदला (जो कुछ भी किया हो) इत्यादि नोट करना बहुत जरूरी है।
- प्रतिदिन *लॉग-बुक* में नोट करने से चालक को यह पता लगेगा कि मेरा पावर टिलर अब कितने घंटे चल चुका है और मुझे कब सर्विस करवानी है, कब इंजन आयल बदलना है, आदि। अन्यथा चालक को यह बिल्कुल पता नहीं लगेगा और वह अन्धाधुंध चलाता रहेगा जिससे कि पावर टिलर में कुछ न कुछ समस्या आ जायेगी।
- निर्माता द्वारा दी गई पुस्तिका के अनुसार ही पावर टिलर की सविर्सिंग करनी चाहिए।
- डिपस्टिक निकाल कर इंजन आयल का लेवेल चैक करें तथा आयल डिपस्टिक पर बने दो निशानों के बीच में होना चाहिए, कम हो तो और तेल डालें।
- नया खरीदा गया पावर टिलर पहले 50 घंटे की अवधि में हल्के कार्यों जैसे कि मुलायम मिट्टी की जुताई, कम गहराई (10 सें.मी. से कम) तथा कम भार ढ़ोने के लिए ही प्रयोग करना चाहिये।
- पावर टिलर को यदि ढ़लान से उतारना है तो हमेशा घुमाकर (सीधा उतारने की बजाय उलटाकर) *रिवर्स गीयर* में उतारना चाहिए अन्यथा पावर टिलर पलट सकता है।
- पावर टिलर को खेत में कार्य के दौरान घुमाते समय रोटावेटर को बन्द कर लेना चाहिए।
- खेत में कार्य के दौरान यदि पावर टिलर की टाईनों में घास आदि फस जाए तो रोटावेटर को बन्द करके घास आदि निकालना चाहिए।
- हर रोज कार्य के बाद पावर टिलर को साफ करना चाहिये।
- हर रोज पिछले पहिये तथा रोटरी ब्लेडों के बोल्टों की जांच करें। अगर ढीलें हों तो बदल दें।
- एयर क्लीनर में तेल की मात्रा की जांच करें, यदि तेल निर्धारित चिन्ह से कम हो तो और तेल डालें।
- यदि इंजन धूल वाले क्षेत्र में चलता हो तो एयर क्लीनर की प्रतिदिन जांच करके इसकी सफाई करें और तेल को बदल देना चाहिए।
- 100 घंटे के बाद पावर टिलर की सर्विसिंग करवा लेनी चाहिए।
- रेडियेटर में पानी की सही मात्रा सदैव बनी रहनी चाहिए यह चालक को हर रोज ध्यान रखना आवश्यक है। साफ पानी का ही प्रयोग करें।
- फैन बैल्ट का तनाव ठीक रखना चाहिये। फैन बैल्ट न तो ज्यादा ढीली, न ही ज्यादा टाईट होनी चाहिए।
- रेडियेटर की फिनों को समय-समय पर साफ करते रहना चाहिए।
- 50 घंटे कार्य के बाद डीजल फिल्टर को साफ करें और 500 घंटे के बाद बदल देना चाहिए।
- इंजन ऑयल 100 घंटे के बाद बदल देना चाहिए।

- गियर बॉक्स में तेल की मात्रा की जांच करें तथा 300 घंटे के बाद बदल देना चाहिये।
- 300 घंटे के बाद रोटावेटर चेन केस में तेल बदल देना चाहिये।
- रेडियेटर को 300 घंटे कार्य के बाद ड्रेन प्लग खोलकर साफ करें और ऊपर से साफ पानी डालते रहें, जब तक कि नीचे से साफ पानी निकलना न शुरू हो जाए।
- यदि डीजल की लाइन में हवा प्रवेश कर जाए तो, डीजल फिल्टर के एयर ब्लीडर स्क्रू को ढीला करें। ऐसा करने से हवा के बुलबुले डीजल के साथ-साथ बाहर आने लगेंगे।
- इंजन के क्रैंक केस, गियर बॉक्स, रोटरी टिलर के गियर बॉक्स, चेन केस आदि में ठीक गुणवत्ता का स्नेहन तेल डालते रहना चाहिए।
- डीजल फिल्टर को डीजल तथा पेट्रोल से ही साफ करना चाहिए।
- पावर टिलर के पहिये के वाल्व की टोपी सदैव लगी रहनी चाहिए।
- धान की मचाई के लिए लोहे के पहिये एवं टेल स्किड का प्रयोग करना चाहिए।
- लोहे के पहियों के साथ पावर टिलर को सख्त जमीन पर न चलायें अन्यथा इसकी धुरी और बेयरिंग आदि खराब हो सकते हैं।
- पावर टिलर के पहियों में हवा का दबाव पूरा होना चाहिये।
- चालक को सीजन शुरू होने से पहले अपने पावर टिलर की अच्छे से जाँच कर लेनी चाहिये तथा कुछ ज्यादा टूटने या बदलने वाले पुर्जें पहले ही खरीद कर रख लेने चाहिये ताकि फिर बीच में कोई समस्या न हो।
- जब पावर टिलर का प्रयोग न हो रहा हो तब 3-4 दिन में कम से कम एक बार 15-20 मिनट चलाना चाहिये।
- पावर टिलर को कार्य के बाद किसी शेड में ढ़ककर रखना चाहिये।
- कोई भी मशीन चलाते समय चालक की सुरक्षा बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। अतः चालक को अपनी सुरक्षा का विशेष ध्यान रखना चाहिए ताकि किसी भी दुर्घटना से बचा जा सकें।

इन सब बातों का ध्यान रखने से किसान भाई अपने पावर टिलर को बिना किसी खराबी या रूकावट के अधिक समय के लिये चला सकते हैं एवं मरम्मत पर आने वाले खर्च को भी कम कर सकते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

l;tfur Åtk dk xkeh.k fodkl e egRo

vpuk flg

df"k foKku dUn] ujUn no df"k ,o ik|kfxd fo'ofo|ky;] dekjxt] v;k/;k] eudkij] xk.Mk

विज्ञान के ज्ञान से सर्वथा वंचित रह कर भी हमारे ग्रामीण भाई प्राचीन काल से ही सूर्य को शक्ति का केंद्र मानते रहे हैं। सदियों से सूर्य को सर्वशक्तिमान जानकर इसकी पूजा की जाती हैं। ग्रामीण जीवन सूर्य की ही अपार शक्ति के श्रोत पर आश्रित हैं। आज का शहरी जीवन तो प्रायः सूर्य की शक्ति से अपरिचित हो गया है। कृत्रिम व सीमित शक्तियों पर आश्रित होकर शहरी नागरिक इन साधनों का दास बन गया है। चूँकि प्राकृतिक व कृत्रिम साधनों का दिन प्रतिदिन ह्रास होता जा रहा है। अतः कुछ वर्षों से विश्व में एक हलचल सी मच गई है। हर एक देश में सूर्यजनित शक्ति के प्रयोग का विस्तृत कार्यक्रम बन रहा है। सूर्य-शक्ति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पृथ्वी की सतह पर इसका समान वितरण है। अतः इस शक्ति के उपयोग से पूरे विश्व में सच्चे समाजवाद की स्थापना होने की संभावना दिख पड़ती है। सौर ऊर्जा के समुचित प्रयोग के लिए बड़े-बड़े शहरों का विलय होकर छोटे-छोटे गाँवों में बट जाना संभव दिख पड़ता है।

तेल व पानी द्वारा पैदा की हुई बिजली तो बड़े-बड़े कारखानों की सहायता से पैदा की जाती है और इस प्रकार पैदा की हुई बिजली के मुख्य उपभोक्ता देश के प्रमुख व्यवसायी व शहरी निवासी ही मुख्यतः होते हैं। हमारे देश के ग्रामीण तो तेल, कोयला तथा पानी द्वारा विद्युत से सर्वथा वंचित ही रहते हैं। ये साधन देश में इतना सीमित है कि यदि इसे समान रूप में देशवासियों को उपलब्ध कराया जाय तो सम्भवतः विद्युत प्रत्येक भाग में कुछ ही घंटे उपलब्ध हो सके।

इस सीमित ऊर्जा उत्पादक तेल व कोयला में हमारे ग्रामीणों के साथ भले ही पक्षपात हो परन्तु सूर्यजनित ऊर्जा में ऐसे पक्षपात की किंचित मात्र भी जगह नहीं है। जैसे ग्रामीण अपने खेतों में काम करके अनाज पैदा करता है और सारे देश को अनाज देता है और स्वयं अनाज के लिए किसी के ऊपर आश्रित नहीं रहता, ठीक उसी प्रकार यदि सौर ऊर्जा को भी एकत्र तथा उपलब्ध कराने के संयंत्र देश में बनने लगें तो देश का कोना-कोना इस ऊर्जा को आसानी से प्राप्त कर सकेगा। पूरे विश्व में सौर ऊर्जा को संचित करने हेतु वैज्ञानिक शोध हो रहा है। जब इस दिशा में वैज्ञानिक प्रगति हो जाएगी और सरल एवं सस्ते संयंत्र बन जायेंगें तो विश्व में वास्तविक स्वतत्रंता एवं समान अधिकार का एहसास हो सकेगा। चूंकि सूर्य की ऊर्जा पृथ्वी-क्षेत्र पर समान पड़ती है। अतः इसकी उपलब्धि भी पूरे क्षेत्र में समान हो सकेगी। इस प्रकरण के फलस्वरूप विश्व में छोटे-छोटे गाँव भी सर्व-शक्तिमान हो जाएंगे एवं किसी बड़ी व्यवसायी कंपनी का आधिपत्य न हो सकेगा और सम्भवतः विश्व में तब धनी व गरीब का इतना बड़ा दुराव भी समाप्त हो जायेगा।

सूर्य एक अपार शक्ति का स्रोत है और अपनी शक्ति से पृथ्वी पर मौसम को नियंत्रित करता रहता है। सूर्य-जनित प्राकृतिक साधनों में वर्षा, हवा, तूफान व गर्मी प्रमुख हैं। हर एक में सूर्य की ऊर्जा निहित है। कभी-कभी इसकी प्रचुरता होने के कारण मौसम की विषमता से बचने के लिए हम कृत्रिम साधनों का प्रयोग गर्मी में सर्दी तथा सर्दी में गर्मी पैदा करने के लिए करते हैं। सूर्य की शक्ति का अनुमान तो साधारण मनुष्य को तब होता है जब गर्मी की कड़ी दोपहरी में घने बादलों के सिर के ऊपर से गुजरने से एक अनोखी राहत प्रदान होती है। अतः पृथ्वी की संपूर्ण सतह पर 100 हजार खरब किलोवाट शक्ति सूर्य से प्रति घंटे प्राप्त होती है। यह शक्ति संपूर्ण विश्व में पैदा की हुई संपूर्ण विद्युत शक्ति का कई लाख गुना अधिक है। इतनी अपार शक्ति प्रतिदिन प्रदान करने के पश्चात भी सूर्य का तापक्रम सदैव एक-सा बना रहता है यह है विधि का विधान और विश्व को इससे सीख लेनी चाहिए।

कृषि, बागवानी तथा वानिकी सौर ऊर्जा को जैवभार में बदलने की मुख्य क्रियाएं हैं। जैसे खाना, चारा, रेशा, जलाऊ लकड़ी एवं अन्य आर्थिक क्रियाएं। प्राकृतिक ऊर्जा सूर्य की रोशनी से, हवा, बहती हुयी नदियाँ, झरने एवं जैवभार को पहले से ही ऊर्जा के मुख्य रूप से प्रयोग किया जा रहा है।

सूर्य-जनित ऊर्जा प्राप्त करने के उपाय

सूर्य-जनित ऊर्जा को पृथ्वी पर प्राप्त करने के तीन प्रमुख उपाय हैं और यदि इस ऊर्जा को प्राप्त करने के सरल संयंत्र बन जाएं तो विश्व की ऊर्जा समस्या का सदैव के लिए समाधान हो जाय। विश्व में इस दिशा में निरंतर शोध हो रहा हैं। पहला तरीका यह है कि हम सूर्य की किरणों को एकत्रित करके उससे ऊर्जा प्राप्त करें। इन किरणों में अपार ऊर्जा निहित है। कई देशों में इस सिद्धांत पर सोलर-कुकर (खाना पकाने का चूल्हा) का प्रयोग बड़ी संख्या में किया जा रहा है।

डीजल एवं पेट्रोल जो ईंधन के रूप में प्रयोग हो रहे हैं उनका भंडार धीरे-धीरे कम हो रहा है और वायु प्रदूषण बढ़ रहा है। इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि ऊर्जा की पूर्ति के लिए गैर परम्परागत एवं प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों का दोहन किया जाय। ऊर्जा के विभिन्न वैकल्पिक स्रोतो में सौर ऊर्जा, जैविक पदार्थों से प्राप्त जैव ऊर्जा, पवन ऊर्जा, भूगर्भीय एवं समुद्री जल से उपलब्ध ऊर्जा प्रमुख हैं। इनमें से सौर ऊर्जा हर जगह उपलब्ध एवं अनन्त है। यह प्रदूषण रहित ऊर्जा स्रोत है। ग्रामीण क्षेत्रों की अधिकाश आवश्यकताओं की पूर्ति इससे संभव है। भारत के अधिकांश क्षेत्रों में साल में करीब 220 दिन सौर ऊर्जा प्राप्त होती है। यह ऊर्जा स्रोत के दोहन में निम्नलिखित दो बाधाएं रही हैं -

पहला पृथ्वी की सतह पर सूर्य की किरणों की सघनता कम होने के कारण ऊर्जा को एकत्रित करने वाले संचायकों का आवश्यक क्षेत्रफल अधिक होना चाहिए जिसके कारण सौर उपकरण की लागत काफी हो जाती है।

दूसरा सौर ऊर्जा नियमित, समान तथा रात्रि को नहीं मिलती है जिससे ऊर्जा के स्रोत का नियमित उपयोग करने में कठिनाईयाँ आती हैं और रात्रि के प्रयोग के लिए अतिरिक्त ऊर्जा भंडार का प्रबंध करना पड़ता हैं।

चूंकि सौर ऊर्जा एक स्वच्छ एवं मूल्यहीन ईंधन है अतः इसका प्रयोग अधिकांश स्थितियों में लाभकारी होता है।

सौर ऊर्जा के उपयोग

- सौर ऊर्जा द्वारा घरेलू उपयोग के लिए पानी गर्म करना
- सौर ऊर्जा द्वारा घर का भोजन पकाना
- इसके द्वारा पम्प से फसलों की सिंचाई करना
- अनाजों, फलों व सब्जियों को सुखाना
- इससे दैनिक आवश्यकता के लिए बिजली पैदा करना
- खराब एवं क्षारीय जल का शुद्धिकरण
- सौर ऊर्जा शीतक द्वारा फल एवं सब्जियों का भंडारण
- ग्रीन हाउस तकनीक द्वारा फसलों एवं सब्जियों का भंडारण
- सुदूर के क्षेत्रों में बिजली के वैकल्पिक स्रोत के रूप में उपयोग।

ऊर्जा नवीनीकरण ग्रामीण क्षेत्रों के लिये क्यों?

ऊर्जा नवीनीकरण संसाधन बहुतायत मे क्षेत्र विशेष में साधारण रूप से निःशुल्क उपलब्ध हैं, जैसे सूर्य, हवा, पानी के झरने, जैवभार इत्यादि। ग्रामीण लोग इसे बहुत पहले से प्रयोग करते आ रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों के लिए नवीनीकृत ऊर्जा संसाधन निम्नवत हैं :

सौर जल उष्मक *(सोलर गीजर)*

यह सौर ऊर्जा के उपयोग का एक अत्यंत लोकप्रिय उपकरण है। इससे घर, फार्म तथा पंचायत के लिए आवश्यक पानी की पूर्ति हो सकती है। ये अनेक क्षमताओं में 50, 100 तथा 200 लीटर की क्षमता में उपलब्ध हैं। इससे सर्दियों में 50 तथा गर्मियों में 80 डिग्री से. तक आसानी से पानी गर्म किया जा सकता है। ये सौर जल उष्मक जल भंडारण टैंक के साथ उपलब्ध हैं।

सोलर कुकर

यह सौर ऊर्जा के उपयोग का सबसे सस्ता एवं उपयोगी उपकरण है। भारत में अनेक प्रकार के सोलर उपकरण विकसित किए गये हैं। यह कुकर बनावट में अत्यंत साधारण होने के कारण स्थानीय कारीगरों द्वारा बनाए जा सकते हैं। इससे घर के 2 से 5 सदस्यों के परिवार की भोजन की आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है। गर्मियों में एक या दो बार बरसात की खुली धूप में एक बार भोजन पकाया जा सकता है। इसमें सिर्फ रोटी नहीं सेंकी जा सकती है। इसके निम्नलिखित बहुत सारे लाभ हैं :

- इससे गर्मियों में 30 से 50 मिनट तथा जाड़ों में 1 से 2.5 घंटे में दाल, चावल, सब्जी आदि को पकाया जा सकता हैं।
- भोजन पकाने के बाद 5 घंटे गर्म रहता है। भोजन पकाते समय जलता नहीं है।
- भोजन धीरे-धीरे पकता है, अतः भोजन के पौष्टिक पदार्थ नष्ट नहीं होते तथा खाना स्वादिष्ट होता है।
- खाना पकाते समय बीच-बीच में देखने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस प्रकार बचे समय को गृहणी किसी अन्य लाभदायक कामों में ला सकती है।

सौर शुष्कक

सूरज की धूप में अनाज, फल तथा सब्जियों को सुखाने के लिए सौर शुष्ककों का प्रयोग किया जाता है। सौर शुष्कक में ऊर्जा संग्राहक द्वारा वायुमंडल की हवा में गर्म किया जाता है। इस गर्म हवा को पंखे या प्राकृतिक प्रवाह से अनाज के भंडार कक्ष में भेजा जाता है जहाँ पर फसल के सूखने में मदद मिलती है।

सौर जल पम्प

सौर ऊर्जित जल पम्प उथले कुओं, तालाबों तथा अन्य ऐसी ही स्रोतों से पानी निकालने का उत्तम साधन है। इनसे छोटे स्तर पर सिंचाई करने या घरेलू आवश्यकताओं के लिए सफलतापूर्वक पानी उठाया जा सकता है। सौर ऊर्जा के तापीय प्रभाव से किसी अनुकूल विशिष्ट द्रव जैसे अमोनिया आदि को भाप में बदलकर इंजन चलाकर जल पम्प चलाना अधिक प्रभावशाली होता है। इनको 'फोटो वोल्टेक जल पम्प' या 'सौर बैटरी जल पम्प' कहते

हैं। 360 वाट के सौर जल पम्प में लगी 24 वोल्ट डी.सी. मोटर गहरे कुएं से पानी उठाकर ऊँचाई तक टंकी में सीधे फेंक सकती है। इस प्रकार के पम्प सेट की गति लगभग 2,000 ली. प्रति घंटा होती है। इस पम्प सेट के साथ विद्युत ऊर्जा के संग्रह के लिए एसिड संचालक बैटरी का प्रावधान किया जाता है। इससे दिन में बिजली इकट्ठा करके रात्रि को या आकाश में बादल होने पर 12-13 घंटे के लिए पम्प को चलाया जा सकता है। इन सौर ऊर्जा जल पम्पों के व्यापक उपयोग में इनकी अत्यधिक प्रारम्भिक लागत बाधक होती है। आजकल ये पम्प प्रधानमंत्री योजना के अंर्तगत अनुदान पर उपलब्ध कराएं जा रहे हैं।

विकसित जीवांश चूल्हा

इसमें 25-50 प्रतिशत कम लकड़ी का प्रयोग होता है। पुराने चूल्हे की तुलना में रसोई घर में धुआँ भी कम होता है, बर्तन कम काले होते हैं, घर की साफ-सफाई अच्छी रहती है तथा महिलाओं एवं बच्चों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। अकेले एवं दोहरे बर्तन प्रयोग का चूल्हा भी उपलब्ध है। दोहरे बर्तन में 4 प्रतिशत अधिक ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। करीब 40-50 प्रतिशत खाना पकाने के समय में बचत की जा सकती है। हानिकारक गैसें जैसे कार्बन डाई आक्साइड, अमोनिया तथा मिथेन के प्रदूषण से मुक्ति 30-80 प्रतिशत तक घटी है। इसे बनाने के लिये ईंट, सीमेन्ट, बालू का प्रयोग होता है। कीमत एकल चूल्हे की करीब ₹ 200/- तथा दोहरे चूल्हे की कीमत ₹ 270/- है।

बायो गैस संयंत्र

- प्रदूषण मुक्त खाना पकाने के लिये दिन एव रात ईंधन की प्राप्ति सम्भव है।
- धुआँ कम होने से महिलाओं एवं बच्चों का स्वास्थ अच्छा रहता है।
- यह एल.पी.जी. गैस की तरह ही जलता है तथा बर्तन काले नहीं होते हैं।
- धुआँ न होने की वजह से घर का रख-रखाव ठीक रहता है। खाना बनाने में समय की बचत तथा ईंधन इकट्ठा करने का समय बचता है। उच्च गुणवत्ता की खाद प्राप्त होती है।
- रोशनी के प्रयोग के लिये भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। गोबर गैस संयन्त्र से कुल ₹ 2710 प्रति वर्ष बचाए जा सकते हैं।

सोलर ड्रायर्स (घरेलू पदार्थों को सूर्य की रोशनी से सुखाने वाला यंत्र)

- घरेलू चीजों को सुखाने के लिये सौर्य *ड्रायर्स* का प्रयोग किया जाता है जैसे मिर्ची, आलू के चिप्स, हल्दी, अदरक, पत्ते वाली सब्जी, इत्यादि को सुखाने के लिये।
- इसमें तीन रैक होती हैं जिसमें 1-3 कि.ग्रा. पदार्थ एक बार में रख सकते हैं।
- बिजली की इसमें जरूरत नहीं पड़ती है।
- ये हरे पदार्थों को 2-4 दिन में 80 प्रतिशत नमी से 10 प्रतिशत नमी तक सुखा देता है।
- इसकी कीमत ₹ 2,000/- तक है।

सौर ऊर्जा से पानी गरम करने का हीटर

- यह हीटर सूर्य की गर्मी से ही पानी गर्म करता है।
- इसके रख-रखाव पर कम खर्चा आता है। केवल धूल की सफाई करनी पड़ती है।
- एक दिन में 100 लीटर पानी गर्म किया जा सकता है जबकि 60 डिग्री सेल्सियस तापक्रम तक 300 लीटर क्षमता वाले पानी गर्म करने वाले हीटर उपलब्ध हैं।
- इसकी कीमत ₹ 16,000-22,000 है जो 100 लीटर पानी प्रतिदिन गरम कर सकता है।

सोलर कुकर

- इसका आकार 60×60×17 से.मी. होता है जिसमें खाना बनाने के 3-4 बर्तन एल्यूमिनियम या स्टेनलेस स्टील के उपलब्ध होते हैं।
- सब्जी बनाने में 1-2 घंटा; दाल, मांस तथा मूंगफली, इत्यादि को भुनने में 2-3 घंटा लगता है।
- इसमें खाना जलता नहीं या ज्यादा नहीं पकता है। कम तापक्रम पर अधिक समय में बना खाना ज्यादा गुणवत्ता वाला होता है।
- इसकी कीमत ₹ 1,400-3,000 के मध्य आकार के अनुसार कम या ज्यादा होती है।
- 3-6 आदमी का खाना *बॉक्स टाइप सोलर हीटर* से बनाया जा सकता है।

सोलर फोटो वोल्टेक पम्प

- बिजली या डीजल इंजन की जरूरत नहीं है।
- जहाँ बिजली की उपलब्धता नहीं है वहाँ पर इसका प्रयोग किया जा सकता है।
- कम लागत की एवं रख-रखाव की जरूरत है। धूल से बचाना एंव साफ रखना आवश्यक है।
- 1,40,000 लीटर पानी प्रतिदिन निकाला जा सकता है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

LVhfo;k jckMh;k ¼LVhfo;k½
0 ifr'kr dSyksjh] 100 ifr'kr ehBk] 100 ifr'kr çk—frd

vHk; dqekj JhokLro] oh-ih- t;loky] ,l-d- 'kqDy] ykyu 'kek] vk'kk xkSM ,oa jk?koUæ frokjh
Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

स्टीविया कार्बोहाइड्रेट एवं वसा मुक्त होने की वजह से कैलोरी मुक्त स्वीटनर के रूप में नया उभरता हुआ वैकल्पिक स्रोत है। यह गन्ने और चुकंदर की तुलना में 20 से 30 गुना अधिक मीठा होने के साथ स्वादिष्ट, बेहद पौष्टिक एवं गैर विषैला और गैर-एडिटिव खाद्य पदार्थ है। स्टीविया में पाए जाने वाले सक्रिय घटकों को दुनिया के अग्रणी खाद्य वैज्ञानिकों द्वारा भविष्य की मिठास के रूप में माना जाता है।

स्थानीय नाम

स्टीविया, कैंडी पत्ती, मीठा पत्ता, *स्वीट हनी लीफ,* चीनी पत्ता, मीठी जड़ी बूटी, पैराग्वे की मीठी जड़ी बूटी, *हनी येरबा, हनी लीफ, रेबिना* या *वान,* का *झी।*

पादप विवरण

स्टीविया एक बारहमासी पौधा है जो एक मीटर की लम्बाई तक बढ़ता है तथा इसकी पत्तियां 2-3 से.मी. लम्बी समानांतर क्रम में होती हैं। प्राकृतिक अवस्था में यह 50-100 से.मी. तक जबकि खेती में यह 120 से.मी. तक बढ़ता है। इसके फूल सफेद व छोटे, बैंगनी रंग के गले वाले होते हैं। इसके पराग कण अत्यधिक एलर्जी वाले हो सकते हैं।

वितरण

स्टीविया वंश में 240 प्रजातियों के पौधे मुख्यतः दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और मैक्सिको में पाए जाते हैं। इसके अलावा बहुत सारी प्रजातियाँ सुदूर उत्तर में एरिजोना, न्यू मैक्सिको और टेक्सास में पाई जाती हैं। *स्टीविया* पौधे की पत्तियाँ सामान्य चीनी से 30-45 गुना अधिक मीठी होती हैं जो कि दक्षिण अमेरिका में अब सामान्यतया मानव उपभोग में लायी जाने लगी हैं।

पारंपरिक उपयोग

स्टीविया की पत्तियों का मधुमेह के उपचार में पारंपरिक रूप से इस्तेमाल किया गया है। सोलहवीं शताब्दी में यूरोपीय लोगों ने इसका उपयोग हर्बल चाय को मीठा करने में शुरू किया तब से *स्टीविया* यूरोप और एशिया भर में व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने लगा। उसके बाद से संयुक्त राज्य अमेरिका में चिकित्सकों ने *स्टीविया* की पत्ती का उपयोग मधुमेह, उच्च रक्तचाप, संक्रमण इत्यादि के इलाज में करना शुरू कर दिया।

ब्राजील और पैराग्वे में लोग *स्टीविया* की पत्तियों का इस्तेमाल सैकड़ों वर्षों से करते आ रहे हैं। ब्राजील में यह अवसाद, मधुमेह, थकान, उच्च रक्तचाप, उच्च ग्लाइसीमिया, संक्रमण, मोटापा, घाव इत्यादि के इलाज में उपयोग में लाया जाता है। वे इसका उपयोग एक कार्डियो टॉनिक के रूप में भी करते हैं। दक्षिण अमेरिका में यह मधुमेह, उच्च रक्तचाप, संक्रमण और मोटापे इत्यादि में एक स्वीटनर के रूप में प्रयोग किया जाता है।

औषधीय उपयोग

स्टीविया अविश्वसनीय मिठास वाली बहुमुखी जड़ी बूटी है जिसका हर्बल दवाओं में सुरक्षित रूप से इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके अलावा इसका उपयोग मधुमेह के रोगियों के लिए टॉनिक के रूप में और दैनिक उपयोग के उत्पादों में भी करते हैं। इसकी पत्तियों से निकाला गया रस चीनी की मिठास से 300 गुना अधिक मीठी होता है। इसी कारण से, *स्टीविया* की कम कार्बोहाइड्रेट, कम चीनी वाले भोजन के विकल्प के रूप में मांग बढ़ी है। चिकित्सा अनुसंधान में भी *स्टीविया* के मोटापा और उच्च रक्तचाप के इलाज में संभावित लाभ पाया गया है। *स्टीविया* की पत्तियों के पाउडर को मुर्गी के भोजन में खिलाने पर अंडे की खोल के टूटने में 75 प्रतिशत तक की कमी पाई गयी जिससे *ऑस्टियोपोरोसिस* में इलाज की संभावना देखी जा रही है।

स्टीविया हाइपोग्लाइसीमिक, कार्डियो टॉनिक, खून को पतला करने वाला, रोगाणुरोधी, पाचन टॉनिक, मूत्रवर्धक, एंटीहाइपरटेंसिव और भूख उत्तेजक औषधि है। यह मसूड़े की सूजन, मुँहासे, पाचन समस्याओं, मुंह के छाले, जलन, एक्जिमा, और सूजन इत्यदि में भी उपयोगी है। यह स्वाद को बढ़ाने, पाचन शक्ति बढ़ाने व वजन घटाने में सहायक, दंत क्षय रोकने एवं एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर औषधीय पौधा है। यह रक्त शर्करा के स्तर को प्रभावित किए बिना ही शरीर में ऊर्जा के स्तर को बढ़ाता है, इसलिए मधुमेह के रोगियों के लिए यह स्वीटनर का एक महत्वपूर्ण स्रोत हो गया है।

भोजन में उपयोग

परंपरागत रूप से, *स्टीविया* हर्बल चाय में चीनी की जगह उपयोग में आने के अलावा भोजन में स्वादवर्धक के रूप में प्रयोग में लाते हैं। इसकी ताजा पत्तियों को खाया जा सकता है, या चाय और खाद्य पदार्थों में डाल सकते हैं। यह भोजन, मिठाईयाँ, बेकरी, फलों के रस, जैम, बिस्कुट, चॉकलेट, सब्जियों और अन्य खाद्य सामग्री के लिए चीनी के वैकल्पिक स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है। स्टेविया पत्ती की हल्की चाय पेट की परेशानियों में उत्कृष्ट राहत प्रदान करती है।

रासायनिक घटक

स्टेवियोल, *स्टीविया* में पाए जाने वाले ग्लाइकोसाइड का मूल निर्माण खंड है। *स्टीविया* में प्रमुख पोषक तत्व प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, राख और कच्चे फाइबर क्रमशः 9.8, 2.5, 52, 10.5 और 18.5 ग्राम/100 ग्राम पाया जाता है। स्टेविया प्रोटीन, राख और कच्चे फाइबर का अच्छा स्रोत है।

खेती करने का तरीका

स्टीविया की खेती पूरे भारत में वर्ष भर सफलतापूर्वक कर सकते हैं परन्तु ऐसे क्षेत्र, जहाँ बर्फबारी होती हैं, या तापमान सर्दियों में 5 डिग्री सेल्सियस से नीचे जाता है वहाँ इसकी खेती नहीं कर सकते। गर्मियों में उच्च तापमान का इसकी खेती या पैदावार पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ता है।

मिट्टी के प्रकार और भूमि की तैयारी

रेतीली दोमट मिट्टी *स्टीविया* की खेती के लिए उपयुक्त है। मिट्टी ठीक तरह से जुती हुई और तटस्थ पीएच स्तर की होनी चाहिए। प्रति एकड़ 30,000 पौधों को 25-40 से.मी. की दूरी पर बुवाई करनी चाहिए। खेत की तैयारी के समय 25 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर उपयोग करना अच्छी पैदावार के लिए उपयुक्त होता है।

पौधे को लगाने की प्रक्रिया

चूंकि *स्टीविया* में बीज अंकुरण की दर बहुत खराब है, अतः इसे वानस्पतिक रूप से लगाया जाना अच्छा रहता है। तनों से कलम तैयार कर उनसे वानस्पतिक टिशू कल्चर द्वारा *स्टीविया* की अच्छी रोपण सामग्री तैयार कर सकते हैं। *स्टीविया* के टिशू कल्चर पौधे आनुवंशिक रूप से, शुद्ध एवं रोगजनकों से मुक्त व उत्कृष्ट शक्ति वाले होते हैं। अत्यधिक गर्मी के अलावा टिशू कल्चर पौधे साल भर लगाये जा सकते हैं।

सिंचाई

स्टीविया पौधों की सिंचाई के लिए तथा साथ ही साथ अत्यधिक नमी से भी बचाने के लिए *माइक्रो-स्प्रिंकलर/ड्रिप* का उपयोग अच्छी तकनीक है। गर्मियों के महीनों में प्रतिदिन उचित अंतराल पर जबकि सर्दियों के दौरान दिन में सिर्फ एक बार प्रकाश व पानी पर्याप्त रहता है।

उर्वरक

स्टीविया, फॉस्फोरिक एसिड या पोटाश उर्वरकों की तुलना में कम नाइट्रोजन वाली उर्वरकों में अच्छी पैदावार देता है। अधिकांश जैव उर्वरक जो धीरे-धीरे नाइट्रोजन *रिलीज* करते हैं उनका उपयोग अच्छा होता है। चूंकि *स्टीविया* पौधों की जड़ें सतह के पास ही होती हैं, अतः अगर मिट्टी रेतीली है तो अतिरिक्त पोषक तत्वों के लिए खाद डालना अच्छा होता है। उचित उर्वरक की संस्तुत मात्रा 110:45:45 एनपीके/एकड़ है। नाइट्रोजन और पोटाश उर्वरक को अलग-अलग विभाजित कर महीने में दस खुराक के रूप में दिया जा सकता है।

निराई तथा रख-रखाव

इस फसल में कोई कीट और रोग नहीं पाया गया है। यदि कोई बीमारी का लक्षण दिखता है तो नीम का तेल पानी में मिला कर छिड़काव करना सबसे अच्छी जैविक विधि है। घास-फूस इत्यादि को हाथ से ही निकाल देना चाहिए। चूंकि फसल ऊँची क्यारियों पर उगायी जाती है, अतः हाथों से ही आसानी से साफ-सफाई रखी जा सकती है। पौधे में फूल आने से बचाना चाहिए। शिखर की कली को तोड़ते रहने से पौधे में अन्य शाखायें अच्छे से आती हैं।

कटाई व कटाई के बाद की क्रिया

4-5 महीने के बाद पहली फसल की कटाई कर सकते हैं। उसके बाद हर तीन महीने पर तीन साल तक फसल की कटाई कर इसका उत्पाद प्राप्त किया जा सकता है। फूल आने से ठीक पहले पत्तियों को तोड़कर उसे मीठे के रूप में उपयोग में ला सकते हैं क्योंकि इस अवस्था में यह अधिकतम मीठा होता है। सिर्फ पत्तियां या फिर पौधे के निचले हिस्से से 10 से 15 से.मी. छोड़ कर पूरी शाखा को उपयोग के लिए तोड़ सकते हैं। काटी गयी शाखाओं को छाया में सुखाकर उससे सूखे पत्ते अलग कर लेते हैं। सूखे पत्तों को पाउडर कर छान लेते हैं और उसका संग्रहण कर उपयोग में लाते हैं।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

सूरजमुखी की वैज्ञानिक खेती

विनोद कुमार सिंह, सुरेश सिंह एवं ऋचा सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, अम्बरपुर, सीतापुर

सूरजमुखी एक महत्वपूर्ण तिलहनी फसल हैं। देश में इसकी खेती जायद, खरीफ एवं रबी में की जाती है परन्तु उत्तरी भारत में अधिकतर इसकी खेती जायद ऋतु में की जाती है। खरीफ ऋतु में सूरजमुखी में कीड़े, बीमारियों एवं खरपतवारों का प्रकोप अधिक होने के कारण जायद में इसे सफलतापूर्वक उगाया जाता है। सूरजमुखी में लगभग 40-50 प्रतिशत तक तेल पाया जाता है साथ ही साथ इसके तेल में कोलेस्ट्रोल की मात्रा कम होने के कारण हृदय रोगियों के लिए अधिक फायदेमंद होता है। अतः इसका तेल खाने के लिए उत्तम माना जाता है। इसकी खली में लगभग 40 से 50 प्रतिशत तक प्रोटीन पायी जाती है। इसलिए मुर्गियों के लिए इसको उत्तम आहार माना गया है। सूरजमुखी का उत्पादन बढ़ाकर तिलहन का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है जिससे तिलहन उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त की जा सकती है।

मृदा एवं जलवायु

सूरजमुखी की खेती सामान्यतः सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती हैं परन्तु दोमट, क्ले दोमट व बलुई दोमट मृदाओं में इसकी खेती अच्छी प्रकार से की जा सकती है। इसकी खेती के लिए मृदा का पी.एच. सामान्य होना चाहिए अर्थात् अम्लीय एवं क्षारीय मृदा में इसकी खेती सफलतापूर्वक नहीं की जा सकती है। इसके लिए उपयुक्त मृदा में जीवाश्म की मात्रा एवं जल निकास उत्तम होना चाहिए।

मृदा की तैयारी

मृदा में पर्याप्त नमी के अभाव में पलेवा लगाकर एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के पश्चात् 2-3 जुताई देशी हल से करके मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए। गन्ना की कटाई के बाद खाली पड़े खेत में यदि सूरजमुखी की बुआई करनी है तो खेत की जुताई रोटावेटर से कर लेना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

सूरजमुखी की प्रमुख प्रजातियों का विवरण निम्नवत् हैः

अ. संकुल

मार्डनः इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई 80-100 से.मी. तथा फूल का व्यास 12-15 से.मी. होता है। इसके पकने की अवधि 75-80 दिन तथा औसत उपज 10-12 क्विंटल/हेक्टेयर एवं तेल का प्रतिशत 38 होता है।

सूर्याः इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई भी लगभग 80-100 से.मी. तथा फूल का व्यास 12-15 से.मी. होता है। इसके पकने की अवधि 80-85 दिन तथा औसत उपज 12-15 क्विंटल/हेक्टेयर एवं तेल का प्रतिशत 35-37 होता है।

ई.सी. 68413ः इसके पौधे की ऊँचाई 160-180 से.मी. तथा फूल का व्यास 16-20 से.मी. होता है। यह 90-100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 15 से 22 क्विंटल/हेक्टेयर एवं तेल का प्रतिशत 44 तक पाया जाता है।

ई.सी. 69874ः इसके पौधों की ऊँचाई 120-140 से.मी. तथा फूल का व्यास 12-16 से.मी. होता है। यह 95-102 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 10-15 क्विंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 43 प्रतिशत पायी जाती है।

ब. संकर किस्में

एस.एम.एफ.एच. 17ः इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई 140-150 से.मी. तथा फूल का व्यास 15-20 से.मी. होता हैं। इसकी फसल अवधि 90-95 दिन होती है। इसकी औसत उपज 18-20 क्विंटल/हेक्टेयर तथा तेल का प्रतिशत 35-40 होता हैं।

के.वी.एस.एच. 1ः इस प्रजाति के पौधों की ऊँचाई 150-180 से.मी. तथा फूल का व्यास 15-20 से.मी. होता है। इसकी फसल अवधि 90-95 दिन होती हैं। इसमें उपज 18-20 क्विंटल/हेक्टेयर तथा तेल का प्रतिशत 43-45 होता है।

संजीव 85ः इसके पौधों की ऊँचाई 140-145 से.मी. तथा फूल का व्यास 15-20 से.मी. होता है। यह 85-95 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 20 क्विंटल/हेक्टेयर तथा 40-42 प्रतिशत तेल पाया जाता है।

एम.एच. 3332ः इसके पौधों की ऊँचाई 160-200 से.मी. एवं फूल का व्यास 18-22 से.मी. होता है। यह 85-95 दिन में पककर तैयार हो जाती हैं। इसकी औसत उपज 20-25 क्विंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 40-42 प्रतिशत पायी जाती है।

पी.ए.एस. 30: इसके पौधों की ऊँचाई 160-175 से.मी. तथा फूल का व्यास 16-20 से.मी. होता है। यह 90-95 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। इसकी औसत उपज 25-28 किवंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 40-42 प्रतिशत पायी जाती है।

डब्ल्यू.एफ.एस. 2282: इसके पौधों की ऊँचाई 120-150 से.मी. तथा फूल का व्यास 20-23 से.मी. होता है। यह 85-95 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 25-28 किवंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 41-43 प्रतिशत पायी जाती है।

आई.सी.आई. 36: इसके पौधों की ऊँचाई 150-175 से.मी. होती है। यह 80-90 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 20-25 किवंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 38-40 प्रतिशत होती है।

ज्वालामुखी: इसके पौधों की ऊँचाई 145-155 से.मी. तथा फूल का व्यास 20-23 से.मी. होता है। यह 90-95 दिन में पककर तैयार हो जाती है। इसकी औसत उपज 25-28 किवंटल/हेक्टेयर तथा तेल की मात्रा 40-42 प्रतिशत पायी जाती है।

बुआई का समय व विधि

जायद ऋतु में सूरजमुखी की बुआई का उचित समय फरवरी माह का दूसरा पखवाड़ा है। उचित समय से की गयी बुआई से फसल मई के अंत या जून के प्रथम सप्ताह तक पककर तैयार हो जाती है। विलम्ब से बुआई करने पर कभी-कभी मानसूनी वर्षा से कटाई के समय समस्या होती है तथा पैदावार में नुकसान होता है।

इसकी बुआई 45-60 से.मी. दूरी पर बनी पंक्तियों में 25-30 से.मी. की दूरी पर करना चाहिए। बीज की बुआई *सीड ड्रिल* या हल के पीछे कूँड़ में 4-5 से.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। जमाव के बाद व सिंचाई से पूर्व आवश्यकतानुसार विरलीकरण कर लेना चाहिए।

बीज एवं बीज शोधन

एक हेक्टेयर क्षेत्र की बुआई के लिए संकुल प्रजाति की 12-15 कि.ग्रा. तथा संकर प्रजाति के 5-6 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बीजों को पानी में 12 घण्टे के लिए भिगो देना चाहिए। तत्पश्चात् पानी को निथार कर 3-4 घण्टे छाया में सुखाना चाहिए। बुआई के पूर्व बीज को *कार्बेण्डाजिम* की 2 ग्राम या थीरम की 2.5 ग्राम या *ट्राइकोडर्मा* की 5 ग्राम मात्रा/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

सूरजमुखी की अच्छी उपज के लिए 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश का प्रयोग/हे. की दर से करना चाहिए। नत्रजन की 2/3 मात्रा एवं फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई के समय *टॉप ड्रैसिंग* के रूप में देना चाहिए। सूरजमुखी की खेती में बुआई के समय 200 कि.ग्रा./हे. की दर से जिप्सम का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। यदि कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी खाद उपलब्ध हो तो 3-4 टन/हे. की दर से खेत की तैयारी के पूर्व प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई

भारी भूमि में जायद ऋतु में अच्छी फसल के लिए 3-4 सिंचाई तथा हल्की भूमि में 4-5 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई बुआई के 20-25 दिन बाद आवश्यक है। कली बनते समय, फूल खिलते समय एवं मुण्ड़क में दाना भरते समय नमी की कमी होने पर उपज घट जाती है। हवा चलने की दशा में सिंचाई करने पर पौधे गिर जाते हैं जिससे उपज में गिरावट आ जाती है।

खरपतवार नियंत्रण

सामान्यत्या दो निराई-गुड़ाई, पहली बुआई के 20 दिन बाद तथा दूसरी 35 दिन बाद कर देनी चाहिए। रासायनिक नियंत्रण के लिए *पेन्डीमिथेलीन* 30 प्रतिशत की 3.3 ली. मात्रा/हे. की दर से 500-600 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के एक से दो दिन बाद छिड़क देना चाहिए।

मिट्टी चढ़ाना

सूरजमुखी के पौधे काफी बड़े होते हैं तथा फूल का वजन ज्यादा होने के कारण पौधों के गिरने का भय रहता है। इससे बचने के लिए नत्रजन की *टॉप ड्रेसिंग* के बाद पौधों पर दोनों तरफ से 10-15 से.मी. मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

अ. कीट नियंत्रण

सूरजमुखी में मुख्यतः दीमक, हरा फुदका, डस्कीबग तथा चने का फली बेधक कीट नुकसान पहुँचाते हैं।

1. **दीमक** : इस कीट के श्रमिक पौधों को खाकर फसल को भारी क्षति पहुँचाते हैं।

नियंत्रण

- पूर्व फसल के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- कच्चे गोबर का प्रयोग खेत में नहीं करना चाहिए।
- दीमक प्रकोपित क्षेत्रों में अंतिम जुताई करते समय *फ्यूराडॉन* 25-30 कि.ग्रा./हे. की दर से खेत में मिला देना चाहिए।
- खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ *क्लोरपायरीफास* 20 ई.सी. की 2 से 3 ली. मात्रा का प्रयोग/हे. की दर से करनी चाहिए।

2. **हरा फुदकाः** इस कीट के प्रौढ़ तथा शिशु पत्तियों से रस चूसकर हानि पहुँ चाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु *मिथाईल आ-डिमेटान* 25 ई.सी. की 1 ली. मात्रा या *इमिडाक्लोप्रिड* की 100 मि.ली. मात्रा को 600 ली. पानी में घोल बनाकर/हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।
3. **डस्की बगः** यह सुरमई रंग की छोटी-छोटी बग होती है जो पत्तियों के डंठल एवं मुडंक की निचली सतह से रस चूसकर हानि पहुँचाती है। हरे फुदके के लिए प्रयोग की गयी कीटनाशी से इसका भी नियत्रंण हो जाता है।
4. **चने का फली बेधक कीटः** इस कीट की सूडियां मुंण्डक में बन रहे बीजों को खाकर काफी हानि पहुँचाती हैं।

नियंत्रण

1. इसके सर्वेक्षण के लिए 5 तथा नियंत्रण के लिए 10 से 12 गंधपाश/हे. की दर से लगाना चाहिए।
2. प्रति गंधपाश 5 से 6 पंतगे/रात्रि लगातार 2-3 रातों तक आने के 8 से 10 दिन पश्चात् एच.एन.पी.वी. 300 सूड़ी समतुल्य मात्रा को पानी में घोलकर सांयकाल छिड़काव करना चाहिए। एक ग्राम टिपाल/ली. घोल में मिला देने से परिणाम अच्छे मिलते हैं अथवा *इन्डोक्साकार्ब* की 500 मि.ली. मात्रा/हे. की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

ब. रोग नियंत्रण

जायद ऋतु में सूरजमुखी में पत्ती का झुलसा, *स्क्लेरोशिया तना सड़न, चारकोल तना सड़न, मुण्डक सड़न* आदि बीमारियों से फसल को नुकसान होता है।

1. पत्ती झुलसा में सबसे पहले पत्ती की निचली सतह पर गहरे भूरे काले रंग के गोल एवं अण्डाकार चकत्ते बनते हैं फिर ऊपरी सतह पर फैल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए डाइथेन एम-45 की 3 ग्राम मात्रा/ली. पानी की दर से बने घोल का 10 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।
2. *स्केलेरोशियम* तना सड़न में हसिये के आकार के धब्बे पौधों पर बनते हैं। अधिक प्रकोप होने पर तने के निचले भाग में मृदा के ऊपर सफेद रूई की तरह फफूँदी देखी जा सकती है। इससे तना सूख जाता है।

   चारकोल तना सड़न में तने का रंग काला हो जाता है। यह बीमारी फूल आने पर दिखती है। इन दोनों बीमारियों के नियन्त्रण के लिए डाईथेन एम-45 की 2.50 ग्राम मात्रा/ली. पानी की दर से घोलकर 15 दिन के अन्तराल पर 2-3 छिड़काव करना चाहिए।
3. मुण्डक सड़न एक भयंकर बीमारी है जिसमें मुण्डक सड़ जाता है। इसकी रोकथाम के लिए ब्लाइटाक्स 50 का मुंडक या शीर्ष बनते समय 2-3 छिड़काव करें।

पक्षी नियंत्रण

दाने बनते समय तोता फसल को भारी नुकसान पहुँचाता है। इसके लिए बाजार में चिड़ियां भगाने वाले लाल चमकीले रंग के फीते उपलब्ध हैं जिनको खेत में लगाकर फसल को बचाया जा सकता है।

संकर प्रजातियों में मुंडक नीचे झुकने के कारण तोते से नुकसान कम होता है।

उपज

सूरजमुखी फसल की संकुल प्रजातियों की औसत उपज 12-15 कु. तथा संकर प्रजातियों की 20-25 कु./हे. हो जाती है। सूरजमुखी के बीज को सामान्य परिस्थिति के अन्तर्गत भण्डारण किया जा सकता है परन्तु बीजों में 8-10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। बीज से 3 महीने के अन्दर तेल निकाल लेना चाहिए अन्यथा तेल में कडुवाहट आ जाती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

dqlqe o`{k ,oa yk[k dh [ksrh

,-d- tk;loky] ,l-,u- lq'khy ,oa 'kehy jk;

Hkkd`vuqi&Òkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

श्लीचेरा ओलियोसा (कुसुम) सैपिनडेसी कुल का एक काफी बड़े आकार का लाख पोषक वृक्ष है (चित्र 1)। इस वृक्ष की डालियाँ काफी मजबूत एवं घनी होती हैं। मजबूत होने के कारण इस वृक्ष पर चढ़ने में तथा काफी पतली डालियों पर भी जाने में कोई खतरा नहीं रहता।

इस वृक्ष का नाम अलग-अलग भाषाओं में भिन्न-भिन्न है। इसका वैज्ञानिक नाम *श्लीचेरा ओलियोसा* के अतिरिक्त, *कुसम्बियम ओलियोसम, पिस्टासिया ओलियोसा* एवं *स्लीचेरा ट्राइजुगा* नामों से भी जाना जाता है। अन्य भाषाओं में इसका नाम सारणी 1 में दिया है।

देखने में यह वृक्ष महुआ की तरह होता है (चित्र 1, 2)। नई पत्तियाँ लाल कत्थई रंग की होती हैं जो पतझड़ के पश्चात् निकलती है। इसके पके हुये फल जून-जुलाई में मिलते हैं (चित्र 3) और तभी नई पत्तियाँ आने लगती हैं। बीज को तेल बनाने के लिये प्रयोग करते हैं।

पतझड़ का समय ही काट-छाँट का सही समय होता है। लाख फसल कटाई का समय भी पत्तियों के झड़ने के समय से मेल खाता है इसलिये वृक्ष के स्वास्थ पर इसका कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता। घनी पत्तेदार टहनियाँ गर्मी के मौसम में पेड़ों को पर्याप्त छाया प्रदान करती हैं। गर्मी में छाया प्रदान के कारण इसे कई क्षेत्रों में सड़क के किनारे भी लगाया जाता है।

सारणी 1. *श्लीचेरा ओलियोसा* के सामान्य नाम

Ø-la-	Hkk"kk	izpfyr uke
1	गुजराती	कुसुम
2	हिंदी	कुसम्ब, कुसुम
3	कन्नड़	चकोटा, सागडे
4	कोकणी	कोसिम्ब
5	मलयालम	पूवम, दूदलम, पूवनम, दूतलम, पूवती
6	मराठी	कुसुंब, कौशिम्ब
7	संस्कृत	कुसुंभ
8	तमिल	करनची, कोंची, पूनम, पूमराठा, पूवथी, कूमपत्ती, पूलीची पूवम
9	तेलुगू	बसी, कोसांगी

चित्र 1: कुसुम वृक्ष पर नई पत्तियाँ

चित्र 2: कुसुम वृक्ष पर पुरानी पत्तियाँ

चित्र 3: कुसुम वृक्ष के फल

वृक्ष से पाये जाने वाले उत्पाद एवं गुण

चाराः पत्तियाँ, नर्म टहनियाँ एवं बीज से निकली खली को पालतू जानवर के चारा के रूप में उपयोग किया जाता है। 100 ग्राम सूखी पत्ती में लगभग 10.5 ग्रा. प्रोटीन, ईथर का सत्त 2 ग्रा., नाइट्रोजन युक्त सत्त 49 ग्रा. और रेशा 32.5 ग्रा.।

भोजनः पके हुये फल के गूदे को लीची की भाँति खाया जाता है जबकि कच्चे फल का अचार बनाया जाता है। इसकी खली में लगभग 5.5 प्रतिशत पानी, 22 प्रतिशत प्रोटीन, 49 प्रतिशत वसा, 14 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 14 प्रतिशत रेशा और 3.5 प्रतिशत राख होती है।

ईंधनः इसकी लकड़ी का कोयला अति उत्तम किस्म का होता है यह काफी लम्बे समय तक जलता है। इसकी ऊर्जामान लगभग 20,800 कि. जूल प्रति कि.ग्रा. मापी गयी है।

तेलः बीज से निकाले गये तेल को कुसुम तेल के नाम से जानते हैं। यही तेल मकासर तेल है जो बालों के संवारने में उपयोग में लाया जाता है। दीप जलाने, पारम्परिक दवा एवं खाद्य पदार्थों में भी इसका उपयोग किया जाता है। यह खुजली, कील-मुहासों और दूसरे चर्म रोगों को ठीक करने में उपयोग किया जाता है। इसके तेल के एक भाग से मरहम बनया जाता है। मदुरा और जावा में इसके तेल का उपयोग छींट-छपाई उद्योग तथा दक्षिण भारत में नहाने के तेल के रूप में प्रयोग होता है।

औषधीय उपयोगः सूखे बीज के पाउडर का उपयोग जानवरों के घाव को भरने में काफी सहायक होता है। इसके तने की छाल का पाउडर चर्म रोग दूर करने, अल्सर तथा मलेरिया के उपचार में किया जाता है। छाल में 10 प्रतिशत *टेनिन* तथा दर्द निवारक *लूपिओल* नामक पदार्थ होता है। इसके अतिरिक्त, इससे ट्यूमर निरोधक *ब्यूटिलिन* तथा *ब्यूटिलिक* अम्ल भी निकाला जा सकता है।

इमारती लकड़ीः गुलाबी लाल तना काफी मजबूत होता है इसकी लकड़ी काफी टिकाऊ होती है जिसके कारण इसका उपयोग कोल्हू बनाने में किया जाता है। चीनी के कारखाने हेतु रोलर, यंत्रों के बेंत, बैलगाड़ी के पहिये एवं हल बनाने में भी उपयोग किया जाता है। लकड़ी की कटाई एवं चिराई ताजी अवस्था में करना उपयुक्त रहता है। सूखने के बाद लकड़ी फटने का डर रहता है।

तेलः इसके बीज में 59-72 प्रतिशत तक तेल होता है। इसका तेल पीला भूरा होता है। इसके तेल में *ओलिक एसिड* (52 प्रतिशत), *ऐरेक्डिक एसिड* (20 प्रतिशत), *स्टेरिक एसिड* (10 प्रतिशत), *गेडोलिक एसिड* (9 प्रतिशत) होता है। इसके तेल में *साइनोजनिक* यौगिक होता है जिसकों खाने से सिर में चक्कर महसूस होने लगता है।

बीज की उत्पादकताः भारत में औसत आकार के एक पेड़ से लगभग 25-30 कि.ग्रा. बीज मिल जाता है।

बीज से तेल निकालनाः बीज से गूदा हटाने के लिये इसके ढ़ेर को 2-4 दिन तक रख देते हैं। इसके बाद रगड़कर गूदा निकाल देते हैं। इसके पश्चात् बीज को दबाकर या उबालकर इससे तेल निकाल लेते हैं। उबालने पर 32-35 प्रतिशत एवं दबाने से लगभग 25-27 प्रतिशत तेल निकलता है।

कुसमी लाख कीट एवं फसल

भारत में लाख कीट *केरिया लक्का* की दो किस्में पायीं जातीं हैं जिसे कुसमी और रंगीनी के नाम से जाना जाता है। दोनों को मुख्य रूप से जीवन अवधि, फसल परिपक्व होने का समय, लाख की गुणवत्ता एवं उत्पादन की मात्रा, जनन शक्ति और पोषक वृक्षों की पसन्द के आधार पर विभक्त किया जा सकता है। रंगीनी किस्म को कुसुम वृक्ष पर नहीं पाला जा सकता। यह दोनों किस्मों को विभक्त करने का एक बहुत अच्छा आधार है। कुसुम वृक्ष पर कुसुम किस्म का लाख कीट ग्रीष्म एवं शीतकाल दोनों ही में आसानी से पाला जा सकता है। कुसमी कीट रंगीनी की तुलना में काफी नजदीक बैठते हैं। ग्रीष्मकालीन कुसमी फसल (जेठवी) हेतु कीट संचारण देश के अधिकतर भाग में जनवरी-फरवरी में किया जाता है जबकि फसल जून-जुलाई तक परिपक्व हो जाती है। इसी प्रकार शीतकालीन फसल (अगहनी) हेतु कीट संचारण जून-जुलाई में (सारणी 1) किया जाता है एवं फसल जनवरी-फरवरी में परिपक्व हो जाती है।

सारणी 1: कुसमी लाख फसल की अवधि

Qly	dhV l|pkj.k	ifjiDork	vof/k
शीतकालीन (अगहनी)	जून–जुलाई	जनवरी–फरवरी	6 माह
ग्रीष्मकालीन (जेठवी)	जनवरी–फरवरी	जून–जुलाई	6 माह

कुसमी लाख में, रंगीनी लाख की तुलना में फसल परिपक्वता के समय में काफी विविधिता होती।

प्रकृति में कुसमी लाख के तीन प्रकार के कीट पाये जाते हैंः (क) शीघ्र परिपक्व किस्म (ख) औसत समय पर परिपक्व फसल और (ग) देर से परिपक्व होने वाली किस्म। कई स्थानों में शीघ्र तैयार होने वाली किस्में काफी प्रचलित हैं जिसकी शीतकालीन फसल लगभग दिसम्बर में ही परिपक्व हो जाती है जबकि ग्रीष्मकालीन फसल जून में परिपक्व होती है। इसी प्रकार देर से परिपक्व होने वाली शीतकालीन फसल फरवरी-मार्च तक और ग्रीष्मकालीन देर जुलाई या अगस्त तक परिपक्व होती है। इस

प्रकार कुसमी बीहन लाख दिसम्बर से मार्च तथा जून से अगस्त तक उपलब्ध हो सकती है।

कुसुम वृक्ष के विशेष गुण

- फसल परिपक्व एवं वृक्ष की काट-छाँट का समय एक ही होता है अतः फसल परिपक्व होने के समय यदि वृक्ष की काट-छाँट भी हो जाती है तो वृक्ष के स्वास्थ्य पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता।
- जून माह में पतझड़ के साथ-साथ नई पत्तियाँ भी आ जाती हैं। जिससे लाख पर धूप का प्रभाव अधिक नहीं होता।
- यह वृक्ष कुसमी लाख कीट के लिये अति उपयोगी है जिसकी उत्पादकता पलाश एवं अन्य वृक्ष पर रंगीनी से काफी अधिक होती है। इसी प्रकार लाख की गुणवत्ता भी काफी अच्छी होती है।
- वृक्ष घना होने के कारण गर्मी की फसल अच्छी होती है।
- वृक्ष की टहनियाँ सघन होने के कारण फसल का प्रबंधन आसान होता है क्योंकि यह बहुत कम क्षेत्रफल ही घेरता है।
- मजबूत डालियों और टहनी के कारण वृक्ष की काट-छाँट एवं फसल कटाई में कोई कठिनाई नहीं होती है।
- कटाई पश्चात् नई टहनी आने की क्षमता होती है। यदि डालियाँ अधिक कट जाती है तब भी वृक्ष के स्वास्थ पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।
- इसकी जड़ें जमीन की गहरायी में चली जाती हैं। अतः पानी की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती।
- घना होने के कारण ग्रीष्मकाल में मवेशियों एवं मनुष्यों को काफी छाया प्रदान करता है एवं वातावरण भी काफी ठंडा रहता है।

पारम्परिक विधि से लाख खेती करने पर उत्पादन में अनिश्चितता बनी रहती है जबकि वैज्ञानिक तकनीक अपनाने से उत्पादन अधिक होने के साथ अनिश्चितता नहीं रहती और उत्तम किस्म के बीहनलाख भी प्राप्त होता है। पारम्परिक विधि के अन्तर्गत बिना नर्म टहनियों, सुनिश्चित कीट संचारण, लगातार बिना विश्राम के एक ही वृक्ष पर कीट-पालन, शत्रु कीट प्रबंधन का अभाव आदि स्पष्ट रूप से अपनाया जाता है जबकि वैज्ञानिक लाख की खेती में कई प्रक्रियाएं अपनायी जाती हैं जो कि काफी आसान हैं।

लाख खेती की वैज्ञानिक प्रक्रियाएं

पोषक वृक्ष की काट-छाँट

कुसुम वृक्ष पर उपयुक्त विधि से कीट पालन हेतु कीट संचारण के समय नर्म, रसदार टहनियों का होना आवश्यक है जिससे शिशु कीट अपनी सूंडी चुभोकर आसानी से रस चूस सकें। पुरानी टहनियाँ एक तो कड़ी हो जाती हैं दूसरी इसमें पर्याप्त रस भी नहीं मिलता। अतः कीट संचारण के समय नर्म, मुलायम और रसदार टहनियाँ उपलब्ध हों, इसके लिये कीट संचारण के लगभग 18 माह पूर्व इस वृक्ष की काट-छाँट की जाती है। यदि वृक्ष की काट-छाँट पहली बार की जाती है तब 12 माह पश्चात् ही नर्म टहनियाँ आ जाती हैं। पहली बार कटाई करते समय मोटी डालियों को भी काटना पड़ सकता है क्योंकि वृक्ष को एक ऐसा आकार देना पड़ता है कि फसल कटाई करते समय लाख लगी टहनियों तक आसानी से पहुँचकर काटा जा सके। कुसुम वृक्ष की काट-छाँट ऊपर से प्रारम्भ कर नीचे की ओर की जाती है जिससे यदि कोई टहनी वृक्ष के निचले भाग में फंस जाए तो उसे हटाया जा सके। कुसुम वृक्ष के काट-छाँट का सही समय जनवरी-फरवरी या जून-जुलाई माह है। इसके समय में थोड़ी भिन्नता आ सकती है। यह अलग-अलग क्षेत्रों में हो सकता है। सामान्यतः जैसे ही पतझड़ प्रारम्भ हो, अर्थात नये कोपल आने से पूर्व ही काट-छाँट कर देना चाहिये (चित्र 4)। कटाई करते समय सभी पतली टहनियों को उनके निकलने के स्थान से काटना चाहिए। कुल्हाड़ी, दावली या टॉगी की धार तेज हो जिससे थोड़ी मोटी टहनियाँ जो थोड़ा छोड़कर काटा जाता है, वे फट नहीं पाएं। गलत समय पर काट-छाँट करने पर नई टहनियाँ काफी छोटी रह जाती हैं।

कीट संचारण

नर्म टहनियों पर लाख शिशु कीटों को छोड़ने की प्रक्रिया ही 'कीट संचारण' कहलाती है जिसके लिये बीहनलाख की टहनियों को वृक्ष की मोटी डालियों पर कई स्थानों पर बाँध देते

चित्र 4: सम्पूर्ण काट-छाँट किया कुसुम वृक्ष

हैं जिससे शिशु कीट स्वयं नर्म टहनियों पर चला जाता है। सफलतापूर्वक करने के लिये निम्नलिखित प्रक्रिया अपनायी जा सकती है।

बीहन आवश्यकता का आकलन

सामान्यतः 20 ग्राम बीहनलाख प्रति मी. नरम टहनी या कटे सिरे की दर से आवश्यक्ता होती है। एक औसत आकार का कुसुम वृक्ष पर 5-8 कि.ग्रा. बीहन की आवश्यकता होती है यदि वृक्ष काफी बड़ा हो तो लगभग 20-25 कि.ग्रा. बीहन भी लगाना पड़ सकता है।

बीहन लाख का चुनाव

बण्डल बनाने से पहले लगातार पपड़ी वाले बीहन लाख को छाँटकर *सिकेटियर* द्वारा लगभग 6 टुकड़े कर लेना चाहिये। 1 कि.ग्रा. तौलकर लगभग 10 बराबर भाग में बाँटकर तब उपयोग करें।

बण्डल बनाना

बीहनलाख के टुकड़ों को 50 या 100 ग्राम का बण्डल बनाते हैं जिसे प्लास्टिक की सुतली से बाँधा जाता है जिससे गिलहरी या चूहे न काट सकें (चित्र 5)।

चित्र 5: संचारण हेतु तैयार

नाइलॉन जाली की थैली का उपयोग

यदि 60 मेश नाइलॉन जाली उपलब्ध हो तो उसकी थैली में बीहनलाख को भरकर तब कीट संचारण करें। इससे एक तो बीहन के छोटे-छोटे टुकड़ों का उपयोग तो हो ही जाएगा साथ में इसमें विद्यमान शत्रु कीट भी अगली फसल में जाने से रूक जायेंगे (चित्र 6)।

चित्र 6: 60 मेश नाइलॉन जाली के भीतर कुसमी बीहन

कीट संचारण हेतु धान के पैरा का उपयोग

विशेष परिस्थितियों में जब वातावरण में काफी ठंड होती है (लगभग जनवरी-फरवरी में) तब बीहन लाख से शिशु कीट निर्गमन होने में काफी देर होती है तब बीहन लाख बण्डल को धान के पुआल में चारों तरफ से लपेट कर तब वृक्ष की डालियों पर बाँधते हैं, इससे शिशु कीट निर्गमन में मदद मिलती है।

वृक्ष पर बीहनलाख की बँधाई

प्रति वृक्ष पर अनुमानित बीहनलाख बण्डल की संख्या एक थैली में भरकर पेड़ों पर चढ़ जाते हैं और एक-एक करके उसे आवश्यकतानुसार विभिन्न डालियों पर उपर की ओर बाँधते हैं। जिससे अधिक से अधिक डाली पर छूते रहें।

लाख शिशु कीट 6-7 फ़ीट तक आगें जा सकता है। अतः इसे नर्म टहनियों पर बाँधने की आवश्यकता नहीं है। छोटे वृक्ष पर एक ही व्यक्ति से कार्य हो जाता है जबकि बड़े वृक्ष पर 3-4 व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है। बार-बार पेड़ से उतरने-चढ़ने के बजाय पतली रस्सी द्वारा बीहनलाख बण्डल को जमीन से ऊपर खींचा जा सकता है। यदि वर्षा की सम्भावना हो तब कीट-संचारण नहीं करना चाहिए तथा न ही जाली में भरकर बीहन बाँधना चाहिये। (चित्र 7)। लेकिन यदि वर्षा की सम्भावना नहीं हो तो बीहन को जाली में भरकर अवश्य लगाएं।

चित्र 7: जाली में भरकर कीट संचारण

जाली का महत्व

60 मेशा जाली के प्रयोग से बीहनलाख में विद्यमान सभी प्रकार के शत्रु कीट जाली में ही फंस जाते हैं लेकिन शिशु कीट बाहर आ जाते हैं। इसके अतिरिक्त, फूंकी लाख सूखने के बाद जमीन में गिर जाती है उसे बचाने में भी मदद मिलेगी। अतः जाली का उपयोग शत्रु कीट प्रबंधन की एक गैर रासायनिक कीटनाशक तकनीक है।

बीहनलाख बण्डल द्वारा पुनः कीट संचारण

वृक्षों की डालियों पर बीहनलाख बाँधने के लगभग एक सप्ताह पश्चात् शिशु कीट बैठने की स्थिति देखी जाती है। यदि टहनियाँ लगभग भर गयी हों तो उन्हें खोलकर दूसरे ऐसे स्थानों

पर पुनः बाँध देते हैं जहाँ शिशु कीट नहीं बैठे हों या कम बैठे हों। इस प्रक्रिया से पूरे वृक्ष पर सभी टहनियों पर समान रूप से कीट बैठेंगे।

शिशु कीट निर्गमन की अवधि

यह वातावरण पर निर्भर करता है। सामान्यतः शिशु कीट निर्गमन की प्रक्रिया जून-जुलाई में दो सप्ताह एवं जनवरी-फरवरी में तीन सप्ताह में समाप्त हो जाती है। यदि बीहन लाख को शिशु कीट निर्गमन प्रारम्भ होते ही डालियों पर बाँधा जाता है।

3 कीट संचारण के पश्चात फसल प्रबंधन

फूंकी हटाना: बीहनलाख की खाली टहनियों को कीट निर्गमन के पश्चात् तुरन्त वृक्षों से खोलकर एकत्रित कर लें। इससे कई लाभ हैं (क) बीहन लाख की टहनियाँ सूखने के पश्चात् उनको जमीन पर गिरने से बचाया जा सकता है (ख) शत्रु कीटों को बीहन लाख से नयी फसल पर जाने से रोका जा सकता है। एकत्रित की गयी फूंकी लाख को शीघ्र से शीघ्र बेच दें अन्यथा उसे छीलकर सुखाने के पश्चात संग्रह करें। कुसमी लाख की फूंकी बिना छीले ही बिकती हैं।

वजन के आधार पर बीहनलाख का लगभग 70-75 प्रतिशत डंडी समेत या 50-55 प्रतिशत छिली लाख प्राप्त हो जाती है लेकिन यदि फूंकी लाख बेर वृक्ष की है तो इसे छीलना पड़ता है बेर और कुसम से छिली कुसमी लाख का मूल्य लगभग बराबर होता है। डंडी सहित फुंकी लाख का संग्रहण नहीं करना चाहिये क्योंकि इसमें शत्रुकीट अच्छी तरह से पनपते हैं जबकि छिलाई पश्चात ऐसा नहीं होता।

4. लाख फसल का प्रबंधन: लाख फसल का प्रबंधन वातावरण और नर कीट निकलने पर काफी स्तर तक निर्भर करता है क्योंकि शीतकालीन फसल में नर कीट निकलने का समय (प्रजनन) भिन्न होता है। अतः दोनों में कीटनाशक एवं फफूँदनाशक छिड़कने का समय भी अलग होता है जिसे कीट संचारण के समय से आकलन किया जाता है।

शीतकालीन फसल

सामान्यतः कीट संचारण जून-जुलाई में तथा फसल कटाई जनवरी-फरवरी में की जाती है। नर कीट निर्गमन कीट संचारण से लगभग 43-60 दिन के बीच होता है। अधिक नम जलवायु में एक सप्ताह पूर्व भी हो सकता है। इस समय कीटनाशक छिड़कने से बचना चाहिये।

(क) शीतकालीन फसल की मुख्य समस्या

- इस मौसम में परभक्षी शत्रु कीटों विशेषकर *क्राईसोपा* का आक्रमण अधिक होता है।
- अच्छी धूप न निकलने से फफूँद का आक्रमण अधिक होता है।
- शिशु कीट निर्गमन के समय वर्षा होने पर पानी के साथ चलते हुये कीट बह जाते हैं।

(ख) फसल सुरक्षा

***क्राइसोपा, यूब्लेमा ऐमाबिलिस* (सफेद इल्ली) एवं *सियुडोहाइपेटोपा पल्वेरिया* (काली इल्ली) का नियंत्रण:** *इथोफेनप्राक्स* 0.02 प्रतिशत (10 प्रतिशत ई.सी). या *इन्डोक्साकार्ब* 0.007 प्रतिशत (15.8 प्रतिशत ई.सी.) या *फिप्रौनिल* 0.007 प्रतिशत (5 प्रतिशत एस.सी./ई.सी.) का छिड़काव कर सकते हैं। फफूँद आक्रमण होने की सम्भावना अधिक होने के कारण *कारबेण्डाजिम* 0.05 प्रतिशत (50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी.) (1 ग्रा. प्रति ली. पानी) भी उसी कीटनाशक में मिला दें। इसका छिड़काव कीट संचारण 25-30 दिन पर करना चाहिए। दूसरा छिड़काव उसी कीटनाशक का 38-40 दिन पर नर कीट निर्गमन न हो, तब कर सकते हैं। तीसरा छिड़काव 62-65 दिन पर ऐसे कीटनाशक का करें जिसका पहले और दूसरे छिड़काव में न हुआ हो।

ग्रीष्मकालीन फसल

सामान्यतः इसे जनवरी-फरवरी में कीट संचारण करके जून-जुलाई में फसल कटाई कर लेते हैं (6 माह)। वयस्क नर कीट संचारण के 65-70 दिनों पर निकलना प्रारम्भ करता है और अगले 15 दिनों तक किसी न किसी शाखा से बाहर आते हैं। यह समय नम जलवायु और अधिक तापमान वाले स्थानों में एक सप्ताह पूर्व भी हो सकता है। अतः संभोग की प्रक्रिया कीट संचारण के 65-90 दिन के बीच चलती है।

(क) ग्रीष्मकालीन फसल की मुख्य समस्या

- *क्राईसोपा* नामक परभक्षी शत्रुकीट का लाख फसल की प्रारम्भिक अवस्था में आक्रमण
- सीधी धूप और अधिक तापमान के कारण लाख कीट का मरना
- *टेसरटोमा* नामक कीट (लीची बग) के कारण कुसुम की नरम पत्तियों एवं कोपल पर आक्रमण
- सफेद इल्ली *(यूब्लेमा ऐमाबिलिस)* एवं काली इल्ली *(सियुडोहाइपेटोपा पल्वेरिया)* का लाख फसल पर आक्रमण

(ख) फसल सुरक्षा

- पूर्व में बताए गए कीटनाशक एवं फफूँदनाशक का 28-30 दिन पर छिड़काव

- दूसरा छिड़काव 60-65 दिन पर। कभी-कभी वयस्क नर कीट निर्गमन एक सप्ताह पहले ही प्रारम्भ हो जाता है। अतः दूसरा छिड़काव करते समय ऐसी स्थिति देख लेना चाहिए। यदि वयस्क नर कीट दिखायी पड़े तो दवा छिड़काव बाद में करना चाहिए।
- कभी-कभी जब दिन का तापमान अधिक हो तब शाम को लाख लगी टहनियों पर पानी का छिड़काव करना चाहिए।

(5) वृक्षों का बंटवारा

फसल कटाई पश्चात वृक्षों पर पुनः कीट संचारण लगभग 18 माह पश्चात् ही होता है अतः फसल चक्र बनाये रखने के लिये वृक्षों को उसी के अनुसार खण्ड में बाँटकर खेती करते हैं। पारम्परिक विधि के अन्तर्गत एक ही पेड़ को चार भागों में बाँट कर फसल चक्र बना लेते हैं लेकिन इस विधि में वृक्षों को विश्राम नहीं मिलता। कुछ माह तक वृक्षों पर लाख फसल न हो जिससे नरम टहनियाँ समय पर आ जाएं। इसके अतिरिक्त, पूरी फसल काटने से शत्रु कीटों का फसल चक्र भी टूट जाए। फलस्वरूप उत्पादन कम होने के साथ बीहनलाख की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। अतः वैज्ञानिक विधि में पूरे वृक्ष को ही लाख उत्पादन हेतु उपयोग करते हैं। प्रत्येक वृक्ष या खण्ड को आलेख 1 में दिए गए निर्देश के अनुसार उपयोग करते हैं।

(6) लाख की छिलाई

सामान्यतः कुसमी लाख को टहनी समेत बेची जाती है लेकिन यदि पपड़ी दूर-दूर है या लाख दाने-दाने में है तो इसे छीलकर ही बेचना पड़ेगा, छिलाई चाकू से की जा सकती है और हाथ से चलने वाली मशीन से भी, दोनों ही उपलब्ध हैं। छिलाई करने के पश्चात् जब लाख को संग्रह करते हैं तो उसमें शत्रु कीट नहीं पनपते।

(7) लाख खेती की समय-सारणी

एक सफल लाख उत्पादक के लिये आवश्यक है कि सभी लाख खेती की प्रक्रियाएं समय से पूरी कर ली जाएं। इसी क्रम में माहवार लाख खेती की समय सारणी का वर्णन सारणी 2 में दिया गया है। यह समय कुछ दिन आगे-पीछे हो सकता है, यह क्षेत्र विशेष पर निर्भर करता है।

सारणी 2: कुसमी लाख खेती की समय सारणी

जनवरी	• शीतकालीन फसल में लाख शिशु कीट निर्गमन का पूर्वानुमान • ग्रीष्मकालीन फसल हेतु कीट संचारण
फरवरी	• ग्रीष्मकालीन फसल हेतु कीट संचारण • कुछ नये बेर वृक्ष की काट–छॉट • शीतकालीन फसल की कटाई एवं काट–छॉट • फूंकी हटाना और लाख छिलाई
मार्च	• आवश्यकता पड़ने पर कीटनाशक *इन्डोक्साकार्ब* या स्पाइसैड या *इथोफेनप्राक्स* का कीट संचारण के लगभग 25 दिनों पर छिड़काव साथ में *कारबेन्डाजिम*
	• कीट संचारण के 60–65 दिन पर कीटनाशक और फफूँदनाशक का दूसरा छिड़काव
जून	• शीतकालीन फसल के लिये बीहनलाख की आवश्यकता का आकलन
जुलाई	• शीतकालीन फसल हेतु कीट संचारण फूंकी हटाना एवं लाख छिलाई
अगस्त	• यदि जुलाई में फूंकी नहीं हटाई गयी हो तो हटाना • आवश्यकता पड़ने पर कीटनाशक *इथोफेनप्राक्स* या *इन्डोक्साकार्ब* या *स्पाइसैड* का कीट संचारण के लगभग 25 दिनों पर छिड़काव साथ में *कारबेन्डाजिम* का भी छिड़काव
सितम्बर	• कीट संचारण के 37–40 दिन पर यदि नर कीट नहीं निकल रहा हो तो कीटनाशक और फफूँदनाशक का दूसरा छिड़काव
अक्टूबर	• संचारण के 60–65 दिन पर कीटनाशक और फफूँदनाशक का तीसरा छिड़काव
नवम्बर	• चारी से फसल सुरक्षा के उपाय
दिसम्बर	• शीतकालीन फसल से उत्पादन का आकलन • ग्रीष्मकालीन फसल हेतु बीहन की आवश्कता का आकलन

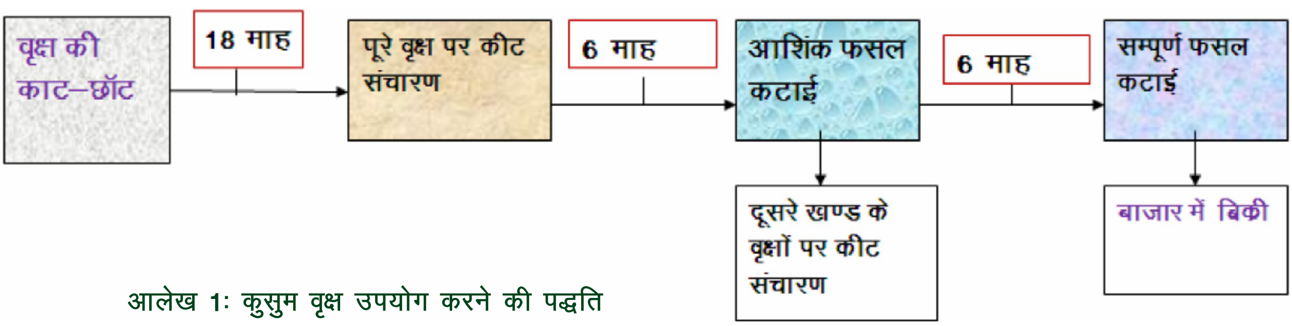

आलेख 1: कुसुम वृक्ष उपयोग करने की पद्धति

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

Lk[kk iHkkfor {k=k e ?kkl yxkdj dek, ykHk

vkfnR; dqekj flag] lR;e pkfjgk] lrh'k ikBd ,oa /khjsUnz dqekj
df"k foKku dsUn] xuhok] fp=dwV

भारत के सगंध तेल उद्योग में रोशाघास (पामारोजा) तेल का महत्वपूर्ण स्थान है। पामारोजा के पौधे को इससे प्राप्त तेल के आर्थिक उत्पादन के लिए उगाया जाता है। पारम्परिक फसलों की अपेक्षा रोशा घास की खेती आर्थिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसकी खेती में लागत कम और शुद्ध लाभ अधिक प्राप्त होता है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में उगाए जा सकने वाले इस पौधे के लिए ज्यादा पानी एवं खाद की आवश्यकता नहीं होती है। इस प्रकार भारत के शुष्क क्षेत्रों वाले भागों में रोशा घास की खेती करके पर्याप्त लाभ कमाया जा सकता है।

रोशा घास का महत्व

रोशा घास या पामारोजा एक बहुवर्षीय सुगंधित घास है। जिसका वानस्पतिक नाम *(सिम्बो पोगन मर्टिनाई)* प्रजाति मोतिया है। जो *पोससी* कुल के अंतर्गत आता है। रोशा घास एक सुगंधित पौधा है जो एक बार लगा देने के उपरान्त 3 से 6 वर्ष तक उपज देता है। रोशा घास 4 वर्ष तक अधिक उपज देता है। इसके पश्चात् तेल का उत्पादन कम होने लगता है। इसका पौधा 10 सेल्सियस से 45 डिग्री सेल्सियस तक तापमान सहन करने की क्षमता रखता हैं। रोशा घास सूखा की निश्चित अवधि का सामना करने में सहायक होती है। अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में एक वर्षा आधारित फसल के रूप में इसकी खेती की जा सकती हैं। रोशा घास का मुख्य सक्रिय घटक ''*जिरेनियाल* एवं *जिरेनाइल एसीटेट* है।'' रोशाघास की व्यावसायिक खेती उत्तर प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश में विशेष रूप से की जाती है।

उपयोग

रोशा घास के तेल का प्रयोग बड़े पैमाने पर इत्र बनाने हेतु किया जाता है। *एंटीसेप्टिक* मच्छर से बचाने वाली क्रीम और दर्द से राहत में इसका तेल बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह लूम्बेगों, सख्त जोड़ों और त्वचा रोगों के लिए दवा के रूप में प्रयोग किया जाता है।

खेत की तैयारी

रोशा घास की खेती के लिए भूमि की कोई विशेष तैयारी की आवश्यकता नहीं पड़ती हैं। किंतु रोपण से पहले खेत को भली-भाँति तैयार करना अति आवश्यक हैं। इसलिए खेत की कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिए। तत्पश्चात् 10-15 टन हे. की दर से गोबर की सड़ी खाद भली-भाँति खेत में मिला देना चाहिए।

प्रवर्धन

रोशा घास का प्रवर्धन बीज के माध्यम से किया जा सकता हैं। बीज को रेत के साथ मिलाकर 15-20 से.मी. की दूरी पर रखा जाता हैं तथा बीज द्वारा रोपण हेतु बीज की मात्रा 2.5 कि.ग्रा. बीज प्रति हे. संस्तुत हैं।

नर्सरी बोने का सर्वोत्तम समय अप्रैल-मई होता हैं तथा पौध 4 सप्ताह बाद रोपाई के लिए तैयार हो जाती हैं।

रोपण दूरी, रोपण समय

1.	सामान्य दशाओं में	60×60 से.मी.
2.	असिंचित दशाओं में	30×30 से.मी.

रोशा घास की रोपाई मानसून आगमन (जून से अंत अगस्त) तक कर देनी चाहिए।

खाद / उर्वरक

रोशा घास में 100:50:50 कि.ग्रा. एन.पी.के. की आवश्यकता प्रति हेक्टेयर / वर्ष पड़ती है। लगभग 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की मात्रा प्रत्येक फसल काटने के बाद तीन बार में देना चाहिए। जिंक सल्फेट 25 कि.ग्रा. / हे. की दर से डालने पर उपज में वृद्धि होती है।

सिंचाई

सिंचाई की आवश्यकता मौसम पर निर्भर करती है। पहली सिंचाई रोपण के तुरन्त बाद करनी चाहिए। वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। शरद ऋतु में दो सिंचाई पर्याप्त रहती हैं। यद्यपि कटाई से पहले सिंचाई बंद कर देना चाहिए। प्रत्येक

कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

उन्नतशील किस्में

पी.ए.आर.सी. 01, कृष्णा, तृप्ता, वैष्णवी, हर्षा

खरपतवार नियंत्रण

प्रारम्भिक अवस्था में खरपतवार नियंत्रण की जरूरत पड़ती है जो कि अच्छी फसल पाने के लिए आवश्यक है। पहले वर्ष में उच्च निराई तथा बाद के वर्षों में दो निराई की आवश्यकता पड़ती है। *मल्च* का उपयोग करने से यह न केवल मिट्टी में नमी बनाए रखता है बल्कि यह खरपतवार की वृद्धि को भी रोकता है।

कीट नियंत्रण

रोशा घास के पौधों पर कोई विशेष कीट एवं बीमारी का प्रकोप नहीं होता है। यदाकदा *एफिड़ थ्रिप्स (व्हाइट ग्रब)* का प्रकोप हो जाता है। जिसकी रोकथाम के लिए *रोगोट* या *मोनोक्रोटोफॉस* कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए।

फसल कटाई

रोशा घास के सभी भागों में तेल पाया जाता है जैसे फूल, पत्ती, तना। इनमें से फूल वाला सिरा मुख्य भाग होता है। जिसमें आवश्यक तेल की मात्रा ज्यादा पायी जाती है। फसल की कटाई जमीन से 15-20 से.मी. छोड़कर 50 प्रतिशत पुष्पन अवस्था पर दराती से की जाती है। वर्षा ऋतु में फूल आने की प्रतीक्षा नहीं करना चाहिए।

उपज

रोशा घास की फसल में तेल का प्रतिशत शाक एवं तेल की उपज जलवायु एवं कृषि क्रियाओं पर निर्भर करती है। तेल की पैदावार पहले साल में कम होती है तथा यह रोपण की उम्र के साथ-साथ वृद्धि करती है। औसतन रोशा घास के शाक में 05-07 प्रतिशत तेल पाया जाता है। अच्छी कृषि प्रबंध की स्थिति में तेल की औसतन उपज 200-250 कि.ग्रा. प्रति हे. प्रतिवर्ष प्राप्त की जा सकती है।

तालिका 1: शाक एवं तेल का उत्पादन

mRikn	iFke o"k	f}rh; o"k	Rkrh; o"k	prFk o"k
शाक (कु./हे.)	300	400	500	450
तेल (कि.ग्रा./हे./वर्ष)	150	200	250	225

आसवन एवं भण्डारण

रोशा घास में सगंध तेल का उत्पादन वाष्प आसवन विधि द्वारा किया जाता है। रोशाघास के तेल का पूर्ण आसवन होने में लगभग 2-3 घण्टे का समय लगता है। आसवन के पश्चात् सामान्य तापक्रम पर रोशा घास के तेल को एल्युमीनियम की बोतल में भण्डारित किया जा सकता है। *कन्टेनर* स्वच्छ और जंग मुक्त होना चाहिए।

रोशा घास की खेती करने से लाभ

- परम्परागत खेती मौसम पर निर्भर करती है मगर रोशा घास में मौसम का महत्व नहीं होता है।
- रोशा घास में खरपतवार एवं कीटों का प्रकोप सामान्यतः कम होता है।
- रोशा घास का पौधा भू-संरक्षण एवं जल संरक्षण में सहायक है।
- रोशा घास की फसल को किसी भी प्रकार की भूमि में पैदा किया जा सकता है।
- रोशा घास की खेती ऐसे क्षेत्रों में की जा सकती है जहाँ प्रचलित फसलों के उगाने में जंगली या पालतू जानवरों की अधिक समस्या होती हो।
- रोशा घास की खेती ऐसे क्षेत्रों में की जा सकती है जहाँ फसल प्रबंधन एवं सिंचाई के लिए जल की कम उपलब्धता हो।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

e'nkuh {k=k e vky mRiknu dh oKkfud [krh

, l-d- ;kno[1] jkt dekj flg[2] ,o ljyk ;kno[2]
[1]Hkkd vu i&Hkkjrh; xUuk vu l/kku lLFkku] y[kuÅ
[2]Hkkd vu i& dæh; vky vu l/kku dUæ] iVuk

आलू की खेती का इतिहास

आलू का मूल जन्म स्थान दक्षिण अमेरिका की एंडीज पर्वत पर माना जाता है। स्पेनवासियों द्वारा आलू को दक्षिण अमेरिका से यूरोप में लाया गया। सोलहवीं शताब्दी के अंत में या सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में पुर्तगालियों या अंग्रेजों द्वारा भारत में आलू का पदार्पण माना जाता है। भारत में मूल रूप से आलू की खेती प्रारंभिक अवस्था में पहाड़ी क्षेत्रों में की जाती थी। आलू के स्वाद एवं पौष्टिकता ने स्थानीय किसानों को आकर्षित किया और धीरे-धीरे आलू की खेती का विस्तार मैदानी क्षेत्रो में भी अक्टूबर से मार्च तक होने लगा।

आलू उत्पादन का महत्व

हमारे देश में आलू मुख्य रूप से एक नकदी फसल के रूप में सर्दियों के मौसम में उगाया जाता है। आलू की फसल तैयार होने की कम अवधि के कारण इसे आसानी से दो फसलों के बीच में समायोजित किया जा सकता है जिससे फसल सघनता भी प्रभावित नहीं होती है। समान परिस्थितियों में अन्य फसलों की तुलना में आलू की खेती से प्रति इकाई क्षेत्रफल व समय में अधिक लाभ प्राप्त होता है। बढ़ती जनसंख्या के लिए भोजन के साथ-साथ आलू की खेती ग्रामीण रोजगार के अवसर का भी महत्वपूर्ण विकल्प हो सकता है।

आलू की कम उपज होने के मुख्य कारण

- स्वस्थ आलू बीज का उपलब्ध न होना
- उचित किस्मों की बुवाई उचित समय पर न होना
- संतुलित मात्रा में खाद तथा उर्वरकों का प्रयोग न करना
- रोग एवं कीटनाशक दवाओं का प्रयोग उचित मात्रा तथा समय में न करना

खेत का चुनाव

आलू उत्पादन में समतल खेत के चुनाव का महत्वपूर्ण योगदान होता है। किसी भी दशा में खेत का ढलान 0.5 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होना चाहिए। जहां तक संभव हो, आलू उन खेत में न लगाएं जहाँ पिछले साल आलू की फसल ली गई हो। खेत को अदल-बदल करके लगाने से मिट्टी से पैदा होने वाली आलू की बीमारियां जैसे काली रूसी, मृदु गलन, शुष्क गलन, भूरा गलन, साधारण -चुर्णी खुरंड *(स्कैब)*, जीवाणु मुर्झान और मूलग्रंथि सूत्रकृमि आदि से छुटकारा पाया जा सकता है।

उपयुक्त मिट्टी

बलुई दोमट किस्म की मिट्टी जिसमें जल निकासी का उचित प्रबंध हो, आलू के उत्पादन के लिये बेहतर होती है। अगर खाद और पानी की उचित व्यवस्था हो तो बलुई मिट्टी में भी आलू का उत्पादन किया जा सकता है। भारी मिट्टी आलू की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है।

ग्रीष्मकालीन जुताई तथा हरी खाद

यदि संभव हो तो मृदाजनित बीमारियों, कीटों तथा खरपतवारों के प्रकोप से आलू के फसल को बचाने हेतु गर्मी के मौसम (मई-जून) में एक या दो बार खेत की गहरी जुताई मिट्टी पलट हल से करके इसे खाली छोड़ देना चाहिए जिससे रोगाणु तथा कीटों के प्रकोप को कम किया जा सकता है। वर्षा के प्रारंभ होने पर ढैंचा की बुवाई हरी खाद के रूप में करनी चाहिए। जब फसल 50 से 60 दिन की हो जाए तब उसे मिट्टी पलट हल से मृदा में अच्छी तरह दबा देनी चाहिए। इससे मृदा की भौतिक दशा तथा उर्वरा शक्ति में सुधार होता है जिसके फलस्वरूप रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है तथा आलू की पैदवार तथा गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी होती है।

खेत की तैयारी

एक मिट्टी पलट हल से गहरी जुताई करने के बाद आवश्यकतानुसार दो-तीन बार *डिस्क हैरो* या *कल्टीवेटर* चलाकर खेत को अच्छी तरह तैयार करना चाहिए। यदि पिछली फसल के अवशेष खेत में हों तो उनको भली-भाँति निकाल देना चाहिए। भूमि में आलू के कंद बनने के समय किसी भी तरह का प्रतिरोध उत्पन नहीं होना चाहिए यदि प्रतिरोध होता है तो पैदावार कम हो जाती है।

मैदानी क्षेत्रों के लिए अनुशंसित किस्में

अगेती किस्में: कुफरी ख्याति, कुफरी पुखराज, कु. चंद्रमुखी, कु. अशोका

मध्यम अवधि वाली किस्में: कुफरी ज्योति, कुफरी लालिमा, कुफरी अरूण, कुफरी सूर्या, कुफरी कंचन, कुफरी ललित

पछेती किस्में: कुफरी सिंदूरी तथा कुफरी बहार

विधायन के लिए किस्में: कुफरी चिप्सोना 1, 2, 3, तथा 4

आलू के छिलके के रंग के आधार पर भी किस्मों का चुनाव किया जा सकता है मुख्य रूप से सफेद तथा लाल छिलके वाली किस्मों को उगाया जाता है कुफरी सिंदूरी, कुफरी कंचन, तथा कुफरी लालिमा लाल छिलके वाली किस्में है।

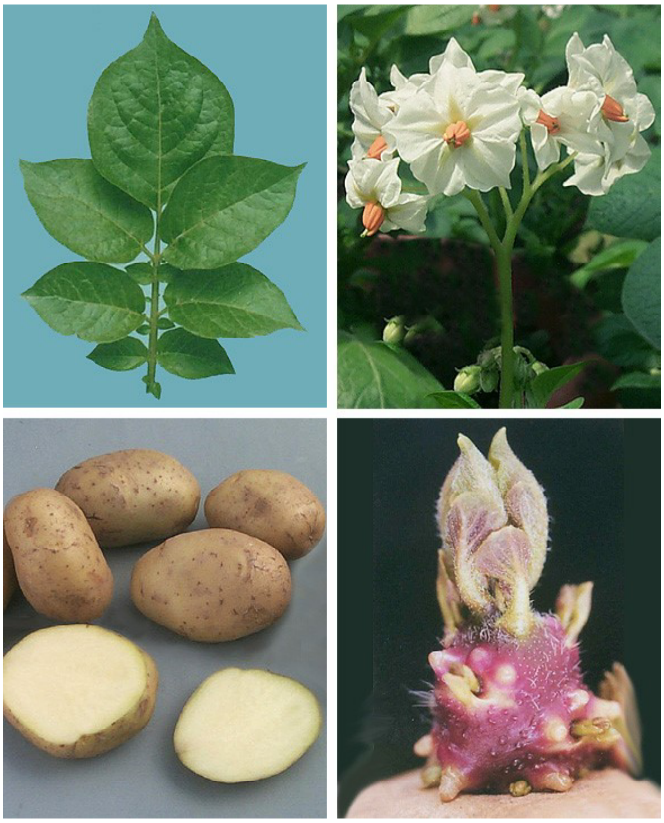

कुफरी ज्योति (अच्छे स्वाद के कारण लोकप्रिय)

बुआई का समय

आलू की बुआई किस्मों के आधार पर अक्टूबर से नवम्बर तक की जा सकती है। अगेती फसल की खेती करके किसान अधिक आमदनी प्राप्त कर सकता है। जहाँ तक संभव हो आलू की बुआई ज्यादा पहले न की जाए क्योंकि आलू के बीज के सड़ने की संभावना अधिक तापमान की वजह से बढ़ जाती है जिसके फलस्वरूप पैदावार भी कम होती है। अन्य किस्मों की तुलना में कुफरी सूर्या अधिक तापमान सहन करने के लिए उपयुक्त है। मुख्य फसल की बुवाई का उचित समय मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक होता है।

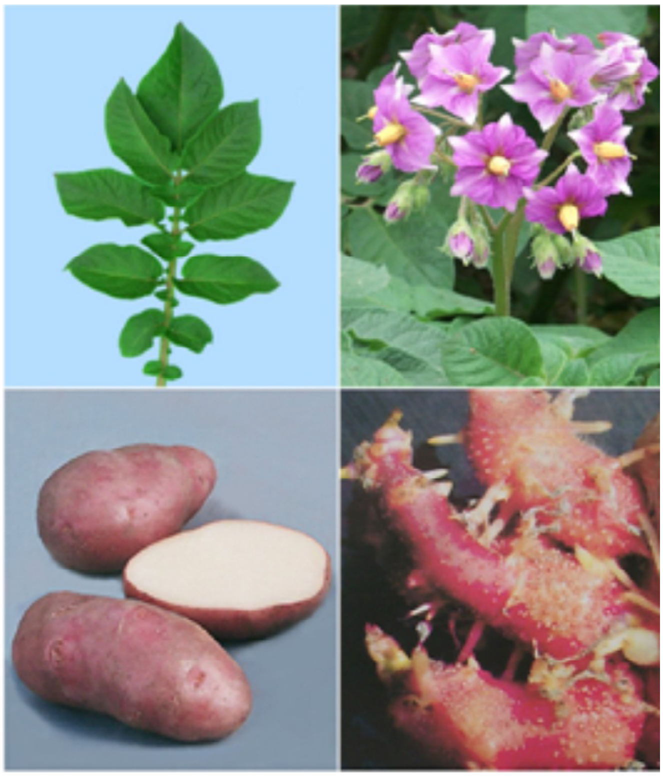

कुफरी कंचन (पछेती झुलसा अवरोधी)

बीज की तैयारी

बुआई के 10 से 15 दिन पहले बीज को शीत भण्डार से निकालकर 24 घंटे के लिए वही पर अभिशीतन कक्ष में छोड़ देना चाहिए अन्यथा आलू के सड़ने का डर रहता है। इसके बाद आलू को किसी छायादार एवं खुले स्थान पर फैला देना चाहिए। सड़े-गले कंदों को छाँट कर अलग कर देना चाहिए। जब कंदों में अच्छी प्रकार अंकुरण हो जाए तभी बुआई करना चाहिए। हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि बीज को खेत में बुआई के लिए ले जाते समय कंद का अंकुर न टूटने पाए अन्यथा बीज जमाव प्रभावित होगा।

बीज का आकार एवं मात्रा

बीज आलू के उत्पादन के लिए 30 से 40 ग्राम भार विशेष रूप से मुर्गी के अंडे के आकार के आलू के कंद को लगाने की अनुशंसा की जाती है। बीज के आकार के अनुसार एक हेक्टर के लिए 20 से 30 क्विंटल आलू कंद पर्याप्त होता है। काटकर आलू लगाने से बीज की मात्रा कम लगती है लेकिन विषाणु एवं जीवाणुजनित रोगों के फैलने की सम्भावना अत्यधिक रहती है जिससे आलू की पैदावार प्रभावित हो जाती है। बीज दर को आवश्यकतानुसार पौधे से पौधे की दूरी या कतार से कतार की दूरी को कम या ज्यादा करके समायोजित किया जा सकता है।

आलू के बीज का चुनाव

- आलू का बीज रोग रहित और स्वस्थ होना चाहिए।
- बीज किसी सरकारी विभाग या रजिस्टर्ड संस्था से लेना चाहिए।
- बीज आलू का वजन 30-50 ग्राम का होना चाहिए।
- अंकुर रहित या पतले अंकुर वाले कन्दों को नहीं बोना चाहिए।

बुवाई से पहले सावधानियां

- यदि किसान खुद का बीज उपयोग करते हो तो यह ध्यान रहे कि 3-4 साल बाद बदल लेना चाहिए।
- बीज आलू को शीत गृह से लाने के बाद धुँधली रोशनी वाले हवादार कमरे में कुछ दिनों के लिए फैला देना चाहिए।
- कंदों में स्वस्थ अंकुर निकले होने चाहिए जो एक सेंटीमीटर लम्बे, हरे व मोटे हों।

बुवाई के समय सावधानियां

- स्वस्थ अंकुरित कन्दों को ही खेत में लगाना चाहिए।
- बिना अंकुरित कन्दों (ब्लाइंड ट्यूबर्स) को नहीं लगाना चाहिए।
- सड़े गले आलुओं को भी निकाल देना चाहिए।
- अंकुरित बीज आलुओं को टोकरियों में भर कर सावधानी से खेत में ले जाना चाहिए।
- इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि अंकुर टूटने न पाए वर्ना खेत में पौधों को निकलने में समय लगेगा।

पंक्ति से पंक्ति तथा पौधे से पौधे की दूरी

पूर्ण रूप से अंकुरित 30-40 ग्राम भर के कन्दों की बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सें.मी. तथा कंद से कन्द की दूरी 20 सें.मी. रखनी चाहिए। कंद से कंद की दूरी 50-60 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15-25 सें.मी. बीज के अनुसार घटाया या बढ़ाया जा सकता है। आलू के बीज को काट कर लगाने से पंक्ति से पंक्ति की दूरी तथा कंद से कन्द की दूरी को आमतौर पर कम रखते हैं। यदि ट्रैक्टर द्वारा आलू लगाना हो तो पंक्ति से पंक्ति और पौधे से पौधे की दूरी 60+20 सें.मी. उपयुक्त होती है।

बीज आलुओं को लगाना

जहां तक संभव हो बीज आलुओं को साबुत ही लगाना चाहिए। ऐसा करने से मृदा और कंदजनित रोगों से बचाव किया जा सकता है। यदि बीज को काट कर लगाना है तो यह ध्यान रहे कि कम से कम एक टुकड़े में 2-3 आँखें अवश्य हों और बीज को *मैंकोजेब* की 2 ग्राम मात्रा को एक लीटर पानी में मिलाकर बीज को 10 मिनट तक इस घोल में डुबोकर रखना चाहिए और छाया में बीज को सुखाकर बुवाई के लिए प्रयोग करना चाहिए।

पोषक तत्वों की आवश्यकता

आलू की अच्छी उपज के लिए 16-17 पोषक तत्व अनिवार्य हैं। इनमें से नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम मुख्य तत्व हैं। गंधक, कैल्शियम और मैगनीशियम द्वितीय तथा मोलिब्डिनम, जस्ता, ताँबा, लोहा व मैगनीज सूक्ष्म तत्व हैं। ये पोषक तत्व प्राकृतिक खाद से भी मिलते हैं परन्तु मिट्टी में जैविक खाद की उचित मात्रा उपलब्ध नहीं होने के कारण रसायनिक उर्वरकों का प्रयोग अति आवश्यक है।

मुख्य पोषक तत्वों का महत्त्व

नाइट्रोजन के प्रयोग से कन्दों की संख्या तथा आकार में वृद्धि होती है। इसकी कमी से पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा पहले नीचे की पत्ती उसके बाद सभी पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है। दूसरी तरफ नाइट्रोजन की अधिकता होने पर ट्यूबर देर से बनते हैं और पौधे की बढ़वार ज्यादा हो जाती है तथा कंद का आकार छोटा रह जाता है। फास्फोरस की कमी से जड़ों का विकास कम हो जाता है और उपज कम होती है। पोटैशियम की कमी से आलू में रोगों से लड़ने की क्षमता में कमी आती है तथा आलू की गुणवत्ता भी प्रभावित होती है।

मिट्टी की जाँच का महत्त्व

उर्वरकों की सही मात्रा तभी आंकी जा सकती है जब मिट्टी की जांच से पता लग सके कि मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी या अधिकता है। जाँच के आधार पर उचित मात्रा में उर्वरक डालने से मिट्टी की उपजाऊ शक्ति व पैदावार सुनिश्चित की जा सकती है और पर्यावरण का संतुलन भी सही रहता है।

खाद और उर्वरक की मात्रा

आमतौर पर आलू की अच्छी उपज के लिए गोबर या कम्पोस्ट खाद की 10-20 टन/हे. आवश्यकता होती है। यदि मिट्टी की जांच नहीं हो पायी हो तो नाइट्रोजन 150-200 कि.ग्रा./हे. की आवश्यकता होती है जिसके लिए यूरिया 300-400 कि.ग्रा./हे. देना चाहिए। फास्फोरस की 80-120 कि.ग्रा./हे. देना चाहिए जिसकी पूर्ति सिंगल सुपर फॉस्फेट 400-500 कि.ग्रा./हे. देने से हो जाती है। पोटाश की 100-150 कि.ग्रा./हे. जरूरत पड़ती है जिसको म्यूरेट ऑफ पोटाश 175-225 कि.ग्रा./हे. देने से पूर्ण की जा सकती है।

खाद और उर्वरक का प्रयोग

अंतिम जुताई करने के समय खाद की आधी मात्रा खेत में बिखेर कर मिला देना चाहिए। बची हुए खाद की आधी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा, फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय बनी नालियों में देना चाहिए। उर्वरकों को अच्छी तरह से मिट्टी में मिला देना चाहिए। पत्ती चूसक कीड़े की रोकथाम

हेतु *थिमेट* 10 जी. दवा को 10 कि.ग्रा./हे. की देर से बुआई के समय तथा 8 कि.ग्रा./हे. मिट्टी भराई के समय प्रयोग करनी चाहिए।

फसल की सिंचाई

बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए फिर भी यदि नमी कम हो तो एक समान अंकुरण के लिए बुआई के दूसरे दिन ही हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। ध्यान रहे कि सिंचाई में पानी इतना ही देना चाहिए कि मेंड़ का एक तिहाई ऊपरी भाग सूखा रहे। इसके बाद मिट्टी की संरचना एवं मौसम के अनुसार से सिंचाई करना चाहिए। बीज आलू की फसल में लगभग 4 से 6 सिंचाई की आवश्यकता होती है। मिट्टी चढ़ाने के बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। पौधों के लतर उखारने के 10 दिन पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

आलू फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई के बाद लेकिन बीज जमाव से पहले *ऑक्सीफलुरोफेन* (गोल) की 0.5 लीटर अथवा *मेतरिबुजिन* नामक दवा 0.75 ग्रा. की ए.आई. मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि दवाई के छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए।

फसल की गुड़ाई

अच्छी पैदावार तथा अधिक आमदनी के लिए सही समय पर निराई, गुड़ाई तथा मिट्टी चढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। फसल की समय से गुड़ाई करने से पैदावार में वृद्धि होती है। आमतौर पर फसल की गुड़ाई 20 से 30 दिन पर करना चाहिए। गुड़ाई के बाद शेष बचे नाइट्रोजन को डालकर मिट्टी चढ़ाने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए। मिट्टी चढ़ाने का कार्य मानवीय या मशीन द्वारा किया जा सकता है। मशीन से करने पर पैसे व समय की बचत होती है। ऐसा करने से कन्दों का अच्छा विकास होता है।

माहू तथा सफेद मक्खी का नियंत्रण

माहू तथा सफेद मक्खी मुख्य तौर पर आलू की फसल को नुकसान पहुँचाते हैं। साथ ही साथ विषाणुओं को एक पौधे से दूसरे पौधे तक पहुंचाने का भी कार्य करते हैं। अतः माहू तथा सफेद मक्खी का नियंत्रण करना महत्वपूर्ण हो जाता है। इसके लिए जनवरी प्रथम सप्ताह में मेटासिसटॉक्स नामक दवा के 1.25 लीटर अथवा *इमिडाक्लोरोपिड (कोनफिडोर)* नामक दवा की 3 मिलीलीटर मात्रा को 10 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

पछेती झुलसा के लिए अनुकूल मौसम

यह फफूँद द्वारा लगने वाला एक रोग है। सबसे ज्यादा नुकसान आलू की फसल को होता है। यह बीमारी पौधों की पत्तियों, डंठलों तथा कन्दों सभी में लगती है। जब 2-3 दिन तक लगातार तापमान 10^0-20^0 सैल्सियस, हवा में नमी 85 प्रतिशत से अधिक हो, बादल छाये हुए हों तथा हल्की बूंदा-बांदी होती रहे या कोहरा छाया हो, उपरोक्त परिस्थितियां उपलब्ध हो तो शत प्रतिशत सुनिश्चित समझना चाहिए कि बीमारी आने वाली है।

पछेती झुलसा के लक्षण

पहले पत्तियों पर छोटे, हल्के, भूरे अनियमित धब्बे, दिखाई देते हैं जो शीघ्र ही बढ़कर बड़े गीले दिखने वाले धब्बे बन जाते हैं। बाद में पत्तियों की निचले सतह पर धब्बों के चारों तरफ अगूँठीनुमा सफेद फफूँद दिखाई देती है। कंद का गूदा बदरंग हो जाता है तथा उसमें से जली हुई चीनी जैसी महक आती है। गूदे के किनारे पर जंगनुमा भूरापन आ जाता है।

पछेती झुलसा का नियंत्रण

पछेती झुलसा रोग से बचाव के लिए जब दो पंक्तियों के पौधों के पत्ते आपस में सटने लगें तो *मैन्कोजेब* या *डाइथेन* एम-45 नामक दवा का 0.20 प्रतिशत का घोल बनाकर का 0.20 प्रतिशत 2 दिसम्बर महीने के पहले मध्य सप्ताह में रोग के आने के पहले अवश्य कर देना चाहिए। पहली बार यदि खेत में झुलसा का लक्षण दिखाई देता है तो *सैमोक्स्निल/रिडोमिल/कर्जेट एम-8* दवा का 2.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की देर से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। मौसम बीमारी के अनुकूल होने पर इन दवाओं का छिड़काव बारी-बारी से बदलकर करना चाहिए।

आलू की खुदाई

पौधे उखाड़ने के 10 दिनों बाद जब मिट्टी अनुकूल हो जाय तब ही खुदाई प्रारंभ करनी चाहिए। लत्तर काटने के बाद कन्दों के मिट्टी के अंदर छोड़ देने से छिलका सख्त हो जाता है तथा खुदाई के समय आलू नहीं छिलता है। खुदाई से पहले दो चार कंद को खोदकर भी देखा जा सकता है और यदि छिलका सख्त लगे तब खुदाई प्रारंभ कर देनी चाहिए। खुदाई के बाद आलू को ज्यादा देर तक धूप में न छोड़ें तथा शीघ्र ही किसी छायादार स्थान पर ढेर लगाकर 10-12 दिनों के लिए रख दें। इसके पश्चात ढेर में बीज आलू के कंदों में से कटे एवं रोगग्रस्त कंदों को निकाल देना चाहिए तथा आकार के अनुसार कंदों का श्रेणीकरण कर देना चाहिए।

उपज

सामान्य तौर पर आलू की पैदावार *सीड प्लांट* तकनीक से 300-400 क्विंटल/हे. प्राप्त होती है। यह आलू की किस्म, जलवायु तथा प्रबंधन पर निर्भर करती है।

ज्ञान-विज्ञान प्रभाग

y?kq d"kdks gsrq cdjh ikyu ,o m|ferk fodkl

nhi ukjk;.k flag] jtuh'k flkgh] ;teUn flag] vt; dqekj ,o eerk
mÙkj izns'k nhun;ky mik/;k; i'kq fpfdRlk foKku fo'ofo|ky; ,o xks&vuql a/kku laLFkku] eFkqjk

हमारे देश की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में बकरी जैसे छोटे आकार के पशु का भी महत्वपूर्ण योगदान है। बकरी पालन प्रायः सभी जलवायु में कम लागत, साधारण आवास, सामान्य रख-रखाव तथा पालन पोषण के साथ संभव है क्योंकि वातावरणीय परिवर्तन का इस पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। बकरी में अयोग्य खाद्य पदार्थों को उच्च कोटि के पोषक पदार्थों जैसे दूध, मांस, रेशा एवं बाल में परिवर्तित करने की अभूतपूर्व क्षमता होती है। बकरी भूमिहीन, छोटे और सीमांत किसानों के पोषण एवं आर्थिक उन्नयन में महत्वपर्ण भूमिका निभाती है और यह अपने आप में एक पूरक व्यवसाय है। चूंकि ये अनुपजाऊ एवं बंजर भूमि पर उगी झाड़ियों, कटीले वृक्षों की पत्तियाँ खाकर अपना जीवन निर्वाह करने में सक्षम है। बकरी पालन एक ऐसा व्यवसाय है जो कि तुलनात्मक रूप से बहुत कम पूँजी से प्रारम्भ किया जा सकता है। इस व्यवसाय का गरीब किसानों की आय बढ़ाने, रोजगार दिलाने एवं पोषक पदार्थों को उपलब्ध कराने में विशेष योगदान है। यही कारण है कि महात्मा गाँधी बकरी को 'गरीब की गाय' कहा करते थे।

बकरी पालन की प्रमुख विषेशतायें

- बकरी आकार में अत्यन्त छोटी और स्वभाव से बहुत ही शांत प्रकृति की होती है, इसीलिए इन्हें पालने में ज्यादा कठिनाई नहीं होती है।
- बकरी पालन हेतु कम जगह की आवश्यकता होती है। अतः यह व्यवसाय भूमिहीन एवं अल्प भूमि वाले किसान अपना सकते हैं।
- बकरी के लिए शुष्क जलवायु उपयुक्त होती है, यद्यपि यह हर प्रकार के वातावरणीय परिस्थितियों में अपने-आपको ढालने में समर्थ है।
- इनके पालन हेतु किसी विशेष प्रकार के आवास की आवश्यकता नहीं होती है।
- बकरी एक बहुउद्देशीय पशु है, क्योंकि यह दूध, मांस, रेशा, खाल आदि प्रदान करती है।
- अन्य दुधारू पशुओं की तुलना में बकरियों को कम मात्रा में दाना की आवश्यकता होती है, अर्थात इनको पालने में बहुत ही कम खर्च लगता है।
- बकरी हर प्रकार के पेड़-पौधे एवं झाडियों को खा सकती है।
- नर एवं मादा बकरी सामान्यतया 10-15 माह में वयस्क होकर प्रजनन के योग्य हो जाते हैं।
- सामान्यतया एक बकरी साल में दो बार बच्चे देती है, जिससे इनकी संख्या बहुत तेजी से बढ़ती है और साथ ही पशुपालक आवश्यकतानुसार इसे बेचकर आर्थिक अर्जन भी कर सकते है।
- बकरी के दूध में औषधीय गुण विद्यमान होते हैं, जो विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में प्रयुक्त किया जाता है।

बकरी की प्रमुख उन्नतशील नस्लें

हमारे देश में बकरी की लगभग 20 से ज्यादा उन्नतशील नस्लें पायीं जाती हैं, जिसमें से जमुनापारी, बर्बरी, ब्लैक बंगाल, सिरोही, बीटल, झखराना एवं मारवारी प्रमुख नस्लें हैं, परन्तु उत्तर प्रदेश हेतु जमुनापारी एवं बरबरी ही प्रमुख हैं।

जमुनापारीः इस नस्ल का मूल स्थान यमुना एवं चंबल नदी के तटीय स्थान विशेषतया उत्तर प्रदेश के आगरा, इटावा, मथुरा एवं चकरनगर, तथा मध्य प्रदेश के मुरैना एवं भिंड जिले हैं। यह अपने देश की सबसे बड़ी एवं अद्भुत नस्ल है। इस नस्ल का उपयोग हमारे देश में नस्ल सुधार के लिए किया जाता है। यह नस्ल दूध उत्पादन एवं माँस उत्पादन दोनों के लिये प्रसिद्ध है, यद्यपि यह दूध उत्पादन में अपने देश में सर्वोत्तम है। इसका दूध उत्पादन तीन महीने में लगभग 100-110 लीटर होता है।

पुठ्ठे एवं पिछले पैर की जांघ पर पीले-सफेद बड़े बाल जबकि बाकी शरीर के अन्य भाग पर सफेद रंग के छोटे-छोटे बाल पाये जाते हैं। इनकी नाक ऊपर की ओर उठी हुई अर्थात रोमन नाक या तोते के मुँह के जैसी प्रतीत होती है। इनके कान बहुत ही लम्बे, चपटें और नीचे की तरफ लटके होते हैं। वयस्क बकरी में कान की लम्बाई 12 इंच तक हो सकती है। इस नस्ल की बकरियां औसतन 1.5 से 2.0 लीटर दूध देती हैं। प्रायः इस नस्ल की बकरियाँ वर्ष में एक बार केवल एक ही बच्चा देती है।

जमुनापारी नर

जमुनापारी मादा

बच्चे

बरबरीः यह एक अच्छी एवं छोटे आकार की बकरी की दुधारू नस्ल है, जिसका मूल स्थान संभवतः पूर्वी अफ्रीका में ब्रिटिश सोमाली का बारबरा शहर है। अपने देश में यह नस्ल उत्तर प्रदेश के इटावा, आगरा, मथुरा व अलीगढ़ तथा राजस्थान के भरतपुर में पायी जाती है। इस नस्ल की बकरियाँ प्रायः एक साथ दो या तीन बच्चे देती हैं अर्थात इनमें बच्चे पैदा करने की प्रचुर क्षमता होती है। इसके छोटे आकार के कारण इसे एक स्थान पर बांधकर भी खिला सकते हैं।

इसके शरीर का रंग प्रायः सफेद तथा पूरे शरीर के ऊपर भूरे रंग के धब्बे पाये जाते हैं। इस नस्ल की बकरियों के कान प्रायः छोटे, नली के समान एवं सीधे होते हैं। नर एवं मादा दोनों में मध्यम आकार की मुड़ी हुई सींग पायी जाती है। नर बकरे में लम्बी दाढ़ी भी पायी जाती है। मादा बकरी सामान्यतया एक दिन में लगभग 750-1000 मि.ली. तक दूध देती हैं। इनका दुग्धकाल लगभग 150 दिन होता है, जिसमें यह 130-200 लीटर तक दूध देती हैं। इस नस्ल की बकरियां 12-15 माह में दो बार में बच्चे दे सकती हैं। इस प्रजाति में जुँड़वे बच्चे देने की संभावना सर्वाधिक 65 प्रतिशत होती है।

वैज्ञानिक और लाभदायक बकरी पालन के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए :-

प्रजनन योजनाः भारत में 20 प्रजातियों की बकरियाँ उपलब्ध हैं। अपने देश में पायी जाने वाली विभिन्न नस्लें मुख्य रूप से माँस उत्पादन हेतु उपयुक्त हैं।

देशी नस्ल को सुधारने के लिए निम्न प्रजनन नीति का उपयोग करना चाहिए :-

उन्नयन प्रजनन पद्धतिः उन्नयन प्रजनन पद्धति के द्वारा अवर्णित बकरियों को सुधारने के लिए वर्णित नस्ल के बकरों के साथ प्रजनन किया जाता है। जैसे कि जमुनापारी, बारबरी, ब्लैक बंगाल आदि उन्नत नस्लों को अवर्णित नस्ल को सुधारने के लिए प्रयोग किया जा सकता है और इससे उत्पादन को बढाया जा सकता है व बकरियों से होने वाली आय में वृद्धि हो सकती है।

संकर प्रजनन पद्धतिः संकर प्रजनन पद्धति के द्वारा विदेशी नस्ल के बकरों से देशी नस्ल के साथ प्रजनन किया जाता है। जैसे कि अच्छा माँस उत्पादन के लिए दक्षिण अफ्रीका के बोअर नस्ल के बकरों से देशी नस्ल के बकरियों को प्रजनन किया जा रहा है।

प्रजनन हेतु नर का चयनः प्रजनन हेतु नर का चयन निम्नलिखित गुणों के आधार पर करें :

- माँ का दूध उत्पादन अच्छा होना चाहिए।
- जुड़वा बच्चे उत्पन्न करे।

- शारीरिक वजन और बनावट अच्छा हो।
- अण्डकोश की वृद्धि सही रूप से हो।
- अच्छा वीर्य हो।
- जिसमें जीवित शुक्राणु का प्रतिशत अधिक हो एवं असामान्य शुक्राणु न हो।

प्रजनन हेतु मादा का चयन : प्रजनन हेतु मादा का चयन निम्नलिखित गुणों के आधार पर करें।

- एक साथ दो या तीन बच्चे दें।
- 6 से 9 माह में प्रजनन योग्य हो जाएं।
- दो साल में तीन बार बच्चे दें।
- संकर नस्लें 200–250 दिन के दुग्धकाल में 300 लीटर दूध दे।
- देशी नस्लें 120–150 दिन के दुग्धकाल में 150–200 लीटर दूध दे।

प्रजनन प्रबंधन

- आदर्श प्रबंधन के द्वारा इस प्रकार योजना बनाना चाहिए कि मादा से 2 साल में 3 बार बच्चे प्राप्त हों।
- मादा बच्चे करीब 8 से 10 माह की उम्र में वयस्क हो जाते हैं और इस उम्र में पाल दिलाना चाहिए।
- बकरी में ऋतुचक्र करीब 18 से 20 दिनों का एवं ऋतुकाल 36 घंटों का होता है।
- अधिकांश बकरियाँ मध्य सितंबर से मध्य अक्टूबर तथा मध्य मई से मध्य जून के बीच गर्म होती हैं।
- ऋतुकाल शुरू होने के 10–12 तथा 24–26 घंटों के बीच दो बार पाल दिलाना चाहिए। जैसे अगर बकरी सुबह में गर्म हुई हो तब उसे उसी दिन शाम में एवं दूसरे दिन सुबह में पाल दिलाएं।

बकरी के ऋतुकाल के लक्षण इस प्रकार हैं -

- विशेष प्रकार की आवाज निकालना
- लगातार पूँछ हिलाना
- चरने के समय इधर-उधर भागना
- घबराई हुई रहना
- दूध उत्पादन में कमी होना
- भगोष्ठ में सूजन और योनि द्वार का लाल होना
- योनि से साफ पतला लेसेदार द्रव्य निकलना
- नर का मादा के ऊपर चढ़ना या मादा का नर के ऊपर चढ़ना।
- इन लक्षणों को जानने पर ही गर्म बकरी को समय से पाल दिलाया जा सकता है।
- बच्चा पैदा करने के 30-31 दिनों के बाद ही गर्म होने पर बकरी को पाल दिलवायें।

आवास प्रबंधन

- बकरियों के लिए आवास वातावरण के अनुसार बनाना चाहिए जहाँ बकरियों को गर्मी, सर्दी, बरसात तथा जंगली जानवरों से बचाया जा सके।
- प्रत्येक वयस्क बकरी के परिवार के लिए 10 से 12 वर्ग फीट जमीन की आवश्यकता होती है।
- बकरा-बकरी को अलग रखना चाहिए।
- 60 बकरियों तक के समूह को एक साथ एक बाड़ें में रख सकते हैं।
- बकरों को अलग-अलग बाड़ों में रखना चाहिए।

घर की दीवाल या किसी चहरदीवारी से लगाकर बकरी के आवास का निर्माण किया जा सकता है और इससे लागत कम आयेगा। पीछे वाले दीवाल की ऊँचाई 8 फीट तथा आगे वाले का 6 फीट रखें। घर हवादार एवं साफ सुथरा रहना चाहिए। घर की जमीन ढलुआ होना चाहिए ताकि सफाई करना आसान हो।

गर्भवती बकरी की देखरेख: बकरियों में गर्भावस्था औसतन 142–148 दिनों का होता है। गर्भवती बकरियों को गर्भावस्था के अंतिम डेढ़ महीने में अधिक सुपाच्य एवं पौष्टिक भोजन देना चाहिए क्योंकि भ्रूण के विकास के लिए ये जरूरी है। इस समय गर्भवती बकरी के पोषण एवं रख-रखाव पर ध्यान देने से स्वस्थ बच्चा पैदा होगा एवं बकरी अधिक मात्रा में दूध देगी। बच्चे देने के 2-3 दिन पहले से बकरी को साफ सुथरा एवं अन्य बकरियों से अलग रखें।

बच्चों की देखभाल: जन्म के उपरांत नवजात मेमनों के नाल को 2-2.5 इंच नीचे से नए ब्लेड से काटकर जीवाणु रहित टिंचर आयोडीन या डिटॉल लगा दें। बच्चों को साफ-सुथरे स्थान पर रखें और ठंड से बचाएं। इनको पाँच दिन तक खीस पिलाएं। अच्छे माँस उत्पादन के लिए नर बच्चों को उम्र के पहले दो हफ्तों के दौरान बधिया करें।

पोषण: बकरियाँ चरने के अतिरिक्त, हरे पेड़ की पत्तियाँ, हरी घास, दाल चुन्नी, चोकर आदि पसन्द करती हैं। बकरियों को रोज 6 -8 घंटें चराना जरूरी है। यदि बकरी को घर में बाँधकर रखें तब उसे कम से कम दो बार भोजन दें। बकरी हरा चारा (लूसर्न, बरसीम, जई, मकई, नेपियर आदि) और पत्ता (बबूल, बेर, पीपल, गूलर आदि) भी खाती है।

l?kVd	LVkVj jk'ku	c<r jk'ku	n/kk: cdjh dk jk'ku	xHkorh cdjh dk jk'ku ¼xke½
मकई	37	15	52	35
दलहन	15	37	–	–
खली	25	10	8	20
गेंहूँ की भूसी	20	35	37	42
खनिज मिश्रण	2.5	2	2	2
साधारण नमक	0.5	1	1	1

रोग निवारण: बकरियों में कम आहार लेना, बुखार आना, अनावश्यक स्राव आना तथा पशु व्यवहार में परिवर्तन जैसे लक्षणों को ध्यान दें और बीमार बकरी को पशुचिकित्सक द्वारा जाँच कराएं। बकरी तथा इनके बच्चों को नियमित रूप से कृमिनाशक दवा दें और टीकाकरण कराएं।

- बकरियों को नियमित रूप से खुजली से बचाव के लिए जहर (*मैलाथियान*-1.5 से 2 प्रतिशत तक घोल, *सुमिथियान, असन्टल बूटॉक्स* आदि) स्नान या छिड़काव (*मैलाथियान*- 0.5 प्रतिशत, *सुमिथियान*- 0.05 प्रतिशत, *असन्टल*- 0.2 प्रतिशत) करें। आवास में भी उक्त जीवाणुनाशक घोल से छिड़काव करें।
- बच्चों को 8 हफ्ते की उम्र में *इन्ट्रोटोक्सीमिया* एवं टिटनेस का टीका एवं 12 हफ्ते की उम्र में पुनः लगवाएं। बकरी को टिटनेस का टीका प्रजनन के 4-6 हफ्ते पहले एवं पुनः बच्चे देने के 4-6 हफ्ते पहले लगाएं। बकरे को टिटनेस का टीका साल में एक बार लगाएं।
- **उत्पाद की बिक्री:** बकरी पालन के उत्पाद की बिक्री हेतु बाजार सर्वत्र उपलब्ध है। बकरी पालन से बच्चे, दूध, माँस, खाद, अनुत्पादक एवं निष्कासित बकरा और बकरी आदि को बाजार में बेच सकते हैं। इसके अतिरिक्त, खाल, सिर, खूर, आँत आदि से भी लाभ प्राप्त होता है। नर का वजन 15 कि.ग्रा. होने पर माँस हेतु उपयोग में लायें। खस्सी की बिक्री 6-8 माह की उम्र में करना लाभप्रद रहता है।

दाने का संघटन एवं मात्रा

ik"k.k dh lph		
me	Hkkstu ds l?kVd	Ekk=k
जन्म से तीन दिन तक	खीस	यथेष्ट
तीन दिन से तीन सप्ताह तक	दूध	450 मि.ली.
तीन सप्ताह से 4 महीने तक	दूध स्टार्टर राशन हरा चारा	450 मि.ली. 8 सप्ताह तक 150 ग्राम प्रतिदिन यथेष्ट
4 महीने से प्रसव तक	दाने का मिश्रण हरा चारा	450 ग्राम प्रतिदिन यथेष्ट
दुधारू बकरी	दाने का मिश्रण हरा चारा	350 ग्राम प्रति लीटर दूध के लिए यथेष्ट
बकरा	चारागाह दाने का मिश्रण एवं चारागाह	जब मदकाल न हो 400 ग्राम दाने का मिश्रण मदकाल के समय

टीकाकरण

Ekkg	chekjh dk uke	Vhds dk izdkj@uke	Vhds dh ek=k ,oa fof/k	fVIi.kh
फरवरी	*इन्टेरोटॉक्सीमिया*	*मल्टीकम्पोनेन्ट*	2.5 मिली त्वचा के नीचे	15 दिन के बाद पुनः लगाएं
मई–जून	खुरपका–मुँहपका	*पालीवैलेन्ट*	2.3 मिली त्वचा के नीचे	प्रतिवर्ष पुनः लगाएं
मई–जून	गलघोंटू/घुर्रका	*ऑयल एड्जुवेन्ट*	2.0 मिली त्वचा के नीचे	प्रतिवर्ष पुनः लगाएं
सितम्बर	चेचक	*पॉक्स वैक्सीन*	0.5 मिली त्वचा के नीचे	प्रतिवर्ष पुनः लगाएं
दिसम्बर	*इन्टेरोटॉक्सीमिया*	*मल्टीकम्पोनेन्ट*	2.5 मिली त्वचा के नीचे	प्रतिवर्ष पुनः लगाएं
–	*टिटनेस*	*टिटनेस टॉक्साइड*	0.5 मिली त्वचा के नीचे/मांस में	6 माह बाद पुनः एवं प्रतिवर्ष लगायें
–	*पी.पी.आर.*	*पी.पी.आर. वैक्सीन*	1.0 मिली त्वचा के नीचे	प्रतिवर्ष पुनः लगाएं

आरोग्य-संजीवनी प्रभाग

xehZ esa ,sls j[ksa viuk Hkkstu dk /;ku

vuhrk Jkoukuh
Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

गर्मी में आपकी कार्यक्षमता पर तो बुरा असर पड़ता ही है, अपने ऊपर अधिक ध्यान देने की भी जरूरत होती है। खासकर खानपान का तो इस मौसम में विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। गर्मी के मौसम में अगर अपने ऊपर पर्याप्त ध्यान न दिया जाए तो तरह-तरह की मुश्किलें सामने आ सकती हैं। शरीर से अत्यधिक मात्रा में पसीना निकलने से जहाँ *डिहाइड्रेशन* की समस्या परेशान करती है, वहीं बेचैनी, घबराहट, सुस्ती और ऊर्जा में कमी गर्मी के मौसम में आम लक्षण हैं। गंदगी भी कई बीमारियों की वजह बनती है। ऐसे में खाने-पीने का खास खयाल रखा जाए तो शरीर के कमजोर होने और बीमारी पास आने की आशंका काफी कम हो जाती है। दूसरी तरफ मौसम के अनुकूल भोजन करने से अपनी दिनचर्या को संतुलित रखकर स्वस्थ रहा जा सकता है।

पानी अधिक लें, चाय छोड़ें

इस मौसम में शरीर में पानी का स्तर ठीक रखना बेहद जरूरी है। इसके लिए यह भी जानना जरूरी है कि कौन-सा पेय पदार्थ लें और कौन-सा नहीं। ऐसे पेय पदार्थ लेने से बचें, जो पेट में गैस पैदा करते हैं। खासकर चाय का सेवन बहुत कम करना चाहिए। अगर संभव हो तो चाय छोड़ ही दें या दो कप से ज्यादा न लें, क्योंकि यह आपके पाचनतंत्र को बिगाड़ती है।

नारियल पानी है अमृत

नारियल पानी इस मौसम में सेहत के लिए काफी फायदेमंद होता है। इस मौसम में जौ भी काफी फायदेमंद साबित होता है। इसे दही में डालकर सत्तू के रूप में भी खा सकते हैं या इसे उबाल कर टमाटर, खीरा, मिर्च, हरी चटनी, नमक आदि मिलाकर भी खाया जा सकता है। रोटी में भी जौ के आटे का इस्तेमाल करें। गेहूँ और जौ का आटा बराबर मात्रा में मिलाकर रोटी बनाएं। इस मौसम में यह शरीर को ठंडा भी रखेगी और पेट भी ठीक रहेगा।

चना जो आपको रखे ठंडा

चने को भी अपने भोजन में प्रमुखता से शामिल करें। काला और हरा चना दोनों ही इस मौसम में ज्यादा खाना चाहिए, क्योंकि इसकी तासीर ठंडी होती है। इससे पेट नहीं फूलता और भूख भी शांत हो जाती है।

मौसमी फलों को दें तरजीह

फलों में मौसमी, तरबूज, खरबूजा आदि इस मौसम में काफी फायदेमंद होते हैं। पित्त की समस्या है तो खीरे और लौकी के रस को बराबर मात्रा में मिलाकर उसमें सेंधा नमक या लवण भास्कर आयुर्वेदिक चूर्ण डालकर पीना चाहिए। यह गैस को नियंत्रित रखता है और पाचन क्षमता को भी बेहतर बनाता है। सलाद और चाट में भी सादे नमक की बजाय इन्हीं का इस्तेमाल करें। यह आम का भी मौसम है, लेकिन आम को खाने में थोड़ी सावधानी बरतें। खाने से पहले आम को दो घंटे के लिए पानी में डुबोए रखें, फिर उसका इस्तेमाल करें क्योंकि गरम आम खाने से पाचन क्रिया में अवरोध उत्पन होता है।

धनिया, पुदीना और प्याज भी जरूरी

इस मौसम में हरी चटनियों का सेवन करना बहुत ही लाभकारी सिद्ध होता है। धनिया, पुदीना, आंवला, प्याज आदि की चटनी बनाकर भोजन के साथ खाना लाभकारी होता है। साथ ही साथ कच्चे आम का पन्ना बहुत ही लाभकारी होता है, यह खाने का स्वाद तो बढ़ाता है साथ ही साथ मौसम के अनुरूप भी होता है।

कामकाजी हैं तो

गर्मी के मौसम में कामकाजी लोगों को खाली पेट घर से बिलकुल नहीं निकलना चाहिए, क्योंकि इससे लू लगने की आशंका बढ़ जाती है। कामकाजी महिलाएं दोपहर के भोजन में सलाद, छाछ ज्यादा लें तो बेहतर है। नाश्ता करके ही घर से निकलना लाभकारी होता है।

नॉनवेज न खाएं

आप मांसाहारी हैं तो इस मौसम में उसकी मात्रा कम कर दें। अल्कोहल के इस्तेमाल से भी बचें। ये गर्म तासीर की चीजें हैं, जिन्हें पचाने के लिए शरीर को काफी मेहनत करनी पड़ती है।

बच्चों का रखें खास खयाल

बच्चों को इस मौसम में ऐसी चीजें न दें, जो जल्दी खराब हो जाती हैं। नूडल्स, बर्गर आदि का इस्तेमाल न्यूनतम करना चाहिए। नींबू पानी नियमित रूप से दें। बच्चा खाना वापस ला

रहा है तो उसे चावल और जौ की चीजें दे सकते हैं।

सुबह का नाश्ता कैसा हो?

सुबह का नाश्ता इस मौसम में बहुत जरूरी है, इसलिए इसे कभी भी *मिस* न करें। नाश्ते में तरल पदार्थों को तरजीह देना आवश्यक होता है। नारियल पानी, फल आदि को प्रमुखता से शामिल कर सकते हैं। पोहे को भी नाश्ते में सम्मिलित किया जा सकता है।

दोपहर का खाना कैसा हो?

दोपहर के भोजन में भी तरल पदार्थों का होना अति आवश्यक होता है। साथ ही साथ काले या हरे चने की चाट बना सकते हैं। रोटी, सब्जी, रायता, लस्सी, छाछ और हरी सब्जियों को खाने में शामिल करें। दही का सेवन कई रूप में किया जा सकता है। गोभी इस मौसम में कम खाएं, क्योंकि ये इस मौसम की सब्जी नहीं है। इस मौसम की सब्जियों में बीन्स, पालक, परवल, कद्दू, तुरई आदि का उपयोग करें। लौकी को भी अलग-अलग तरह से बना सकते हैं।

शाम के नाश्ते में क्या लें

शाम को मुरमुरे, भेलपुरी खाना ठीक रहेगा। कभी-कभी सलाद भी ले सकते हैं। शाम को शरबत, ठंडाई आदि पी जा सकती है। खस, गुलाब आदि का शरबत भी अच्छा रहता है। नींबू पानी और छाछ तो फायदेमंद हैं ही।

रात के खाने को हल्का रखें

रात के खाने को हल्का रखें। इस समय सलाद और सब्जी ज्यादा खाएं। रोटी खाते हैं तो उसकी संख्या दोपहर के भोजन से एक कम रखें। दूध की जरूरत गर्मियों में होती नहीं। नींद की समस्या है तो दूध पी सकते हैं, पर उसकी मात्रा कम रखें और उसमें इलायची डाल लें। चाय-कॉफी का सेवन रात में बिल्कुल न करें।

उच्च रक्तचाप या मधुमेह की समस्या है तो

उच्च रक्तचाप का खतरा इस मौसम में बढ़ जाता है। इसके अलावा मधुमेह के रोगियों में *डिहाइड्रेशन* होने की आशंका भी रहती है। ऐसे लोग खाने का समय निश्चित रखें और पानी व तरल पदार्थ समय-समय पर लेते रहें। इस मौसम में खाना बिल्कुल न छोड़ें। मूँग की खिचड़ी ले सकते हैं। यह पेट के लिए काफी फायदेमंद रहती है। मधुमेह के रोगी रात का भोजन करना कभी न भूलें। फलों का चुनाव समझदारी से करना चाहिए और अपने डॉक्टर के निर्देशानुसार दवा आदि समय पर लेते रहें।

भोजन में थोड़ी फेरबदल करके और दिनचर्या में परिवर्तन लाकर इस मौसम का मजा लिया जा सकता है।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

vkikrdkyhu çkFkfed i'kq fpfdRlk

vrqy dqekj lpku] jktss'k dqekj] vfHk"kd dqekj flag] vkj-d- flag ,o dkerk izlkn
Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

प्राथमिक चिकित्सा वह पद्धति है जो किसी रोग के गंभीर अवस्था में फैलने के पूर्व की जाती है। इससे पशु कभी-कभी स्वस्थ भी हो जाता है व बीमारी विकराल रूप धारण नहीं कर पाती। चिकित्सक को बुलाने का समय मिल जाता है और उन्हें भी पशु के उपचार में आसानी हो जाती है। प्राथमिक चिकित्सा का पशु चिकित्सा में बहुत महत्व होता है। पशुओं को होने वाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ व आकस्मिक आपातकालीन अवस्थाएं तथा उनके प्राथमिक उपचार निम्नलिखित हैं :

रक्तस्राव

रक्त को रोकने का प्रमुख सिद्धांत है कटी हुई नली पर दवाब देना ताकि रक्त का बहना रूक जाए। कटे हुये स्थान को 2-3 से.मी. ऊपर व नीचे से बाँध देना चाहिये। कई बार कटे हुये स्थान पर बाँध पाना सम्भव नहीं होता। ऐसी स्थिति में कपड़े की मोटी तह बनाकर फिटकरी के घोल में भिगोकर कटे हुये स्थान पर जोर से दबाकर रखना चाहिये। रक्तस्राव वाले स्थान पर बर्फ या ठंडे पानी को भी लगातार डालकर रक्त का बहना रोका जा सकता है। यदि खून की नली कट गई हो तो चिकित्सक को दिखाना आवश्यक होता है। शरीर से जितना रक्त कम से कम बर्बाद हो, उतना ही अच्छा होता है, क्योंकि रक्त ही जीवन है।

हड्डी का टूटना या *फ्रैक्चर* होना

कई बार पशु का पैर गड्ढे में पड़कर या ऊँचाई से गिरकर उसकी हड्डी टूटने के कारण बनता है। यह दो प्रकार का होता है। पहली स्थिति में हड्डी टूटने के बाद चमड़े के अन्दर ही रहती है। जबकि दूसरी स्थिति में बाहर आ जाती है। हड्ड़ी का टूटकर चमड़े से बाहर निकल जाना खतरनाक स्थिति है। टूटी हड्डी को हिलने-डुलने से बचाने के लिये आवश्यक है, कि उन्हें बाँस की खपच्चियों से बाँध दिया जाये। बाँस की जगह पर दूसरे प्रकार का सामान भी व्यवहार में लाया जा सकता है जैसे: पेड़ की डाली आदि। हड्डी टूटने पर बहुत दर्द होता है, टूटी हड्डी यदि बाहर निकल आई हो तो उसे साफ कपड़े से ढक देना चाहिये। इस स्थिति में यह भी आवश्यक है, कि पशु अधिक हिल-डुल न पाए जो कि पशु के लिए अति पीड़ादायक स्थिति होती हैं।

घाव होना या चोट लगना

प्रायः चोट लगने या दुर्घटनाग्रस्त होने पर शरीर पर घाव हो जाते हैं। घाव दो प्रकार के हो सकते हैं। एक जिनमें चमड़ी फटी न हो व दूसरी जिसमें चमड़ी फट गई हो। जब चमड़ी फटी हुई नहीं रहती तो प्रायः चोट लगने पर उस जगह सूजन आ जाती है या फिर उसके नीचे खून का जमाव हो जाता है। दोनों ही हालात में बर्फ या ठंडे पानी से चोट की जगह सिकाई करने पर प्रायः फोड़ा नहीं बन पाता। जब चोट पुरानी हो जाती है तो गर्म पानी से सिकाई करना लाभदायक होता हैं। खुली हुई चोट यदि साधारण हो तो उसे साफ करके कोई भी *एन्टीसेप्टिक क्रीम* लगाना चाहिए। यदि खून बह रहा हो तो *टिंचर बैन्जोंइन* लगाना फायदेमंद रहता है।

किसी भी घाव को बिना इलाज किए छोड़ना खतरनाक हो सकता है। इसलिए साफ कर उसका साधारण इलाज करना चाहिए। यदि घाव गहरा हो, खून रिस रहा हो या पीव आ रहा हो तो चिकित्सक से सलाह अवश्य लेनी चाहिये।

जलना व फफोले पड़ना

सबसे पहले आग बुझाकर जले हुए भाग पर ठंडा पानी डालना चाहिए। ठंडे पानी से जलन कम हो जाती हैं। बाद में जैतून का तेल व नारियल का तेल का लेप लगाना चाहिए। जले हुए भाग पर चूने का पानी एवं अलसी का तेल बराबर भाग में मिलाकर लगाना लाभदायक रहता है। घावों को रगड़ने से बचाना चाहिए एवं चिकित्सक से अविलम्ब सलाह लेनी चाहिए।

आपातकालीन स्थितियाँ

पेट फूलना या अफारा

खुरधारी पशुओं द्वारा अधिक मात्रा में बरसीम खा लेने पर अनाज या बासी-खाना खा लेने पर यह अवस्था उत्पन्न हो जाती हैं। इस तरह के खाने से उत्पन्न गैस पेट से बाहर नहीं निकल पाती व पेट फूलने लगता हैं। इस स्थिति में पानी बिल्कुल नहीं देना चाहिए। यदि पेट फूलता ही जा रहा हो तो चिकित्सक को खबर देनी चाहिए। आवश्यक होने पर पेट में बाई तरफ ऊपर की ओर कोख से जहाँ गैस भरी हो किसी तेज धार वाले चाकू जिसे आग में गर्म करने के बाद ठंडा किया गया हो, छेद कर लेना चाहिए ताकि पशु की मृत्यु दम घुटने से न हो जाए। काला नमक 50 ग्राम, हींग 30 ग्राम, तारपीन का तेल 60 मि.ली. व अलसी का तेल 500 मि.ली. मिश्रण बनाकर पिला दें। इससे गैस बनना बन्द

हो जायेगा व आँतों में भी गति बढ़ेगी, इससे खाया हुआ भोजन जल्द बाहर निकल जाएगा।

पेशाब की नली व थैली में पथरी होना

यह बैलों को मुख्य रूप से होता है। इसके कई कारण हैं। खाने में कई तरह के खनिजों की अधिकता से ही पथरी बनती है। इस रोग के प्रारम्भ में कुल्थी दाल का पानी देना लाभदायक होता है क्योंकि यह पथरी को गलाने में सहायक है। दो दिन में यदि लाभ न मिले तो अविलम्ब चिकित्सक बुलाना चाहिए क्योंकि फिर आपरेशन ही एक मात्र उपाय है।

बेहोश होने पर

विभिन्न परिस्थितियों में पशु अचेत हो जाते हैं जैसे सिर में चोट लगना, पानी में डूबना, धुएँ में दम घुटना, विद्युत *करेन्ट* का झटका लगना, हृदय गति की धड़कन कम या ज्यादा होना, हृदयगति अवरूद्ध होना, आदि। अधिकतर स्थितियों में कृत्रिम श्वसन देना लाभकारी होता है। सिर में चोट लगने पर ठंडे पानी की पट्टियाँ सिर पर रखते हैं। विद्युत *करेन्ट* लगने पर पैर व छाती की मालिश करना व पशु को गर्म रखना चाहिए। कृत्रिम साँस देनी चाहिये व हृदय की मालिश करना चाहिए। यदि पशु कुछ समय उपरान्त पानी पीने की स्थिति में हो तब उसे नमक एवं गुड़ मिलाकर पानी पिलाना अत्यन्त लाभदायक रहता है।

पागल कुत्ते के काटने पर

पागल कुत्ते द्वारा काटे गये स्थान को लाईफबाय या कपड़े धोने के साबुन से कई बार धोना चाहिये और यदि *कारबोलिक एसिड* मिल जाये तो उससे घाव को जला देना चाहिये। रोगी पशु को अन्य मनुष्यों एवं जानवरों से दूर कर अविलम्ब पशु चिकित्सक से मिलकर टीके अवश्य लगवाना चाहिये। इस कार्य में विलम्ब करने पर पशु की जान तो जायेगी ही, बाकी साथ रह रहे मनुष्य भी चपेट में आ सकते हैं। अतः अति सावधानीपूर्वक इस मामले को देखा जाना चाहिये।

जहरीले रसायन या दवा से पीड़ित होने पर

जहरीले पौधे, कीटनाशक औषधियों, यूरिया, चूहे मार दवा, साइनायड युक्त चारे जैसे ज्वार इत्यादि खाने से पशु जहरबाद से पीड़ित हो जाता हैं। बड़े पशु जैसे गाय, भैसों में उदर नलिका द्वारा अधिक से अधिक पानी पेट में डालते हैं और फिर निकालते हैं। यह क्रिया बार-बार करते हैं। और यदि उदर नलिका की सुविधा न हो तो अधिक से अधिक पानी पिलाना चाहिए। छोटे पशुओं में गुनगुने पानी में नमक या पिसी सरसों पानी में डालकर पिलाने से उल्टी हो जाती हैं, जिससे आमाशय में भरा जहर निकल जाता हैं। आँतों से विष निष्कासन हेतु दस्तावर या बिरौचक औषधियों का प्रयोग भी करते हैं जैसे मैग्नीशियम सल्फेट। बड़े पशु में 250 ग्राम व छोटे पशु में 100 ग्राम धोल कर पिलाते हैं या अलसी/अरन्डी का तेल 500 ग्राम पिलाते हैं। तत्पश्चात शीघ्र उपचार हेतु पशु चिकित्सक को बुलाना चाहिए। आँवला तथा जमालधोटा या काला नमक से तुरंत दस्त हो जाते हैं तथा पिया हुआ जहर बाहर निकल जाता हैं।

योनिपथ/बेल निकलना

इसका मुख्य कारण कैल्शियम व फास्फोरस की कमी होता हैं अतः गाभिन पशु को नित्य ब्याने के 1-2 महीने पूर्व से 50-100 ग्राम कैल्शियम देते रहना चाहिए, जिससे बेल निकलने की सम्भावना कम रहती हैं। इसमें खड़िया भी लाभप्रद हैं। अगर बेल निकल जाती है तो उसे डिटोल या लाल दवा की 1:100 के अनुपात वाले घोल से साफ करके उसे हाथ के दबाव से अन्दर कर देना चाहिए। अगले पैर नीचे स्थान पर व पिछले पैर ऊँचे स्थान पर रखने चाहिए, जिससे उस पर जोर कम पड़े। कपड़े या रस्सी की गठरी बनाकर बच्चेदानी को बाहर रस्सियों की सहायता से बाँध देते हैं। इसके लिए एक रस्सी पशु के उदर व दूसरी गर्दन के पास बाँध कर गठरी वाली रस्सियों से इन्हें बाँध देना चाहिए। पशु को कम मात्रा में पानी से मुक्त चारा देना चाहिए। पशुओं को तनावयुक्त परिस्थितियों से बचाना जरूरी हैं। अधिक जानकारी हेतु नजदीकी पशु चिकित्सक से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

आँख में कुछ गिरने पर

आँख में कुछ गिरने या कीचड़ इत्यादि होने की स्थिति में उसे साफ रूई या कपड़े की मदद से हल्के से निकाल देना चाहिये तथा शीघ्र एवं ताजे पानी से आँखों को धो देना चाहिये। यदि सम्भव हो तो सुहागा के 1:10 घोल से आँख की धुलाई कर देनी चाहिये।

रोग अवस्थाएँ

सामान्य रोग

जब पशुओं को ठंड लग जाती है तो नाक से पानी आना, शरीर गर्म होना, साँस जोर से लेना, साँस अन्दर जाते समय व छोड़ते समय जोर की आवाज होना आदि लक्षण मिलते हैं। इस स्थिति में पशु का नथुना भी सूखा रहता है। प्रायः नथुनों का सूखना ज्वर होने का परिचायक है। पशुपालक प्रायः इन लक्षणों को पहचान लेते हैं क्योंकि ये खतरनाक बीमारी को इंगित करते हैं।

लू लग जाने पर

खुले स्थान पर गर्मी के दिनों में रखने से या गर्म तेज हवा के चपेट में आ जाने से पशु को लू लग जाती है। इसमें शरीर का

तापक्रम सामान्य से बहुत आगे निकल जाता है। इस स्थिति में आवश्यक है कि सर्वप्रथम शरीर के तापक्रम को नियंत्रित किया जाये। इसलिये आवश्यक है कि पशु को ठंडे स्थान पर रखा जाए व उसके शरीर को ठंडा किया जाए। ठंडा करने के लिये बर्फ या ठंडा पानी शरीर पर, विशेष रूप से सिर पर डालना चाहिए। पशु को ठंडे पानी में तैयार किया हुआ चीनी, भुने हुए जौ का आटा व थोड़ा नमक बराबर पिलाते रहना चाहिए। पशु को पुदीना व प्याज का अर्क बनाकर देना चाहिए जो अति लाभदायक रहता है। यदि इन सबसे पशु ठीक न हो पाए तो चिकित्सक को बुला लेना चाहिए।

ठंड लग जाने पर

बदलते मौसम के समय प्रायः कम उम्र के पशुओं व कमजोर गायों को ठंड लग जाती हैं। इसमें नाक, आँख से पानी आना, भूख कम हो जाना, शरीर के रोयें खड़े रहना, पशु का काँपना आदि लक्षण प्रमुख हैं। श्वास गति तेज रहती है व ज्वर भी हो जाता है। ध्यान न देने पर पशु को न्यूमोनिया हो जाता है। अतः आवश्यक है कि पशु पर आरम्भ में ही ध्यान दिया जाए। इसके लिये गुड़ व गुनगुना पानी बार-बार देना फायदेमंद रहता है। अजवायन, सैंधा नमक व अदरक की बराबर मात्रा (20 ग्राम) को गुड़ के घोल में बनाकर पशु को देना अत्यन्त लाभदायक होता है। तारपीन या सरसों के तेल में कपूर डालकर पशु की मालिश करनी चाहिये व चिकित्सक को बुला लेना चाहिये।

दुग्ध ज्वर

यह रोग ज्यादातर गाय व भैसों में प्रसव के तुरंत बाद से लेकर 72 घंटे तक होता है। इस रोग के बचाव हेतु गर्भावस्था में खनिज लवण 50 ग्राम नित्य देना चाहिये और गर्भावस्था के अंतिम महीनों में 50-100 ग्राम कैल्शियम-फास्फोरस का मिश्रण अवश्य देना चाहिये तथा प्रसव के बाद भी जारी रखना चाहिये। खड़िया भी इस दौरान देना लाभकारी सिद्ध होता है।

थनों का घाव

थन व अयन में कई तरह से जख्म हो सकते हैं। बछड़े के दांत से कई बार जख्म लग जाते हैं। इसके अलावा, मक्खी के काटने से, किसी नुकीली वस्तु से या बैठने की जगह ऊबड़-खाबड़ या पथरीली होने पर भी थन में चोट लग जाती है। कई जख्म गहरे भी लग जाते हैं। साधारण जख्म को गर्म कर ठंडे किए हुये जल से साफ कर लेना चाहिये व उसके ऊपर *एन्टीसेप्टिक क्रीम* का लेप लगाना चाहिये। दूध निकलने का रास्ता अयन के अन्त में चोट लगने से बन्द हो सकता है। उसके अन्दर लौंग लगा देने से दूध आसानी से निकल जाता है फिर भी यदि 2-3 दिन में यह दशा न सुधर पाए तो उसे चिकित्सक को दिखलाना चाहिये।

पाचनतंत्र के रोग

पशुओं में जब भी पाचनतंत्र से सम्बन्धित बीमारी होती है तो पशु खाना छोड़ देते हैं या बेमन से थोड़ा ही खाते हैं। मल पतला या कड़ा हो जाता है। पेट फूलना, पेट पर पैर मारना, उठना-बैठना, पेट की ओर बार-बार देखना, लार गिरना, सुस्त होना आदि मुख्य लक्षण हैं। अतः पशु जब भी इस प्रकार के लक्षण को दर्शाता है तो पशुपालक को तुरन्त पशु की बीमारी के बारे में ध्यान देना जरूरी हो जाता है।

अतिसार

अधिक मात्रा में दाना या हरी घास खा लेने से प्रायः दस्त लग जाते हैं। इसके अलावा परजीवी व दूसरे कई तरह के जीवाणु भी दस्त का कारण हो सकते हैं। दस्त होते रहने से आँतों का पानी भी बाहर निकल आता है। इस कारण शरीर में जल की कमी हो जाती है। पानी की अधिकतम मात्रा शरीर में जाए इसके लिये गुड़, नमक व जौ का पका हुआ आटा मिलाकर पानी में घोल लेते हैं व पशु को पिलाते रहते हैं। इससे शरीर में पानी का स्तर बना रहता है। इसके अलावा माँड, खड़िया (100 ग्राम) व कत्था (200 ग्राम) मिलाकर पशु को देते हैं। यह मिश्रण दस्त को भी रोकता है। शरीर का अधिक पानी निकल जाने पर त्वचा सिकुड़ जाती है। त्वचा खींचने पर अपने स्थान पर आने में 6 सेकेण्ड से ज्यादा समय लगे तो समझ लेना चाहिये कि पशु खतरे की तरफ बढ़ रहा हैं। अतः चिकित्सक को तुरन्त बुला लेना चाहिये।

कब्ज

अधिक मात्रा में सूखा खाना, दाने की अधिक मात्रा, गला-सड़ा खाना देने से कब्ज हो जाता है। अतः कब्ज होने पर खुराक कम कर देना चाहिये। पशु को 60 ग्राम काला नमक, 60 ग्राम सादा नमक, 15 ग्राम हींग, 50 ग्राम सौंफ लेकर 500 ग्राम गुड़ में मिलाकर दिन में कई बाद देना चाहिए। इसके अलावा, 500 ग्राम *मैगसल्फ* या 250 मि.ली. अरण्डी का तेल देना चाहिए।

नाभि का हर्निया

यह प्रायः छोटे बछड़ों में देखा जाता है। नाभि की जगह फूली हुई रहती है व अंगुलियों से दबाने पर अंदर चली जाती है। इसके ऊपर मोटा कपड़ा लगाकर पीठ पर बाँध देना चाहिये। बछड़ों में कई बार ऐसा करने पर यह अवस्था ठीक हो जाती है। यदि ऐसा दो सप्ताह में ठीक न हो तो चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिये।

आरोग्य एवं संजीवनी प्रभाग

i'kvk e çlfr Toj % y{k.k ,o mipkj

dkerk çlkn[1] deykdkr[2] jkds'k dekj flg[1] fufdFkk ,y-[2] vry lpku[1] vfHk"kd dekj flg[1]
fnyhi dekj[1] ,o jke jru oek[1]
[1]Hkk—vui&Hkkjrh; xUuk vuq lá/kku lLFkku] y[kuÅ
[2]Hkk—vuq&jk"Vh; Mjh vuq lá/kku lLFkku] djuky

पशुओं में प्रसूति ज्वर को दुग्ध ज्वर (या *मिल्क फीवर*) के नाम से भी जाना जाता है। यह एक *मेटाबोलिक डिसऑर्डर* है यानि उपापचय सम्बंधित एक विकार है। यह रोग सामान्यतया गायों व भैंसों में ब्याने के दो दिन पहले से लेकर पांच दिन बाद तक होता है। परन्तु कुछ पशुओं में यह रोग ब्याने के पश्चात 15 दिन तक भी हो सकता है।

यह रोग प्रमुख रूप से अधिक दूध देने वाली गायों व भैंसों के रक्त में ब्याने के बाद कैल्शियम खनिज लवण के स्तर में एकाएक गिरावट के कारण होता है।

कैल्शियम दूध में पाया जाने वाला एक प्रमुख खनिज लवण है। ब्याने के बाद पशुओं के आरम्भिक गाढ़ा दूध जिसे खीस या *कोलोस्ट्रम* कहते हैं, में कैल्शियम की मात्रा पशु के रक्त में उपलब्ध कैल्शियम की मात्रा से 8 से 10 गुणा अधिक होती है।

अधिक दूध उत्पादक गायों व भैसों के खीस या दूध में अधिक मात्रा में कैल्शियम निकलने के कारण नवब्याहित पशु के रक्त में कैल्शियम का स्तर घट जाता है जिसके कारण पशु इस रोग से ग्रसित हो जाता है।

सामान्यतः पशुओं के रक्त में कैल्शियम का स्तर 8-12 मि.ग्रा./लीटर होता है। जब यह स्तर घटकर 6.5 मि.ग्रा. या इससे कम हो जाता है तो पशु में प्रसूति ज्वर के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

कैल्शियम लवण 99 प्रतिशत तक पशु की हड्डियों व दातों में उपलब्ध होता है तथा केवल 1 प्रतिशत शरीर के अन्य भाग में पाया जाता है। खीस या दूध में कैल्शियम की बढ़ी माँग को पूरा करने के लिए पशुओं को यह अपनी हड्डियों से अवशोषित करना होता है। जिस प्रक्रिया को पशु के गले में उपलब्ध पाराथायराइड ग्रंथि से संबधित पैराथायराइड हार्मोन द्वारा किया जाता है। पशु के ब्याने के बाद इस प्रक्रिया के देरी से आरम्भ होने के कारण पशु के रक्त में कैल्शियम का स्तर सामान्य स्तर से घट जाता है जिसके कारण यह रोग होता है।

हमारे देश में लगभग 14 प्रतिशत संकर नस्ल की गायों तथा लगभग 12 प्रतिशत भैसों में यह रोग पाया जाता है। अन्य देशों में 5-10 प्रतिशत गायों में यह रोग पाया जाता है।

प्रथम ब्यांत की गायों व भैसों की अपेक्षा दूसरी, तीसरी व चौथी ब्यांत की गायों व भैसों में दूध के अधिक उत्पादन के कारण यह रोग अधिक पाया जाता है।

इस रोग से ग्रसित पशुओं में अन्य रोगों जैसे जेर का रूकना, बच्चेदानी का संक्रमण या थनैला रोग की सम्भावना बढ़ जाती है तथा पशु का दूध उत्पादन कुछ दिन तक कम हो जाता है जिससे किसानों को अधिक हानि होती है।

लक्षण

प्रभावित पशुओं में इस रोग के लक्षण निम्नलिखित तीन अवस्थाओं में देखे जा सकते हैं :

आरम्भिक अवस्था

- प्रभावित पशु अति संवेदनशील व अशांत दिखाई देता है।
- पशु दुर्बल हो जाता है व चलने में लड़खड़ाने लगता है।
- पशु खाना-पीना व जुगाली करना बंद कर देता है।
- माँसपेशियों में कमजोरी के कारण शरीर में कम्पन होने लगता है व पशु बार-बार सिर हिलाने व रंभाने लगता है।
- प्रारम्भिक अवस्था के लक्षण लगभग एक घंटे तक दिखाई देते हैं तथा इस अवस्था के रोग की पहचान केवल अनुभवी किसान या पशु चिकित्सक ही कर पाते हैं।
- यदि इस अवस्था में पशु का उचित उपचार नहीं किया जाता तो पशु रोग की दूसरी अवस्था में पहुँच जाता है।

द्वितीय अवस्था

- पशु अधिक दुर्बल हो जाने के कारण खड़ा नहीं रह सकता तथा सीधा बैठ जाता है।
- पशु के शरीर का तापमान सामान्य से 2-4^0 F कम हो जाता है, यानि 97, 98 या 99^o फारेनहाइट तक आ जाता है।
- पशु के कान और पैर ठंडे पड़ने लगते हैं।
- पशु के हृदय की गति बढ़ जाती है व नब्ज कमजोर हो जाती है।
- पशु की थूथन सूख जाती है, आँखों में सुस्ती तथा आँखों की पुतलियाँ फैल जाती हैं।
- गोबर व मूत्र न त्याग पाने के कारण पशु को अफारा हो सकता है।

- पशु अपनी गर्दन को घुमाकर कोख पर रख लेता है जिससे पशु का आकार प्रश्नवाचक चिह्न (?) में जैसा दिखाई देता है, जो इस रोग का मुख्य लक्षण है।
- द्वितीय अवस्था के लक्षण एक घंटे से 12 घंटे तक दिखाई देते हैं। अगर इस समय भी पशु का उचित उपचार नहीं करवाया गया तो पशु रोग की तृतीय अवस्था में पहुँच जाता है।

तृतीय अवस्था

- पशु धीरे-धीरे बेहोशी की दशा में पहुँच जाता है। वह सीधा नहीं बैठ सकता व जमीन पर लेट जाता है।
- पशु को अत्यधिक अफारा हो जाता है।
- पशु की हृदय गति 120 धड़कन प्रति मिनट तक पहुँच जाती है तथा पशु की नब्ज बिल्कुल मंद पड़ जाती है।
- पशु के रक्त में कैल्शियम का स्तर केवल 3.5-5.5 मि.ग्रा./ली. तक रह जाता है।
- इस अवस्था में यदि पशु का तुरंत उपचार न करवाया जाए तो कुछ ही घंटों में पशु की मृत्यु हो सकती है।
- शारीरिक तापमान 95-96° फारेनहाइट तक नीचे आ जाता है।
- शरीर बहुत ठंडा हो जाता है।

उपचार

इस रोग का उपचार पशु के शरीर में आई कैल्शियम की अत्यधिक कमी को बाहर से कैल्शियम की आपूर्ति करके सफलतापूर्वक किया जा सकता है। रोग के लक्षण दिखाई देते ही तुरंत रोगी पशु को कैल्शियम बोरोग्लुकोनेट दवा की 450 मि.ली. की एक बोतल रक्त की नाड़ी के रास्ते चढ़ा देनी चाहिए। यह दवा धीरे-धीरे 10-20 बूंदें प्रति मिनट की दर से लगभग 40 मिनट में चढ़ानी चाहिए। यदि पशु दवा की खुराक देने के 8-12 घंटे के भीतर उठ कर स्वयं खड़ा नहीं होता तो इसी दवा की एक और खुराक देनी चाहिए।

इस रोग में प्रायः पशु के शरीर में मैग्नीशियम की भी कमी हो जाती है इसलिए कैल्शियम-मैग्नीशियम बोरोग्लुकोनेट के मिश्रण की दवा देने से अधिक लाभ होता है। यह दोनों दवाईयां बाजार में कई नामों से उपलब्ध है। सामान्यतः लगभग 75 प्रतिशत रोगी पशु उपचार के 2 घंटे के अंदर ठीक होकर खड़े हो जाते हैं। जो पशु दवा देने के पश्चात् 2 घंटे के अन्दर खड़े हो जाते हैं, उनमें से भी लगभग 25 प्रतिशत पशुओं को यह समस्या दुबारा हो सकती है। अतः एक बार फिर इसी उपचार की आवश्यकता पड़ सकती है। उपचार के 24 घंटे तक रोगी पशु का दूध नहीं निकालना चाहिए।

प्रसूति ज्वर से बचाव के उपाय

पशु के ब्यांत काल में संतुलित आहार दें। संतुलित आहार के लिए दाना, मिश्रण, हरा चारा व सूखा चारा उचित अनुपात में दें। ध्यान रहे कि दाना मिश्रण में 2 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता का खनिज लवण व 1 प्रतिशत साधारण नमक अवश्य मिला हो।

यदि दाना मिश्रण में खनिज लवण व साधारण नमक नहीं मिलाया गया है तो पशु को 50 ग्राम खनिज लवण व 25 ग्राम साधारण नमक प्रतिदिन अवश्य दें। परन्तु ब्याने से 1 महीने पहले खनिज मिश्रण की मात्रा 50 ग्राम प्रतिदिन से घटा कर 30 ग्राम प्रतिदिन कर दें। ऐसा करने से ब्याने के बाद कैल्शियम की बढ़ी हुई आवश्यकता को पूरा करने के लिए हड्डियों से कैल्शियम अवशोषित करने की प्रक्रिया ब्याने के बाद पशु के रक्त में कैल्शियम का स्तर सामान्य बना रहता है जिससे पशु इस रोग से बच जाता है।

ब्याने के समय के आस-पास पशु पर 3-4 दिन तक नजर रखें। रोग के लक्षण दिखाई देते ही तुरंत उपचार करवाएं।

अधिक दूध देनी वाली गायों व भैंसों अथवा जिन पशुओं में यह रोग पिछली ब्यांत के समय हुआ हो उनकी खीस का दोहन पूर्णतया न करें। लगभग एक चौथाई खीस थनों में छोड़ दें। ऐसा करने से पशु के रक्त में कैल्शियम के स्तर में अधिक गिरावट नहीं आती जिससे पशु रोग से बच जाता है।

ऐसा करते समय एक सावधानी अवश्य बरतनी होगी। जिन पशुओं का दुग्ध दोहन पूर्णतया नहीं होता उनमें थनैला रोग के संक्रमण की सम्भावना बढ़ जाती है। अतः ऐसी स्थिति में पशु के दुग्ध दोहन के समय स्वच्छता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। खीस या दूध निकालने से पहले पशु के थनों को अच्छी प्रकार विसंक्रमित घोल से साफ करके दूध निकालना चाहिए तथा दूध दोहने वाले व्यक्ति के हाथ तथा दूध दोहने के बर्तन भी अच्छी प्रकार साफ होने चाहिए। दूध दोहने का स्थान साफ, सूखा व विसंक्रमित किया हुआ होना चाहिए।

अधिक दूध देने वाले पशुओं को अथवा जिन पशुओं को यह रोग पहले हो चुका हो, उन्हें इस रोग से बचाव के लिए ब्याने के 7-8 दिन पहले विटामिन-डी³ 10 मिलियन यूनिट आईयू का एक टीका लगा देने से निश्चित तौर पर इस रोग से बचाव हो जाता है।

अतः इन सभी बिंदुओं पर ध्यान देकर किसान भाई अपने पशुओं को प्रसूति ज्वर से बचा सकते हैं तथा अपने पशुओं से अधिक उत्पादन लेकर अपने *डेयरी फार्मिंग* के व्यवसाय को अधिक लाभप्रद बना सकते हैं।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

pkSjklh ?kkVksa dh uxjh % cukjl

jkts'k lgk;

Hkkjrh; d`f"k vuqla/kku ifj"kn] ubZ fnYyh

कार्तिक अमावस्या के ठीक एक पखवाड़े बाद, कार्तिक पूर्णिमा के पावन दिन जब एक आम हिंदू, माह पर्यन्त चलने वाले कार्तिक स्नान से निवृत्त होता है, तो कहते हैं कि अपने भक्तों की कठिन तपस्या से प्रसन्न होकर इस अवसर पर समस्त देवता भी स्वर्ग से बनारस की इस पवित्र नगरी में उतर आते हैं- अपने भक्तों के साथ देव-दीपावली का पर्व मनाने के लिए। इस अनूठे अनुष्ठान को देखना और इसमें शरीक होना अपने आप में एक अवर्णननीय अनुभव है।

श्रीशिव-शंकर की नगरी बनारस, प्राचीन काशी यानि आज की वाराणसी, श्रीराम की अयोध्या और श्रीकृष्ण की मथुरा-वृन्दावन के समान ही उत्तर प्रदेश की महत्वपूर्ण तीर्थ स्थलियों में से एक है। स्कंद-पुराण में उल्लिखित सप्तपुरियों में से एक पुरी बनारस भी है और यदि पुरातत्वेत्ताओं की मानें तो यह सबसे प्राचीनतम जीवित नगरी है जो प्रागैतिहासिक समय से लगातार आबाद रही है। स्कन्द-पुराण में उल्लेख मिलता है जब समस्त पृथ्वी प्रलय के बाद जलमग्न हो गयी थी तब भगवान् शिवशंकर ने इस स्थान को चुना था जहां से एक नई सृष्टि का सृजन हुआ। अनादि काल से चली आ रही सभ्यता का ही प्रमाण है कि आज भी बनारस भारत की आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक राजधानी के नाम से जानी जाती है। यह नगरी तो 'रांड, सांढ़, सीढ़ी, सन्यासी' के लिए विश्वविख्यात है किंतु जो बात इस नगरी को अन्य तीर्थस्थलों से जुदा करती है वह है यहां के चौरासी घाट जिनकी सीढ़ियों पर आप समस्त भारत की झांकी देख सकते हैं- आर्य, द्रविड़, यवन, शक, हूण, मुस्लिम एवं ईसाई सभी संस्कृतियां यहां समान रूप से मौजूद हैं। इन चौरासी घाटों पर न केवल भारत के इतिहास के दर्शन होते हैं वरन भारत-भूमि की सभ्यता के भी दर्शन होते हैं जो निहित है इसकी राजनीति, अर्थनीति, सामाजिक आचार-व्यवहार, रीति-नीति, जीवन-यात्रा प्रणाली शासन व्यवस्था आदि में। यहाँ दर्शन होते हैं भारत की संस्कृति के, जिसे गंगा-जमुनी तहजीब का नाम दिया गया है। साहित्य के जो संस्कृत, हिंदी, उर्दू एवं अन्य भारतीय भाषाओं में समान रूप से पल्लवित हैं। अध्यात्म के जिसे भक्त और सूफी संतों ने एक नया आयाम दिया। संक्षेप में कहें तो भारत देश का एक विहंगम नमूना बनारस के इन घाटों पर देखा जा सकता है। बनारस के ये घाट एक सूक्ष्म भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं।

कार्तिक पूर्णिमा की रात्रि देव-दीपावली के अवसर पर बनारस के इन चौरासी घाटों का श्रृंगार देखते ही बनता है। दक्षिण पश्चिम में जहाँ अस्सी नदी गंगा में आ कर मिलती है, से उत्तरवाहिनी चल कर सात-आठ किलोमीटर के अर्ध चंद्राकार में उत्तर-पूर्व में वरूणा नदी और गंगा के संगम तक इन चौरासी घाटों के विस्तार में आदिकाल से लेकर अब तक के भारत के दर्शन होते हैं, जो एक अद्वितीय अनुभव है। लगता है मानो समस्त बनारस नगरी साक्षात् भगवान् शिव-शंकर के शीश-चंद्रिका में समाया है। देव-दीपावली की रात्रि यह संपूर्ण क्षेत्र असंख्य दीपों से प्रज्वलित हो उठता है जो एक विहंगम दृश्य उत्पन्न करता है। इस दिन सायंकाल की शोभा इतना मनोहर होती है मानो यक्ष, गंधर्व, किन्नर, ओषधि, पिशाच, मंत्र और मणि सभी उत्सव का नृत्य करते हैं। इस दीपोत्सव को देखने देश से अधिक विदेशियों की भरमार रहती है जो सात समंदर पार मात्र इस अनूठे अनुष्ठान का आनंद उठाने चले आते हैं। किन्तु देव-दीपावली से पहले कार्तिक पूर्णिमा की सुबह बनारस के इन चौरासी घाटों पर स्नान के लिए उमड़े जन-सैलाब को देखना भी अपने आप में एक रोमांचक अनुभव है। पुनः इस अनुष्ठान में आजकल विदेशियों की भागेदारी भी समान रूप से देखने को मिलती है जो किसी भी सच्चे हिंदुस्तानी को अपनी सभ्यता और संस्कृति और इनसे पनपी परम्पराओं पर गर्व करने का मकसद प्रदान करता है। कदाचित विदेशों में ऐसे उत्सव और इतने सारे उत्सवों के अवसर नहीं हैं जिससे आकृष्ट हो वे यहाँ चले आते हैं। इन दिनों न केवल हवाई जहाजों में वरन ट्रेनों में भी देशी से ज्यादा विदेशी नागरिक बनारस जाते मिलेंगे।

बनारस के ये चौरासी घाट अपने आप में विलक्षण हैं। हर घाट का एक विस्तृत इतिहास रहा है। स्कंध-पुराण के काशी-खंड में जहां केवल नौ घाटों का वर्णन है, वहीं उन्नीसवीं शताब्दी में भारत आए ब्रिटिश लेखक और यात्री जेम्स प्रिंसेप ने एक दर्जन घाटों का वर्णन किया है। बाद के वर्षों में इन्हीं घाटों को बाँट कर नए घाटों का निर्माण हुआ। आज की तारीख में इन चौरासी घाटों का इतिहास देखें तो यहाँ हर प्रांत के राजाओं का योगदान परिलक्षित होता है। इनमें इंदौर के गहड़वाल भी हैं जिन्होंने वाराणसी को अपनी राजधानी बनाया था तो मराठा वीर पेशवा

बाजीराव, गायकवाड़, होल्कर, सिंधिया एवं भोंसले, दक्षिण के राजा विजयनगरम, बंगाल की रानी रासमणि, महारानी पोटिया और दिग्पतिया महाराज, बिहार के दरभंगा महाराज और महारानी सुरसंड, राजस्थान के राजा मान सिंह, सवाई राजा जयसिंह, उदयपुर के राणा जगत सिंह और बूंदी नरेश राजा सुरजन सिंह और नेपाल के राजा राणा शमशेर बहादुर- सभी शामिल हैं। इनके अलावा, कितने ही सेठों और सिपहसालारों ने भी समय-समय पर इन घाटों का पुनरूद्धार करवाया और इतिहास में अमर हुए। इनमें से कितनों ने ही इन घाटों पर अपने महल बनवाए जो आज भी मौजूद हैं। इनमें से कई तो आज आलीशान होटलों में परिवर्तित हो गए हैं। इन घाटों पर मुगल-सम्राट अकबर निर्मित श्रीविष्णु और श्रीशंकर के मंदिर हैं तो औरंगजेब द्वारा ऐतिहासिक विश्वनाथ मंदिर एवं बिंदु-माधव मंदिर को ध्वंस कर उस पर निर्मित ज्ञानवापी मस्जिद और आलमगीर मस्जिद भी हैं जो यह याद दिलाता है कि भारत में उसी शासक को लोगों ने सराहा जिसने धार्मिक सहिष्णुता का उदाहरण पेश किया। इसके अलावा इन घाटों पर राजाओं ने मठ, अखाड़े, संस्कृत विद्यापीठ, वृद्धाश्रम, मोक्ष भवन और धर्मशालाओं आदि का भी निर्माण करवाया। इन घाटों का जो वर्तमान स्वरूप है वह अट्ठारवीं शताब्दी के अंत में संपूर्ण रूप ले पाया।

इन घाटों को देखने-समझने का सबसे माकूल तरीका है कि आप अस्सी घाट पर एक नाव (यांत्रिक अथवा मानव संचालित) भाड़े पर लें। गंगा की धारा के साथ खेते हुए इन घाटों के दर्शन एक-एक कर करें जो आदि-केदार घाट पर संपन्न होगा। वापसी में पैदल आना श्रेयस्कर है क्योंकि तब आप इन घाटों पर अवस्थित मंदिर, अखाड़े, मठ, व्यायामशाला आदि की जानकारी प्राप्त कर पायेंगें और समस्त भारत की गरिमा जिसे देश की आत्मा कहना अधिक माकूल होगा। देख पायेंगें गंगा के विस्तृत फैलाव पर तैरती नावें, लहरों पर डोलते-टिमटिमाते दीये, आकाशदीप, और आतिशबाजी के नजारे घाटों पर एक मनोरम दृश्य उत्पन्न करते हैं। घाटों की सीढ़ियों पर व्याप्त मस्ती, अक्खड़पन, फक्कड़पन और औघड़ स्वरूप निश्चय ही इसे एक अलग रंग प्रदान करते हैं।

सूर्योदय के साथ ही अस्सी घाट पर सुबह-ए-बनारस कार्यक्रम प्रारम्भ होता है। शाम-ए-अवध की तर्ज पर इस कार्यक्रम की नींव तीन साल पहले रखी गयी जिसके तहत कार्यक्रम के प्रारम्भ में गंगा-आरती से माँ-गंगे का अभिवादन किया जाता है। इसके बाद प्रातःकालीन राग में शास्त्रीय संगीत के कार्यक्रम होते हैं। यों भी बनारस का शास्त्रीय संगीत से पुराना रिश्ता रहा है। आधुनिक तबला का विकास इन घाटों पर ही पंडित राम सहाय जी ने अट्ठारवीं शताब्दी में किया था जो बनारस घराने की संगीत को अनमोल देन है। आज की तारीख में शहनाई वादक बिस्मिल्लाह खान से लेकर सितार वादक पंडित रविशंकर और कितने ही अन्य मशहूर कलाकारों का बनारस से वास्ता रहा है जिन सभी ने ही इन घाटों को अपनी संगीत और कला से कभी गुलजार किया था- पंडित ओंकारनाथ ठाकुर, पंडित विकास महाराज, पंडित समता प्रसाद, आनंद कृष्ण, गोपी कृष्ण, किशन महाराज, लालमणि मिश्रा, गोपाल शंकर मिश्रा, सिद्धेश्वरी देवी, सितारा देवी से लेकर गिरजा देवी तक, सभी बनारस से जुड़े थे और कभी न कभी इन घाटों को अपने संगीत और हुनर से आलोकित किया है। आज दिल्ली की कलाकार श्रुति शक्ति का कार्यक्रम था जिनके गाये अहीर-भैरवी ने श्रोताओं को मंत्र-मुग्ध कर दिया। दूसरी ओर यज्ञशाला में हवन आरती आदि संपन्न हो रहे थे। अंत में योग का कार्यक्रम था जिसका लाभ वहां मौजूद लोगों ने उठाया।

सुबह-ए-बनारस कार्यक्रम के समाप्त होते ही मैं एक नाव वाले से बात कर एक नाव भाड़े पर ले घाटों के दर्शन पर निकल पड़ा। आज की तारीख में अस्सी-घाट पांच घाटों में विभक्त हो गया है- गंगामहल-घाट, रीवा-घाट, तुलसी-घाट और भेदैनी घाट। तुलसी-घाट पर संत तुलसीदास द्वारा निर्मित हनुमान मंदिर है जहाँ 'रामचरितमानस की मूल प्रति रखी थी जो 2011 में चोरी चली गयी। यहाँ आप संत तुलसीदास के चरण पादुका के दर्शन भी कर सकते हैं। इससे आगे जानकी-घाट, माँ आनंदमयी-घाट, जैन-घाट और राजा चौतसिंह घाट आदि हैं। स्वाभिमानी राजा चौत सिंह, जिसने 1776 में लार्ड वारेन हास्टिंग्स के आदेश को मानने से इंकार कर निर्वासित होना स्वीकार किया और अंततः ग्वालियर में 1810 में अनाम मौत को गले लगाना स्वीकार किया। उस राजा चौत सिंह के महल और सामने घाट की सीढ़ियों पर अब धोबियों का राज है जो इनका उपयोग कपड़ों को धोने और सुखाने में करते हैं। यह एक गलत संदेशा दे जाता है- हममें अपने विरासत को संरक्षित रखने का शऊर नहीं है। इससे आगे निषादराज घाट है जिसे इन नाविकों का घाट माना जाता है। इससे आगे निरंजनी एवं महानिर्वाणी नागा साधुओं का निरंजनी-घाट एवं महानिर्वाणी-घाट है जिनके अखाड़े विदेशियों के लिए कौतुक के विषय हैं। प्राचीन हनुमान-घाट पर जूना अखाड़ा के बारे में किंवदंती है कि इस घाट का निर्माण नन्ददास नामक एक जुआरी ने एक दिन में जीते जुए की आमदनी से करवाया था। इससे आगे ऐतिहासिक राजा हरिश्चंद्र घाट है जहाँ राजा हरिश्चंद्र सत्य की रक्षा के लिए कालू डोम के हाथों बिके थे और यहाँ शमशान पर चौकीदारी की थी। आज भी इस घाट पर कालू डोम के आवास को देखा जा सकता है। इसी घाट पर गूदड़दास का अखाड़ा भी है।

ऐतिहासिकता और प्रसिद्धि में राजा हरिश्चंद्र घाट के समकक्ष ही हैं दशाश्वमेध एवं मणिकर्णिका घाट। दशाश्वमेध घाट पर ही अवस्थित है सुप्रसिद्ध विश्वनाथ मंदिर जिसके पुण्य की कथा पुराणों में बार-बार कही गयी है। इस घाट पर बनारस महानगरी की शालीनता और दीनता दोनों के ही दर्शन होते हैं। हजारों साल से लोग दूर-दूर से इस घाट पर गंगा के दर्शन को आते रहे हैं और साथ ही दर्शन करते हैं संहारकर्ता भगवान् शिव की। पद्मावती के भारशिव नागा राजाओं ने बार-बार यवनों को युद्ध में पराजित कर इस घाट पर अश्वमेध यज्ञ किये थे। उनके किए अश्वमेध यज्ञों के कारण ही इस घाट का नाम दशाश्वमेध घाट पड़ा।

बहरहाल मैं और आगे बढ़ता हूँ और पहुँचता हूँ महाशमशान मणिकर्णिका घाट पर जो आज भी देवी पार्वती के श्राप झेलने को अभिशप्त है। कहते हैं इस घाट पर पार्वती की मणि-जड़ित कान के झुमके खो गए थे जो उन्हें शिव ने दिए थे। बहुत तलाशने के बाद भी जब मणिकर्णिका नहीं मिली तो घाट की इस भूमि को देवी पार्वती ने श्राप दे दिया कि यह सदा दहकती रहेगी। आज भी चौबीसो घंटे यह भूमि शवों के प्रज्वलन के दहक को झेलने को अभिशप्त है- कोई पल ऐसा नहीं बीतता जब इस घाट पर शव न जल रहे हों। एक साथ सात से आठ शवों की अंतिमक्रिया तो इस घाट पर आम बात है। इस घाट पर ही मोक्ष भवन भी है जहाँ वृद्ध जन मानो अपनी अंतिम गति का इंतजार कर रहे होते हैं। जीवन के बाद मृत्यु शाश्वत सत्य है किन्तु मृत्यु के प्रति इतनी व्यवहारिकता कदाचित हिंदू धर्म में ही देखने को मिलती है। इस घाट पर *'फ्यूनरल पार्लर'* भी है जो अंतिम-संस्कार के सारे सामान उपलब्ध कराता है। यो तो यह आम बात लगती है परंतु इसे *पार्लर* का नाम देना विचित्र लगा। यद्यपि मृत्यु के बाद व्यक्ति मात्र शरीर या *'बॉडी'* रह जाता है और हर *'बॉडी'* की एक ही गति होती है पर भारतीय समाज में व्याप्त सामाजिक असमानता के दर्शन इन घाटों पर भी हो जाते हैं- जहां अमीरों के शवों को उनके श्रृंगार और उस पर लपेटे महंगे कपड़े से सहज पहचाना जा सकता है वहीं एक गरीब का शव मात्र एक सफेद कफन में लिपट कर इस घाट पर अंतिम-क्रिया को आता है। इसी प्रकार अमीर शव को उनपर लादी गयी लकड़ियों की ऊँचाई से भी पहचाना जा सकता है। किन्तु घाट पर मौजूद प्रहरी इस ताम-झाम से सिर्फ यही निष्कर्ष निकालते हैं कि किस जजमान से कितनी कमाई की जा सकती है। उनके लिए हर शव सिर्फ शव ही है। वे उनके साथ समान बर्ताव करते हैं और माँ-गंगे भी अपने सभी बच्चों को, चाहे वो अमीर थे अथवा गरीब, एक माँ की ही भांति सभी को समान रूप से अपने अंक में समेट लेती है। ऊँच-नीच के सारे प्रपंच जो मनुष्य ने बना रखे हैं, उसे वह यहीं धरती पर छोड़ जाता है।

आगे ब्रह्म-घाट और पंच-गंगा घाट हैं। मध्यकाल में बौद्ध और इस्लाम दोनों के ही द्वारा जब हिंदू-धर्म पर चौतरफा आक्रमण हुए तब स्वामी शंकराचार्य ने बनारस के ब्रह्म-घाट पर ही हिंदू-धर्म से कर्म-काण्ड और अन्धविश्वास को दूर कर इसे पुनर्स्थापित किया था और अद्वैतवाद के दर्शन से सम्पूर्ण विश्व को अभिभूत किया था-"ब्रह्म सत्यम जगत मिथ्या जीवो ब्रह्मैव न अपराहष। पंच-गंगा पर गंगा, यमुना, सरस्वती, किरणा, एवं धूतपापा नदियों का अदृश्य संगम होता है। इस घाट पर अवस्थित 'माधव राव के धरहरा' से सारे शहर का अवलोकन किया जा सकता है। इसी पंच-गंगा घाट पर स्वामी रामानंद का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने हिंदू-मुस्लिम और अन्य सम्प्रदायों में परस्पर मिल-जुल कर रहने की ज्योति जलाई। जातिगत हिन्दू सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देते हुए उन्होंने घोषणा की थी-"जात-पात पूछें न कोई।'' स्वामी रामानंद के सुप्रसिद्ध बारह शिष्य यथा कबीर (जुलाहा), रविदास (मोची), पीपा दस (क्षत्रिय), अनंत दस (ब्राह्मण), धन्ना (जाट), साइन (नाई), नरहरि, गहरी, भावनन्द, सूखा, पद्मावती एवं सुरसुरी- सभी भिन्न-भिन्न जाति से आते थे किन्तु इन सभी ने आपसी भाईचारे का संदेश दिया। इन संतों द्वारा स्थापित मठ आज भी इन घाटों पर सांस्कृतिक समन्वय के इस कार्य में लगे हैं। कहते हैं कि पंच गंगा घाट की 52 सीढ़ियां पारकर स्वयं गंगा ने 'गंगा लाहिरी' के प्रसिद्ध पंडितराज जगन्नाथ की परिशुद्धि की थी। इसी प्रकार कहते हैं कि राम घाट पर भगवान श्री राम स्नान कर रावण की हत्या से लगे ब्रह्म हत्या के पाप से मुक्त हुए थे। जब गंगा माँ भगवान श्री राम को पाप से मुक्त करने में सक्षम है तो आम प्राणी के लिए यहाँ गंगा में स्नान कर पाप से मुक्त हो मोक्ष की प्राप्त करने की लालसा कोई अतिश्योक्ति नहीं मानी जा सकती। इनके अलावा स्वामी श्यामल दास स्थापित महात्यागी मठ (हनुमानगढ़ी घाट), शैव-वैष्णव मठ (सिंधिया घाट), अन्नपूर्णा मठ (राजा घाट), कुमारस्वामी मठ (केदार घाट), संत वल्लभाचार्य मठ (प्राचीन हनुमानगढ़ी घाट), ब्रह्मेन्द्र मठ (शिवाला घाट), दंडी स्वामी मठ (दंडी घाट) एवं माता आनंदमयी आश्रम (आनंदमयी घाट) भी इन घाटों पर ही अवस्थित हैं जो सदियों से सहिष्णुता, उदारता, सामासिक संस्कृति, अनेकांतवाद, स्याद्वाद और अहिंसा की साधना में लगे हैं और देश में विद्यमान विभिन्न जातियों और सम्प्रदायों को एकता की छत्रछाया प्रदान करने में सफल रहे हैं। इनके ही प्रयास का फल है कि जहाँ बनारस के इन घाटों पर देव-दीपावली मनाई जाती है, वहीं मुहर्रम के ताजिये (राज घाट) भी सजते हैं, जैन-तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ का प्रदक्षिणा पर्व (जैन घाट एवं वच्छराज घाट) भी मनाया जाता है, मदर टेरेसा की संस्था द्वारा दरिद्र सेवा (महानिर्वाणी घाट) भी होती है और नानकपंथियों के गुरू-पर्व (तुलसी घाट) की झांकी भी निकलती है। धार्मिक सौहार्द, सहिष्णुता,

अस्सी घाट

मणिकर्णिका घाट

दशाश्वमेध घाट

राजा हरिश्चंद्र घाट

सत्य और अहिंसा के जिस गंगा-जमुनी संस्कृति के लिए भारत देश जाना जाता है, उसकी स्पष्ट छाप इन घाटों पर आयोजित होने वाले उत्सवों में देखने को मिलती है। शताब्दियों से चली आ रही परम्पराओं का इन घाटों पर निर्वाहन होता चला आ रहा है और आज की तारीख में देश की इस गंगा-जमुनी संस्कृति की जड़ें इतनी गहरी और मजबूत हैं कि हाल के वर्षों में चंद असामाजिक तत्वों द्वारा धर्म की आड़ में विभिन्न धर्मों और मजहबों के बीच फूट पैदा करने के तमाम प्रयास असफल सिद्ध हुए हैं। मध्य-काल की तरह आज भी बनारस के ये घाट शासकों अथवा सत्तालोलुप तुच्छ नेताओं द्वारा समाज में धर्म के नाम पर ध्रुवीकरण के कुत्सित प्रयासों के साक्षी रहे हैं। मध्य-काल की तरह आज भी इन्हें किसी ने कोई चुनौती दी है तो ये भक्त और सूफी संत ही हैं। तेईस हजार मंदिर वाले शिव-शंकर की इस नगरी की घाटों पर मुझे अहसास हुआ कि देश की सामासिक समन्वयता का विस्तार आकाश से भी अधिक व्यापक, सागर से भी अधिक गहरा और धरा से भी अधिक समग्र और शक्तिशाली है जो देश की विभिन्नताओं को ठीक उसी प्रकार पिरो लेती है और पिरोकर एक सुन्दर समूह बना देती है जैसे रेशमी धागा भिन्न-भिन्न प्रकार के और विभिन्न रंग की सुन्दर मणियों अथवा फूलों को पिरोकर एक सुन्दर हार तैयार कर देता है, जिसकी प्रत्येक मणि या फूल दूसरों से न तो अलग है और न हो सकता है और केवल अपनी सुंदरता से समस्त विश्व को मोहता नहीं, बल्कि दूसरों की सुंदरता से वह स्वयं भी सुशोभित होता है और अपनी सुंदरता से दूसरों को भी सुशोभित करता है। एक बार पुनः विश्वनाथ मंदिर में बाबा भोले को नमन कर मैं वापसी यात्रा पर लौट चलता हूँ।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

lekt esa uSfrd f'k{kk dh vfuok;Zrk

vydk fnonh[1] ,oa vuhrk Ikoukuh[2]

[1]i- vkj-d-Mh-ih-th- dkWyst] xkj[kiqj

[2]Hkkd̀vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqlèkku laLFkku] y[kuÅ

नैतिकता मनुष्य का वह गुण है जो उसे देवत्व के समीप ले जाता है। यदि मनुष्य में नैतिकता न हो तो पशुता और मनुष्यता में कोई विशेष अंतर नहीं रह जाता है। नैतिकता ही सम्पूर्ण मानवता का श्रृंगार है। वेदों, उपनिषदों एवं अन्य सभी धर्मग्रंथों में नैतिक अथवा सदाचार शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। समस्त ऋषि मुनियों व शास्त्रियों की मान्यता है कि मनुष्य का चरित्र तभी तक है जब तक उसमें नैतिकता व चारितिक दृढ़ता है। चरित्रहीन मनुष्य पशु के समान है और एक पशु चाहे वह कितना ही सुंदर हो, उसकी आवाज कितनी ही मधुर क्यों न हो, वह एक मानव की ऊँचाइयों को कभी नहीं छू सकता। हमारी भारतीय संस्कृति में सदैव ही नैतिक मूल्यों की अवधारणा पर विशेष बल दिया गया है। मनुष्य के जीवन में अच्छे चरित्र का विशेष महत्व है। दूसरे शब्दों में अच्छे चरित्र से ही मनुष्य की अस्मिता कायम है। समाज में नैतिक शिक्षा का अभाव अनेक प्रकार के दुष्परिणाम को देखने के लिए बाध्य करता है। देश में फैले भ्रष्टाचार, लूटमार, आगजनी, बलात्कार एवं अन्य अपराध नैतिकता के अभाव की ही परिणति है। हमारी वर्तमान पीढ़ी जब इतनी अनैतिक व चरित्रहीन है तो आने वाली पीढ़ियों का क्या होगा, इसकी कल्पना हम सहज ही कर सकते हैं। सम्पूर्ण विश्व में औद्योगिक प्रगति की लहर चल रही है। विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में नित्य नई खोजें व प्रयोग चल रहे हैं परंतु मानव जाति व देश के लिए यह एक दुर्भाग्यपूर्ण बात है कि हमारे नेताओं देश के व नीति निर्माताओं ने देश में नैतिक शिक्षा की अनिवार्यता नहीं समझी है। वह शिक्षा जो आत्मविश्वास एवं मनुष्य जीवन में संतुलन बनाए रख सकती है। उसे ही पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं किया गया। उसे निरंतर उपहास की दृष्टि से देखा जाता रहा है। अब प्रश्न यह उठता है कि नैतिक, शिक्षा का स्वरूप कैसा हो? क्योंकि धर्मग्रंथों के उपदेश या फिर चरित्र निर्माण हेतु सजीले भाषण आज के वातावरण में प्रभावी नहीं हो सकते। इन परिस्थितियों में आवश्यक है कि नैतिक शिक्षा का स्वरूप प्रायोगिक एवं सत्य हो। इसके लिए आवश्यक है कि पाठ्यक्रमों में नैतिक शिक्षा को समाहित किया जाय तथा विज्ञान व अन्य विषयों की भांति ही नैतिक शिक्षा की भी विधिवत परीक्षा होनी चाहिए तभी छात्र एवं शिक्षक दोनों मनोयोग से इसे स्वीकृति देंगे। छात्र को नैतिक शिक्षा में उत्तीर्ण होने की अनिवार्यता होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया गया तो इसे प्रभावी रूप दे पाना संभव नहीं होगा।

नैतिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में उन महापुरूषों व देशभक्तों की जीवन गाथाएं होनी चाहिए जिन्होंने देश अथवा मानवता के लिए उल्लेखनीय कार्य किया है तथा जिनके जीवनपथ के पदचिन्हों का अनुसरण कर मनुष्य नैतिकता की राह पर चल सकता है। विशिष्ट व्यक्ति के जीवन चरित्र भी पाठ्यक्रम में शामिल किए जाने चाहिए जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है अथवा अपने परिश्रम के बल पर उच्च स्थान प्राप्त किया है। नैतिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में व्यायाम तथा योग साधना का भी उल्लेख आवश्यक है। अर्थात पाठ्यक्रम में वह सभी सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए जो मनुष्य के सम्पूर्ण चारित्रिक विकास के लिए आवश्यक है। देश अथवा समाज नैतिकता के पदचिन्हों का अनुसरण करके ही उन्नति की ओर अग्रसर हो सकता है। यदि हम प्रारम्भ से ही अपने बच्चों को नैतिक मूल्यों की शिक्षा प्रदान करेंगे तभी भविष्य में हम अच्छे, चरित्रवान, कर्तव्यनिष्ठ एवं ईमानदार शासक, अधिकारी, अध्यापक व कर्मचारी की कल्पना कर सकते हैं। भावी पीढ़ी को नैतिक रूप से सुदृढ़ बनाना हम सभी का उत्तरदायित्व है। यदि आज कोई भी समाज या राष्ट्र नैतिक मूल्यों की अनिवार्यता की अनदेखी करता है तो वह स्वयं को पतन की ओर अग्रसर कर रहा है। यदि हम राष्ट्र उत्थान के महत्व को स्वीकारते हैं तो नैतिक शिक्षा की अनिवार्यता को भी समझना होगा, तभी हम राष्ट्र नायकों व निर्माताओं के स्वप्न को साकार कर सकेंगे। बच्चों को नैतिक रूप से परिपूर्ण करने के लिए यह भी आवश्यक है कि अभिभावकों व शिक्षकों में भी नैतिकता का समावेश हो। यदि शिक्षक ही नैतिक मूल्यों से रहित हो तो उनके छात्र भी खुलेआम उनका अनुसरण करेंगे। तब उन्हें रोकने व समझाने का नैतिक बल कहाँ से आयेगा, यह विचारणीय तथ्य है। लेकिन यदि गुरूजनों एवं अभिभावकों का नैतिक बल उच्च होगा तो छात्र स्वयं ही उनका अनुसरण करने का प्रयास करेंगे और समाज में अपना अमूल्य योगदान दे सकेंगे तथा अपने अंदर सभी नैतिक गुणों का समावेश कर नए प्रगतिशील समाज की रचना कर पृथ्वी पर ही स्वर्ग सा आभास करा सकेंगे।

iqLrdky; ,o lpuk foKku d {k= e jkstxkj

vk'kh"k flag ;kno] 'kehyk j,; ,o cã çdk'k
Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku laLFkku] y[kuÅ

शिक्षण संस्थानों की संख्या में वृद्धि से पुस्तकालयों की आवश्यकता तथा महत्ता में भी भारी वृद्धि हुई है। पुस्तकालयों द्वारा प्रदत्त सेवाओं को अब वर्तमान में उनकी सूचना सेवाओं की भूमिका के रूप में परंपरागत प्राचीन पुस्तकालय कार्यों से मिश्रित करते हुए "पुस्तकालय और सूचना सेवाएँ" के नाम से पुकारा जाता है। कम्प्यूटर और सूचना प्रौद्योगिकी ने भी सूचना सेवाएँ प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना शुरू कर दिया है। इस विषय क्षेत्र से दो अन्य शब्द "प्रलेखन" तथा "सूचना भंडारण और सुधार" भी जुड़ गए हैं। पुस्तकालय प्रबंधन के लिए अच्छी शैक्षिक और व्यावसायिक योग्यताएँ रखने वाले व्यक्तियों की आवश्यकता होती है।

अगर परंपरागत पुस्तकालय की बात करें तो भारी-भरकम अलमारियों तथा रैक में सजी किताबों के बीच बैठे किसी पुस्तकालयाध्यक्ष की तस्वीर मन में उभरती है जिसके पास किताबों का ब्यौरा रजिस्टर में दर्ज होता था और संदर्भ के लिए किताबें ढूंढ़ने में खासी मशक्कत करनी पड़ती थी, लेकिन इंटरनेट के युग में आज वही पुस्तकालय सूचना केंद्र के रूप में विस्तार पा चुका है। अर्थात आज पुस्तकालय का स्वरूप पूरी तरह बदल गया है। बदलते जमाने के साथ उसने भी *हाइटेक* बाना पहन लिया है। पहले पुस्तकालय का स्वरूप केवल पुस्तकों के भंडार कक्ष के रूप में होता था और पुस्तकालयाध्यक्ष का काम भी काफी सीमित होता था लेकिन अब सूचना प्रौद्योगिकी के इस दौर में पुस्तकालय का स्वरूप और पुस्तकालयाध्यक्ष का दायित्व और कार्यशैली बिल्कुल बदल गई है। उसके लिए न केवल कम्प्यूटर बल्कि *इंटरनेट सर्चिंग* और *ऑनलाइन डाटाबेस* का ज्ञान भी आवश्यक हो गया है।

अब वो जमाने लद गए, जब पुस्तकालयाध्यक्ष के पेशे को उबाऊ पेशे के तौर पर लिया जाता था। इंटरनेट व सूचना क्रांति के आगमन ने इस पेशे को चुनौतीपूर्ण रोजगार बना दिया है। सूचनाओं के नए स्रोतों ने अब इस पेशे में रोजगार के ढेरों अवसर उपलब्ध करा दिए हैं। सूचना क्रांति के इस युग में कई चुनौतियों से दो-चार होने के कारण परिस्थितियाँ उसे उच्च तकनीक व यंत्रों से परिपूर्ण करती हैं। सम्मान और तरक्की के दृष्टिकोण से भी यह क्षेत्र पुस्तकालयाध्यक्ष को मजबूती प्रदान करता है। कुछ समय पहले तक पुस्तकालयाध्यक्ष जिस काम को परंपरागत तरीके से करते थे, अब वही काम सीडी, इंटरनेट और कम्प्यूटराइज्ड डाटाबेस के माध्यम से करते हैं।

वर्तमान में पुस्तकालयाध्यक्ष मुख्यतः किताबों का अभिरक्षक होता है। वह सूचना प्रदानकर्ता, सूचना प्रबन्धक, वैज्ञानिक अनुसंधानकर्ता की तरह बतौर पेशेवर पुस्तकालयाध्यक्ष काम करता है। पुस्तकालयाध्यक्ष पुस्तकालय को व्यवस्थित ढंग से रखकर सूचना तकनीक का बखूबी इस्तेमाल कर सटीक सूचनाएँ व ताजा आँकड़े उपलब्ध करवाता है। आज हर व्यक्ति चाहता है कि अब सूचनाएँ तुरंत, सुगम और सरल तरीके से प्राप्त हों। इंटरनेट, ऑनलाइन पोर्टल, डिजीटल पुस्तकालय आदि इसी बदलाव के उदाहरण हैं। पुस्तकालयाध्यक्ष के पेशे में कई तरह की दक्षताओं और कार्यकुशलता की आवश्यकता होती है। तकनीक की व्यावहारिक समझ रखने के अलावा जरूरी है कि एक पुस्तकालयाध्यक्ष के पास संगठनात्मक पद्धति के अनुसार कार्य करने की क्षमता और उत्कृष्ट संचार कौशल हो। जरूरी है कि वह अपने सहयोगियों के साथ बेहतर ढंग से कार्य करते हुए सही सूचनाएँ एकत्र कर सके।

गौरतलब है कि सूचना उद्योग विश्व में तेजी से उभरता हुआ उद्योग है। आज के दौर में सभी बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने अपने कर्मचारियों के ज्ञान व अनुभव में बढ़ोत्तरी के लिए अपने ज्ञान केन्द्र स्थापित कर रखे हैं। जहाँ तक वेतनमान का सवाल है तो एक पुस्तकालयाध्यक्ष को उसकी योग्यता तथा पुस्तकालय के आकार व प्रकार के आधार पर वेतन दिया जाता है। भारत में एक स्कूल में पुस्तकालयाध्यक्ष को शिक्षक के समकक्ष तथा कॉलेज में पुस्तकालयाध्यक्ष को लेक्चरर के समकक्ष वेतन दिया जाता है।

पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान मात्र एक अकादमिक विषय क्षेत्र नहीं है। यह एक व्यावसायिक पाठयक्रम है जिसमें व्यावहारिक, प्रेक्षण तथा प्रायोगिक अध्ययन शामिल हैं। तेजी से उभरते इस पेशे की माँग को देखते हुए कई संस्थानों ने अपने पुस्तकालय विज्ञान पाठयक्रम में आधुनिक बदलाव किए हैं। पहले की पारंपरिक तकनीकों की तुलना में आज के दौर में पुस्तकालय विज्ञान पाठयक्रम में आधुनिक तकनीक जैसे कि सूचना प्रबंधन व तकनीक, अनुसंधान तकनीक, कैटलॉग और विभिन्न सेवाओं का वर्गीकरण

आदि का समावेश हुआ है। पुस्तकालय विज्ञान में समय के साथ डाटाबेस प्रबंधन, सूचना अवसंरचना जैसे नए विषय जुड़ गए हैं। भारत में ज्यादातर विश्वविद्यालय पुस्तकालय और सूचना विज्ञान में स्नातक और परास्नातक कार्यक्रम करवा रहे हैं। पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में उपलब्ध प्रमुख पाठ्यक्रम निम्नलिखित हैं:

- पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में प्रमाणपत्र (सीएलआई एससी) तथा पुस्तकालय विज्ञान में प्रमाणपत्र (सीएलएससी) पाठ्यक्रम। इन पाठ्यक्रमों की अवधि 03 से 06 माह है तथा इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु शैक्षणिक योग्यता मैट्रिक या समकक्ष है।
- पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में डिप्लोमा (डीएलआईएससी) पाठ्यक्रम की अवधि एक वर्ष निर्धारित है तथा इन पाठ्यक्रमों हेतु शैक्षणिक योग्यता बारहवीं उत्तीर्ण है।
- पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में स्नातक डिग्री (बीएलआईएससी) पाठ्यक्रम की अवधि तीन वर्ष है। इन पाठ्यक्रमों हेतु शैक्षणिक योग्यता बारहवीं उत्तीर्ण है।
- पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान (एमएलआईएससी) पाठ्यक्रम में परास्नातक में प्रवेश हेतु बीएलआईएससी, होना आवश्यक है।

इन पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान में अन्य कई पाठ्यक्रम भी उपलब्ध हैं। पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के कुछ पाठ्यक्रम पत्राचार माध्यम से भी किए जा सकते हैं। विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में लेक्चररशिप के लिए पात्रता के निर्धारण हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) नेट का भी एक विषय पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान है। यदि कोई व्यक्ति इस व्यवसाय को एक शिक्षक के रूप में अपनाना चाहता है तो उसे पुस्तकालय तथा सूचना विज्ञान में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) नेट परीक्षा उत्तीर्ण करनी होगी। इस क्षेत्र में शिक्षण-रोजगार हेतु विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, बहुतकनीकी संस्थानों, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान जैसे व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों में अनेकों अवसर उपलब्ध हैं। अपनी शैक्षणिक और व्यावसायिक योग्यताओं के अनुरूप आप इस व्यवसाय को एक पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में अपना सकते हैं। पुस्तकालय से जुड़े व्यवसाय में पद निम्न प्रकार हो सकते हैं- पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रलेखन अधिकारी, सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, उप-पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना अधिकारी, ज्ञान अधिकारी, सूचना कार्यकारी, सूचना विश्लेषक आदि। देश में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन के कारण भी इस क्षेत्र में रोजगार की संभावनाओं में बढ़ोत्तरी हुई है। इस क्षेत्र के पेशेवरों के लिए व्यापार जगत में भी रोजगार के अच्छे अवसर उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त, सरकारी एवं निजी क्षेत्रों में भी अपार संभावनाएँ हैं। पुस्तकालय विज्ञान के अध्येता पुस्तकालयों के अतिरिक्त, पुस्तक प्रकाशक कार्यकर्ता, मुख्य सूचना अधिकारी, *कन्टेंट मैनेजर, डाटाबेस प्रशासक, इन्फार्मेशन ब्रोकर* और *वेबमास्टर* आदि पदों पर काम करते हुए अच्छी आय पा सकते हैं।

पुस्तकालय तथा सूचना विज्ञान में पाठ्यक्रम कराने वाले प्रमुख संस्थान इस प्रकार हैं-

- काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
- डॉ. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश
- जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर, मध्य प्रदेश
- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- पुणे विश्वविद्यालय, पुणे
- जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली
- बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश
- देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, मध्य प्रदेश
- विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
- मनिपाल विश्वविद्यालय, मानिपाल, कर्नाटक
- कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता
- रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश
- इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
- छत्रपति शाहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर
- राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना संसाधन संस्थान, नई दिल्ली
- माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता विश्वविद्यालय, भोपाल, मध्य प्रदेश
- सैम हिग्गिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
- उत्तर प्रदेश राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश
- शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वायत्त महाविद्यालय, दुर्ग, छत्तीसगढ़।

पुस्तकालय तथा सूचना विज्ञान के विभिन्न पाठ्यक्रमों की विस्तृत जानकारी हेतु निम्नलिखित वेबसाइटों को *लॉगइन* किया जा सकता है :

- www.infolibrarian.com
- www.lisgateway.com
- www.webindia123.com

आमोद-प्रमोद प्रभाग

ekrk&firk

vkj-, l- pkjfl ;k
Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku laLFkku] y[kuÅ

प्राचीन काल में हिन्दू धर्म की मान्यताओं के आधार पर भारत में माता-पिता का स्थान सर्वोच्च था। माता-पिता को जीवन में ईश्वर के तुल्य या यदि हम यह कहें कि ईश्वर से भी उच्च स्थान देने की परंपरा रही है। प्राचीन काल की धार्मिक पुस्तकों, ग्रन्थों में अनेकों ऐसे उदाहरण देखने में आए हैं। जिसमें पुत्र ने अपने माता-पति की इच्छा को सर्वोपरि मानते हुए अपने जीवन में उपलब्ध समस्त सत्ता तथा अन्य सुख-सुविधाओं का परित्याग करते हुए केवल माता-पिता को जो अविस्मरणीय सम्मान दिया वो आज भी इतिहास के दर्पण में प्रतिबिंबित है। ऐसे महापुरूषों में भगवान श्री राम, श्रवण कुमार एवं अन्य अनेक ऐसी महान विभूतियों का वर्णन शास्त्रों में तथा धार्मिक पुस्तकों में मिलता है जिन्होनें बिना किसी संकोच/पश्चाताप के, अपने माता-पिता की इच्छा को पूर्ण करने में अपने जीवन को लगाया एवं अपने को आदर्श पुत्र सिद्ध करने में सफल रहे।

लेकिन, समय बीतता गया। इतिहास के दर्पण में प्रतिबिंबित आदर्श पुत्रों की तस्वीरें और गाथा आज के युग में धुंधली पड़ती जा रही हैं। आज के समाज में पुत्र-पुत्रियां वो सारे आदर्शों को भूलते जा रहे हैं। माता-पिता का निरादर करना ही इन किशोरों, युवकों एवं युवतियों को पाश्चात्य संस्कृति के रस में डूबे आधुनिक समाज दिलाने का साधन बन गया है। इन किशोरों, युवकों एवं युवतियों को हर प्रातः माता-पिता के प्रणाम/चरण स्पर्श कर आर्शीवाद प्राप्त करना तो माता-पिता के लिए दिवा-स्वप्न की तरह है, उनसे ठीक तरह से बात करने में भी उन्हें लज्जा आती है। इन बुजुर्ग माता-पिता को अपने जीवन की आपा-धापी में, पाश्चात्य संस्कृति के रस में डूबे आधुनिक समाज के सामने समुचित सम्मान देने से कतराते हैं। ये बुजुर्ग माता-पिता अधिक उम्र हो जाने के कारण, अस्वस्थ होते जाते हैं, असहाय हो जाते हैं। जब इनकी सेवा का समय आता है तो इन किशोरों, युवकों एवं युवतियों को पाश्चात्य संस्कृति के रस में डूबे आधुनिक समाज में इन बुजुर्गों की सेवा करना तो दूर, उनके साथ रहने में असुविधा होने लगती है। कुछ तो ऐसे भी क्रूर ह्रदयी पुत्र-पुत्रियाँ हैं जो अपने अस्वस्थ एवं असहाय माता-पिता को बिना किसी सहारे के घर से बाहर निकाल कर इस बेदर्द दुनिया के सामने झोली फैलाने को मजबूर कर देते है।

ये स्वार्थी, ह्रदयविहीन एवं निष्ठुर पुत्र/पुत्रियां संवेदनहीनता की सारी सीमाओं को लांघते हुए सम्पत्ति, जायदाद, खेती, बाग-बगीचे के लालच में अपने माता-पिता की हत्या तक करने में कोई हिचक नहीं करते। बड़े दुर्भाग्य का विषय है कि ये युवक-युवतियाँ क्यों इतने स्वार्थी, ह्रदयविहीन एवं संवेदनहीन होते जा रहे हैं? माता अपने गर्भ में बच्चे को नौ महीने रखकर असहनीय कष्ट उठाकर जिन्हें जन्म देती हैं तथा माता-पिता मिलकर बच्चे का लालन-पालन कर बहुत त्याग एवं परिश्रम से उच्च शिक्षा दिलवाते हैं और ये निर्दयी बच्चे माता-पिता के इस त्याग एवं परिश्रम को ठोकर मारकर आधुनिक समाज की चकाचौंध में जल्द शामिल हो जाना चाहते हैं।

यद्यपि आज के समाज में ऐसी भी सामाजिक संस्थाएं हैं जिसमें ऐसे असहाय वृद्ध लोगों को आश्रय देने के लिए लगभग सभी शहरों में वृद्धाश्रम, जिसमें इनके रहने, खाने और रोगों के उपचार के लिए समुचित व्यवस्था हो, स्थापित कर रहे हैं तथा ऐसे भी प्रयास जारी हैं कि इन आश्रय केंद्रों में ऐसे असहाय वृद्ध लोगों को बिल्कुल घर जैसा माहौल का अनुभव हो।

परन्तु यह कहना भी सत्य से परे नहीं कि ऐसे कुपुत्र एवं कुपुत्रियां अपने माता-पिता के लिए तथा इस समाज के लिए अभिशाप बनते जा रहे हैं। दुर्भाग्य का विषय यह भी है कि इन सभी की संख्या भी निरंतर बढ़ती जा रही है। इनकी मानसिक सोच एवं विचारधारा इतनी दूषित, विकृत एवं असहयनीय होती जा रही है कि इनकी सोच एवं शिक्षा पर भी प्रश्नचिन्ह लगता जा रहा है कि आज के ये युवा कल वृद्ध होगे, समय व्यतीत हो जाने पर ये भी अस्वस्थ हो सकते है एवं लाचार, असहाय होना पड़ सकता है। ईश्वर इस युवा वर्ग को सद्बुद्धि दे, ऐसी मेरी ह्रदय से प्रार्थना है।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

egkuxj iokl

l/khj dekj ,o vk'kk ;kno
Hkkdvui&Hkkjrh; xUuk vul/kku lLFkku] y[kuÅ

महानगर उस बड़े शहर को कहते हैं जिसकी आबादी कम से कम दस लाख या इससे ऊपर होती है। दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, बैंगलोर, जयपुर, लखनऊ, हैदराबाद, पुणे आदि नगर 'महानगर' कहलाते हैं।

आज के समय में सभी लोग महानगर में ही रहना पसंद करते हैं। महानगरों की आबादी दिन पर दिन बढ़ रही है। आस-पास के गाँव या तो नगर की सीमा में आ जाते हैं, या वहाँ के रहने वाले बेरोजगार लोग रोजगार की तलाश में शहर में आकर बस जाते हैं। महानगर में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, सफाई, बिजली-पानी, यातायात, संचार एवं सुरक्षा आदि की समुचित व्यवस्था होती है। उस जिले के सभी अधिकारी एवं न्यायाधीश महानगर में ही निवास करते हैं। यहाँ की महापालिकाएँ सफाई, पानी, स्वास्थ्य, पार्कों आदि की व्यवस्था करती है, यहाँ सुन्दर एवं व्यवस्थित बाजार होते हैं। जहाँ उपभेक्ता अपनी जरूरत की चीजें उचित दाम देकर खरीद सकते हैं, यहाँ बड़े-बड़े बाजार होते हैं। जहाँ सभी चीजें आसानी से मिल जाती हैं। गाँव वाले भी शहर आकर अपनी आवश्यकता की चीजें खरीदते हैं। महानगरों में शिक्षा की भी उच्चतम व्यवस्था होती है। महानगर में अनेक महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय, स्कूल-कॉलेज होते हैं। जिसमें चिकित्सा एवं प्रौद्योगिकी की शिक्षा दी जाती है। चिकित्सा की दृष्टि से महानगरों में कई अस्पताल एवं निजी नर्सिंग होम होते हैं। जहाँ मध्यम एवं निम्न वर्ग के लिये अस्पताल में चिकित्सा सुविधा दी जाती है। उच्च वर्ग के लोग तो अपना इलाज निजी नसिंग होम में करवाते हैं। सफाई का प्रबंध नगर महापालिका की ओर से होता है। यातायात की अच्छी सुविधा महानगरों में देखने को मिलती है। महानगरों में कई रेलवे स्टेशन होते हैं जो दूर-दूर तक की गाड़ियों से जुड़े होते हैं। रात हो या दिन, किसी भी स्टेशन पर यात्री उतरकर ऑटो रिक्शा, टैक्सी या बस से अपने घर तक आसानी से पहुँच सकते हैं। सुरक्षा की दृष्टि से पुलिस का व्यापक प्रबन्ध होता है। रात में पूरे शहर में पुलिस की गश्त लगती रहती है जिससे कि चोरी या लूट की वारदात न हो। फिर घर-घर में टेलीफोन की सुविधा है। यहाँ फायर बिग्रेड स्टेशन होता है। कहीं पर भी आग की खबर आने पर फायर बिग्रेड की गाड़ियाँ तुरन्त आग बुझाने के लिये तैयार रहती हैं। महानगरों में आज के समय में बड़ी तेजी से प्रवास हो रहा है। लोग रोजगार की आस में गाँवों से पलायन कर रहे हैं। जिन लोगों को शहरों या महानगरों में नौकरी मिल जाती है वह फिर वहीं बस जाता हैं। और वहाँ पर अपना आशियाना भी बना लेते है, जिसके कारण महानगरों में अब रहने के लिये जमीन बची ही नहीं है। जो खेती की जमीन थी वहाँ पर भी अब बड़े-बड़े *अपार्टमेंट* बन गये हैं और गाँवों का भी तेजी से विकास हो रहा है। किसान भी अपनी जमीन बेंचकर शहरों में आकर बस गये है, और वहीं पर अपना रोजगार कर रहे हैं। खेती की जमीन पर बड़े-बड़े घर बन गये हैं। लोग गाँवों से शहरों की तरफ पलायन कर रहे हैं। जिसका एक कारण शिक्षा भी है बच्चे पढ़-लिखकर नौकरी की तलाश में शहरों में जाते हैं फिर वह वापस गाँवों में रहना नहीं चाहते।

जिस प्रकार हर वस्तु के फायदे होते हैं, तो कुछ नुकसान भी होते है। उसी प्रकार महानगरों की कुछ हानियाँ भी हैं।

महानगरों की जनसंख्या इतनी अधिक हो गयी है कि एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने में बहुत समय लगता है। हमारे यातायात के साधन भीड़ में फंस जाते हैं; और हमें अपने काम पर पहुँचने में देर हो जाती है। उसी प्रकार छात्र-छात्राएँ भी समय पर स्कूल-कॉलेज नहीं पहुँच पाते हैं जो कि सबसे बड़ी हानि है। बढ़ता प्रदूषण हमें कहीं भी स्वच्छ वायु में साँस नहीं लेने देता। हवा के साथ-साथ यहाँ का जल भी प्रदूषित है। स्वच्छ पानी के लिये हमें *आर-ओ* की जरूरत पड़ती है, अब लोग भौतिकवादी अधिक हो गये हैं। एक दूसरे की पहचान, दया, परोपकार आदि भावनाओं का लोप हो गया है। लोगों के सामने सिर्फ स्वार्थ ही सिमट कर रह गया है। यहाँ लोग बहुत व्यस्त हैं। किसी को किसी से मिलने की फुर्सत नहीं है। यहाँ मनुष्य मशीनों का गुलाम बन गया है। लोगों की भाग-दौड़ भरी जिंदगी हो गयी है, समय का अभाव हो गया है, पुलिस के होते हुये भी यहाँ चोरी-डकैती, हत्या, लूटपाट के मामले होते रहते हैं। आवास की समस्या भी महानगरों में अधिक देखने को मिलती है यह है महानगरों की अनूठी तस्वीर जिसमें 'उजाला' भी है, और 'अंधेरा' भी है। महानगरों में प्रवास की समस्या एक विस्फोट रूप ले रही है।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

lk;k gvk vkneh lalkj dk fl QZ Hkkxrk gS] ns[krk ugh

rk: d ukFk ,o vkj-, l- pkjfl ;k
Hkkd vuq i&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

मनुष्य के शरीर में जितने रोग होते है, इच्छाएं उनसे भी अधिक होती हैं। इच्छाएं सागर की उछलती-मचलती तरंगों की तरह होती हैं। इन सागर में प्रतिक्षण उठने वाली लालसाएं वर्षों में बांस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। अनियत्रित कामनाएं इंसान को विपदाओं में डाल देती हैं। वह प्रतिक्षण बेचैन, तनावग्रस्त और बीमारियों से घिर जाता है। उसे इससे निकलने का मार्ग ही नहीं सूझता। वह परिवार से कट जाता है, स्नेहित को नीरस कर देता है। न सुख से जी सकता है और न मर सकता है।

आज का आदमी ऐसा ही जीवन जी रहा है, वह भ्रम में जी रहा है। जो सुख शाश्वत नहीं है, उसके पीछे मृगमरीचिका की तरह भाग रहा है। धन-दौलत, जर-जमीन, जायदाद इस संसार में कभी भी शाश्वत नहीं रहे हैं। पर आदमी मान रहा है कि सब कुछ मेरे साथ ही जाने वाला है। उसकों नहीं मालूम कि पूरी दुनियां पर विजय पाने वाला सिकंदर भी मौत के बाद अपने साथ कुछ नहीं ले गया। फिर भी इंसान आसक्ति के चक्रव्यूह से निकल नहीं पाता। चाहे सुखशीतल बयार मिल सकती है, पर इच्छा की सुरसा का मुंह कभी नहीं भर सकता है। सुख-शांति का एकमात्र उपाय है-इच्छाओं का नियंत्रण। जिसने इच्छाओं पर नियंत्रण करने का थोड़ा भी प्रयत्न किया, वह सुख के रास्ते को पार कर गया।

असीमित कामनाएं दीमक की तरह हैं, जो सुखी और शांत जीवन को खोखला कर देती हैं। कामना-वासना के भंवरजाल में फंसा मन, लहलहाती फसल पर भोले मृग की तरह इंद्रिय विषयों की फसल पर झपट पड़ता है। एक समय ऐसा था जब इंसान कुछ ही चीजों में संतोष कर लेता था, पर आज ऐसी नहीं है। तमाम चीजों को पाने की होड़ लगी हुई है। इसकी अंधी दौड़ में आज का इंसान इस कदर भागा जा रहा है कि उसके लिए कहीं विराम नहीं है। यह हालत भी तब है जब विविध वैज्ञानिक सुविधाओं के बावजूद आज का इच्छाधारी पुरूष तनावपूर्ण जीवन जीने को विवश नजर आ रहा है। ऐसे में भगवान महावीर का जीवन-दर्शन हमारे लिए आदर्श है, क्योकि उन्होंने अपने अनुभव से यह जाना कि सोया हुआ आदमी संसार को सिर्फ देखता है। भोगने और देखने की जीवनशैली ही महावीर की संपूर्ण जिंदगी का व्याख्या सूत्र है। अगर यही व्याख्या सूत्र जन-जन की जीवनशैली बने, तभी इंसान इन समस्याओं से मुक्ति पाकर सुखी और शांतिपूर्ण जीवन का सुख पा सकता है।

---

nh?kZthoh gksrh gS fouezrk

vkj-d- flag ,o vkj-, l- pkjfl ;k
Hkkd vuq i&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku] y[kuÅ

एक साधु बहुत बूढ़े हो गये थे। उनके जीवन का आखिरी क्षण आ पहुँचा। आखिरी क्षण में उन्होंने अपने चेलों और शिष्यों को अपने पास बुलाया। जब सब उनके पास आ गये तो उन्होनें अपना पोपला मुंह पूरा खोल दिया और अपने शिष्यों से बोले ''देखो, मेरे मुंह में कितने दाँत बच गये हैं''। शिष्यों ने उनके मुंह की ओर देखा तथा कुछ टटोलते हुए लगभग एक स्वर में बोले ''महाराज, आपका एक भी दाँत शेष नहीं बचा। शायद कई वर्षों से आपका एक भी दाँत नहीं है''। साधु बोले ''मेरी जीभ तो बची हुई है''। सबने उत्तर दिया ''हाँ आपकी जीभ अवश्य बची हुई है''।

इस पर साधु ने कहा ''पर यह हुआ कैसे? मेरे जन्म के समय जीभ थी और मैं जब चोला छोड़ रहा हूँ तो भी यह जीभ बची हुई है। ये दाँत तो बाद में पैदा हुए पर जीभ से पहले कैसे विदा हो गये? इसका क्या कारण है, कभी सोचा है?'' शिष्यों ने उत्तर दिया ''हमें मालूम नहीं, महाराज आप ही बतलाइये''। उस समय मृदु आवाज में संत ने समझाया ''यही रहस्य बताने के लिए मैंने तुम सबको यहाँ पर बुलाया है। इस जीभ में माधुर्य था और खुद भी कोमल थी, इसलिए वह आज भी मेरे पास है, परन्तु मेरे दाँतो में शुरू से ही कठोरता भी, इसलिए वे बाद में आ कर भी पहले चले गये, अपनी कठोरता के कारण ये दीर्घजीवी नहीं हो सके, दीर्घजीवी होना चाहते हो तो कठोरता छोड़ो विनम्र बनो''।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

;uhdkM&rfud l/kkj dh vko';drk

, l-vkb- vuoj ,o çxfr flg

Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku lLFkku]
y[kuÅ

हिंदी टंकण में यूनीकोड आ जाने के बाद निश्चित रूप से हिंदी टाइपिंग आसान हो गई है मगर कहीं-कहीं ऐसा लगता हैं कि इसमें तनिक सुधार की आवश्यता है। उदाहरण के लिए अगर 'कि' लिखना है तो इसके लिए 'के आई' टाइप किया जाता है किन्तु इसमें पहला विकल्प 'कीय का आता है। 'कि' विकल्प को चुनना पड़ता है। 'कि' के लिए 'के ई ई' टाइप करना अधिक उचित है। यद्यपि एक बार चुनने के बाद पहला विकल्प 'कि' ही आने लगता है परंतु पहली बार में जो प्रवाह होता है उसमें बाधा आ जाती है और त्रुटि की भी संभावना रहती है। अतः पहला विकल्प हूबहू वही आना चाहिए जो कि टाइप किया जाय। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक शब्द टाइप करने में एक से अधिक शब्द बनते हैं। अब यहाँ सार्थक शब्द को प्रथम विकल्प पर रखना उचित है। इसमें भी उस शब्द को वास्तव में कैसे लिखना चाहिए, उसे प्रथम विकल्प पर होना चाहिए। आजकल हिंदी में उर्दू के बहुत से शब्द प्रयोग होते हैं जो हिंदी का अंग बन चुके हैं। इन शब्दों में कुछ वर्ण 'क, ख, ग, ज, ढ, फ, हैं जिनके किए क्रमशः 'क्यू, केएफ, जीएफ, एवं एफ' टाइप किया जाता है। कई बार ऐसा होता है कि पहले विकल्प में वह नहीं आता जिसे वास्तव में आना चाहिए और एक बार फिर टाइप में रूकावट आती है। उदाहरण के तौर पर अगर 'कीमत' लिखना हो तो 'क्यू ई ई एम ए टी टाइप करना होगा पर पहला विकल्प 'कीमत' आता है। 'क्यू' टाइप करने से प्रथम विकल्प 'क' आता है। अतः पहली बार में हूबहू वही चीज आनी चाहिए जिसे टाइप किया जाय, भले ही वो कोई सार्थक शब्द न हो। इसी प्रकार 'खुशियाँ' नहीं आता। 'फ़िजा' भी इसी प्रकार का शब्द है। अगर ढूँढ़ा जाय तो बहुत से ऐसे शब्द मिल जाएंगे।

विकल्प चुनने में बिन्दु में भी परेशानी होती है। जैसे कि अगर किसी को बिन्दु की आवश्यकता है तो पहले विकल्प में पूर्ण विराम आता है परंतु एक बार यदि बिन्दु को चुन लिया गया तो अगली बार बिन्दु ही आना चाहिए, परन्तु पूर्ण विराम आता है और बार-बार बिन्दु चुनने में टाइपिंग प्रवाह में बाधा आती है।

ek¡ dk vykSfdd :i

iYyoh ;kno

pUnHkku xqIr df"k LukrdksÙkj egkfo|ky;]
cD'kh dk rkykc] y[kuÅ

कभी मंदिर कभी पूजा तूने मुझको पाला।
हर पल मेरे दुख पे अपने सुख का आंचल डाला।।
कभी मंदिर, कभी ईश्वर, कभी पूजा का वरदान लगे।
कभी मंदिर कभी ईश्वर, कभी पूजा का वरदान लगे।।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।
कभी तुलसी की रामायण, कभी गीता का ज्ञान लगे।
कभी तुलसी की रामायण, कभी गीता का ज्ञान लगे।।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।
माँ तेरी आँखों मे बरसे अमृत की धारा।
तेरा प्यार तो लगता है सारी दुनिया से न्यारा।।
माँ तेरी आँखों में बरसे अमृत की धारा।
तेरा प्यार तो लगता है सारी दुनिया से न्यारा।।
कभी सीख की बहती गंगा, कभी करूणा की पहचान लगे।
कभी सीख की बहती गंगा, कभी करूणा की पहचान लगे।।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।
मेरे तो होठों में है माँ बस नाम तेरा।
इन कानों की मिट्टी में ही बीते जीवन मेरा।।
मेरे तो होठों में है माँ बस नाम तेरा।
इन कानों की मिट्टी में ही बीते जीवन मेरा।।
मेरी माँ की पावन मूरत, मुझे जग में सबसे महान लगे।
मेरी माँ की पावन मूरत, मुझे जग में सबसे महान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।
बच्चों के सुख में सोये बच्चों के दुख में जागे।
बच्चों के सुख में सोये बच्चों के दुख में जागे।।
कभी पेड़ की ठंडी छाया, कभी स्नेह भरी मुस्कान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।
कभी सीख की बहती गंगा, कभी करूणा की पहचान लगे।
कभी सीख की बहती गंगा, कभी करूणा की पहचान लगे।।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।
मेरी माँ मुझको भगवान लगे।।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

Hkkjrh; xUuk vuqlaèkku laLFkku&mRd"Vrk dk nlj¨k uke

vuhrk lkoukuh] cãiqdk'k ,oa vt; dqekj lkg

Hkkd`vuqi&Hkkjrh; xUuk vuql/kku laLFkku] y[kuÅ

भारतीय भोजन में मीठे का, है अति विशिष्ट स्थान।

आवश्यकता है समय की, दें हम गन्ने पर ध्यान।।

किसानों का सच्चा साथी, देश की अलौकिक शान।

आपके समक्ष प्रस्तुत है, हमारा भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान।।

संस्थान का विजन, वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक व जीवंत गन्ना कृषि करना विकसित।

आय बढ़े, जीवन स्तर सुधरे उनकी, जो हैं देश के गन्ना कृषक व उनके आश्रित।।

संस्थान का मिशन, गन्ने की उत्पादकता, लाभदेयता व टिकाऊपन में करना वृद्धि।

धनवान बनें, खुशहाल रहें, भारतीय गन्ना कृषकों के घर भी आए समृद्धि।।

फसल की उत्पादकता बढ़ाने में प्रजाति का है महत्वपूर्ण अंशदान।

फसल सुधार संभाग ने दिया गन्ने की कई प्रजातियों का योगदान।।

उचित सस्य क्रियाएँ व पादप सुरक्षा की उचित प्रौद्योगिकी ने किया समाधान।

गन्ना उत्पादकों के लिए यह प्रजातियाँ ऐसे सिद्ध हुई जैसे वरदान।।

अच्छी उत्पादकता हेतु परम आवश्यक है स्वस्थ बीज।

अन्य निवेशों का लाभ मिले तभी, सदा याद रखें यह चीज।।

आलू, राजमा, सरसों व गेहूँ के साथ करते, जो गन्ने की खेती।

सदा सुखी रहते वह कृषक, धन की कमी कभी नहीं होती।।

गन्ने के प्रमुख कीट पाइरिला, ऊनी माहू, दीमक, चोटी बेधक व श्वेत भृंग।

फसल की उपज को करें प्रभावित, डाले किसान के रंग में भंग।।

फसल को अत्याधिक प्रभावित करता, गन्ने का लाल सड़न रोग।

इस रोग से बचा ले जो फसल, खाए वो कृषक मोहनभोग।।

फेरोमोन जाल बनाकर किया संस्थान ने नया काम।

चोटी बेधक कीट को पकड़, बचाया गन्ने को तमाम।।

गन्ने की खेती में, श्रमिकों की, समस्या का ढूँढना है यदि निदान।

गन्ने की खेती का यंत्रीकरण करने को सुझाता हमारा संस्थान।।

रिजर टाइप गन्ना कटर-प्लांटर, द्विपंक्ति गन्ना कटर-प्लांटर, रेज्ड बेड सीडर, गन्ना कटर-प्लांटर, पेड़ी प्रबंधन यंत्र।

बढ़ाते गन्ने की उत्पादकता संस्थान द्वारा विकसित गन्ना खेती के यह संयंत्र।।

जो किसान संस्थान के तकनीकी पार्क का एक बार भ्रमण कर जाते।

गोल गड्ढा, गहरी नाली व फर्ब जैसी विधियाँ ही अपनाते।।

वैज्ञानिक हो या मिलकर्मी, स्नात्कोत्तर छात्र हों या गन्ना किसान।

उपलब्ध संसाधनों का उपयोग कर, संस्थान करता सबकी क्षमता निर्माण।।

चीनी उद्योग की चिंताओं का, संस्थान करता है तत्काल निदान।

इंटरफ़ेस बैठकें आयोजित कर, करता विचारों का आदान प्रदान।।

चीनी मिलकर्मी, छात्र व किसान, नहीं अब संस्थान से कोई अंजान।

संस्थान के आयोजनों से मिल रही देश विदेश, में इसको नई पहचान।।

वर्ष 2019 को संस्थान ने दिया है जो सर्व विजेता वर्ष का रूप।

चंद दिनों में मिल गया, संस्थान को एक नया स्वरूप।।

गन्ने के पोर चले क्षितिज की ओर।

फहराये दूर गगन में उत्कृष्टता की डोर।।

रस गुड़ खांडसारी की मिठास बिखेरते जाएं।

आइये इससे कुछ हम भी सीखते जाएं।।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

xUu dh xMkb d fy, ;g dgkor ifl) g

d".k ejkjh flg Þfd lkuß

xke&cjek] ikLV&dFkkok] ok;k&fljklh]
ftyk 'k[kijk ¼fcgkj½

गेहूँ गाहा, धान विदाई। गन्ना गुडाई के आहा।।
अभिप्राय यह है कि गेहूँ के लिए जुताई, धान के लिए विदहनी और गन्ने के लिए गुड़ाई आवश्यक होता है।

सना घना, बन बेगार, मेढ़क फन्दे ज्वार।
पैर पैर पर बाजरा, करै दरिद्रै पार।।
सन को घनी, कपास को बीड़र, ज्वार को मेंढ़क की कुदान के फासले पर और बाजरा एक-एक कदम को दूरी पर बोवें, तो वह बुवाई दरिद्रता हटा देती है।

हरिल फलांग कांकरी, पैग पैग कपास।
जाय कहा किसान से, बौवे घनी उखर।।
हरिन के कए छलांग की दूरी पर ककड़ी और मनुष्य के कदम-कदम की दूरी पर कपास का बीज बोना चाहिए। (कवि घाघ का कहना है कि) किसान से जाकर कहो कि वह ईख को घनी बोवें।

ऊख कन्नई काहे से। स्वाती के पानी पाये से।
ईख कन्नी क्यों हो गई? स्वाती का पानी पड़ गया।

ऊख करे सब कोई, जो बीज में जैछठ न होई।
ईख की खेती तो सभी करें, पर यदि बीच में ज्येष्ठ का (तपने वाला) महीना न हो।

ऊख सरबती दिवला धान। इन्हें छांड़ि जनि बोओं आन।
घाघ कवि का कहना है कि ईख में सरोती ईख और धान में दिबला नामक धान को छोड़कर दूसरा न बोओं, क्योंकि इनमें पैदावार अच्छी होती है।

जेठ में जरै माघ ठरै। तक जीभी पर रोड़ा परै।।
जब ज्येष्ठ मास की तपन में जले और माघ के महीने ठंडक से ठिढुरे तक जवान पर गुड़ से रोड़े पड़ते हैं।

जेकरे ऊखर लगे लोहाई। तेहिपर आवै बड़ी तबाही।
जिसकी ईख में लाह या सूखा रोग लग जाता है। उस पर बड़ी तबाही आती है।

जो तू भेखा माल का। तो ईख करे नाल का।।
कवि का कहना है कि यदि तू धन का भूखा है तो नाले की ओर या नर की ओर ईख बोओं।

fcu ekVh lc luk g] fQj Hkh feVVh lkuk g

v#.k dekj

xUuk fodkl ifj"kn] frrkoh]
eqtQjuxj

मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।
जिस माटी से जीवन पनपा, उसको हमें संजोना है
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
कितना भी हो पुरुष यशस्वी, बिन भोजन जीना कैसा।
कोई नही पचा सकता है, सोना-चाँदी, रुपया-पैसा।
बिना अन्न सब सन्न जगत में, अन्न धरा से होना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
कुदरत ने हर चीज जरूरी, हमको देकर भेजा है।
लेकिन हमने सार छोड़कर, थोथा माल सहेजा है।
मिट्टी है आधार जीव का, बिन माटी क्या होना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
दुर्लभ है यदि मानव तन तो, उसकी संख्या सीमित हो।
जीव, जंतु, कीड़े और पौधे, इनकी वृद्धि असीमित हो।
यही संतुलन है जीवन का, जो थोड़ा है सोना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
खाद्यान्नों का स्वाद छिन गया, अधिक अन्न उपजाने से।
नदी, कुएं, तालाब छिन गये, *सबमर्सिबल* आ जाने से।
जब पानी ही शेष न होगा, क्या कटना क्या बोना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
अमराई की छाव छीन ली, *ए.सी., कूलर,* पंखों ने।
आपस की चौपाल छीन ली *डिश, मोबाइल* और दंगों ने।
जिसको हम समझे है पाना, वो तो सच में खोना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
फसलों का उत्पादन अपना, और डंठल है जीवों का।
जड़ आधार भाग है भोजन, धरती के सूक्ष्मजीवों का।
जो जिसका है मिले उसी को, यह बटँवारा होना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।
माना हमने जीवन के, सुख साधन सारे जुटा लिए।
लेकिन प्रतिरोधक क्षमता के, सारे मानक घटा लिए।
सोचो पैसे के बदले में किन-किन मूल्यों को खोना है।
मिट्टी को निर्जीव न समझो, मिट्टी जीवित सोना है।।

आमोद-प्रमोद प्रभाग

;s ije Kku dh ckrsa gSa] blds gj dksbZ D;k tkus

cã çdk'k

Hkk—vuqi&Hkkjrh; xUuk vuqla/kku laLFkku] y[kuÅ

जीना है यदि जीवन तुमको, केवल अपने हिसाब से।
किसी के *फैन* बनने से बचना, अपनी जी जान से।।
घर के बाहर कैसे रहा जाए यह तो मर्जी हमारी है।
घर में सर्कस के शेर की तरह रहना, मजबूरी हमारी है।
जितना किसी को जरूरत हो, उतना ही दें उसे वक्त।
वरना न आदर आप पाएंगे, न पाएगा आपका वक्त।।
अपनी माँ के फोन रखने के आदेश को तुरंत अवश्य मानें।
माँ के पैरो में जन्नत तो हाथों में डंडा है, यह भी जानें।।
महंगे इतने भी न बनना कि लोग बुला भी न सकें आपको।
सस्ते भी न इतना बनना कि लोग नचाने ही लगें आपको।।
मानव की चाहत होती है उड़ने को पक्षियों जैसे मिलें पर।
पर परिंदे सोचते हैं कि उनको रहने के लिए भी हो घर।।
हम सबके लक्ष्य के मार्ग में एक ही होती है लोच।
चाहे वह पैर की मोच हो, या हो हमारी छोटी सोच।।
यह सच है पैसा इंसान को ले जा सकता है ऊपर।
इंसान मजबूर हैं वो पैसा नहीं ले जा सकता ऊपर।।
सफर का मजा लेना हो तो साथ में रखिए कम समान।
जीने का मजा लेना हो तो, दिल में रखिए कम अरमान।।
सारा जहां उसी का है जो है मुसकराना जानता।
रोशनी उसी को मयस्सर होती है जो शमा जलाना जानता।।
वही इंसान विद्यान है जिनको है इस बात का ज्ञान।
दान दे, सबसे ज्ञान ले व त्यागे जो अभिमान।।
रिश्ते न नशा बनते हैं, न रिश्ते सजा बनते हैं।
दिल से निभाने पर रिश्ते ही, जीने की वजह बनते हैं।।
नए रिश्ते बनने में परेशानी हो तो भी मत करना मलाल।
पुराने रिश्ते टूटने न पाएँ, रखना बस इतना सा ही खयाल।।
मनुष्य को मनुष्य कभी धोखा दे ही नहीं सकता।
उम्मीदें धोखा देतीं हैं जो वह है दूसरों से रखता।।
यह भ्रम है कि दुखों के दूर होने से मन प्रसन्न होगा।
हकीकत ये है कि मन प्रसन्न रखने से दुख दूर होगा।
अंधेरा वहाँ नहीं होता, जहां कोई आदमी गरीब है।
अंधेरा वहाँ है होता, जहां किसी का मन गरीब है।।
सफलता अवश्य कदम चूमेगी, जिसको भी हो यह आस।
तीन का साथ कभी न छोड़ें, कोशिश, सच और विश्वास।।
दुनिया में सबके साथ न कुछ अच्छा होता है, न खराब होता है।
हर व्यक्ति के साथ वही होता है जैसा उसका नजरिया होता है।।
मीठे बोलों से किसी का रक्त बढ़े, तो समझें इसको भी रक्तदान।
प्लेट में खाने लायक ही लें तो यह भी है अन्नदान।।
ईश्वर कभी नहीं लिखता किसी का भी सौभाग्य एवं दुर्भाग्य।
हमारी सोच, व्यवहार व कर्म ही लिखतें हैं हमारा भाग्य।।
यह आवश्यक नहीं कि हर वक्त जुबान पर ईश्वर का नाम आए।
हर लम्हा भक्ति का होता है जब इंसान-इंसान के काम आए।।
किसी मनुष्य का पतन उसी समय ही, है सुनिश्चित हो जाता।
जब वह अपनों को गिराने की सलाह, दूसरों से लेना शुरू कर देता।।
जिंदगी आसान बनाने का, हम बताते हैं आपको एक राज।
कुछ खास अंदाज अपनाइए, कुछ बातें करिए नजरंदाज।।
वर्तमान में ऐसे हो रहा, मानवीय रिश्तों का विस्तार।
जितना जिससे मतलब है, है उतना ही उससे प्यार।।
जीवन वही अच्छा होता है जो दूसरों का जीवन करे रौशन।
जिसके पीछे प्रेम की प्रेरणा हो तथा हो ज्ञान का मार्गदर्शन।।
पहले आदमी में केवल पाँच ही होते हैं अब होते हैं सात ऐब।
वे हैं काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, फेसबुक तथा व्हाट्सएप।।
इन बातों का रखिए ध्यान, जब भी बनाना हो किसी को मित्र।
श्रेष्ठ हो उसके कर्म, विचार, वाणी, व्यवहार, संस्कार व चरित्र।।
केवल उन्हीं लोगों को समय न दें, जो रखते हैं सदा आपको खुश।
थोड़ा वक्त उनको भी दीजिये जो आपको देखकर ही हो जाते हैं खुश।।
गुजरे कल के लिए शुक्रिया, आने वाले कल के लिए तुझ पर है विश्वास।
आज का दिन सबके लिए सुंदर हो, हे ईश बस तुझसे यही अरदास।।
सदा याद रखना तुम यह कि न पैसा होता बड़ा न पद होता बड़ा।
सबसे बड़ा वही है जो आपकी मुसीबत में रहे साथ खड़ा।।
कुछ खास अंदाज अपनाइए, कुछ बातें करिए नजरंदाज।।
एक ही कामना की प्रकृति, सबमें है भिन्न भिन्न होती।
दूसरों के मन की तो खटकती, अपने मन की होने पर सबको भाती।।
जिस प्रकार हर छात्र के लिए इंजीनियरिंग की पढ़ाई होती नहीं आसान।

ठीक वैसे ही बिना बात के लड़ाई करना भी सबके लिया होता नहीं आसान।।
जहां कद्र न हो वहाँ जाना नहीं, अपचनीय चीजें कभी खाना नहीं।
सच पर रूठने वाले को मनाना नहीं, अपनी नजरों से गिरे को उठाना नहीं।।
बमुश्किल पैंतीस प्रतिशत अंक लाकर कक्षा दस उतीर्ण कर आज तक जो घर में हैं बैठे।
व्हाट्सएप, फेसबुक व ट्विटर पर आज बड़े ज्ञानी बने है बैठे।।
पुरुष चाहे कि उसकी जीवनसंगिनी विश्वसुंदरी जैसी दिखे व कान्ताबाई की तरह करे खूब काम।
स्त्री चाहे कि उसका जीवनसाथी अंबानी जैसा कमाए व मनमोहन सिंह की तरह रहे चुप्पी थाम।।
आपका नसीब घर के दरवाजे की चौखट पर घोड़े की नाल लगाने से नहीं चमकेगा।
आपका भाग्य आपके द्वारा स्वयं अपने पैरों में घोड़े की नाल ठुकाने से ही चमकेगा।।
बुजुर्गों ने इतना समझाया कि समय बेकार न करें क्योंकि यह होता है बहुत मूल्यवान।
अतः खर्च भी करना हो तो दूसरों का ही करना, अपने समय का नहीं करना नुकसान।।
महिलायों के रक्तचाप की समस्या घरेलू उपचार से हल होगी लगेंगे सिर्फ चंद मिनट।
हाई होने पर मायके वालों से 20 मिनट बात करें, लो होने पर पति से सिर्फ पाँच मिनट।।
भारत में लोग भले ही हेलमेट न पहनें, मोबाइल पर कवर व स्क्रीनगार्ड अवश्य लगाएंगे।
दुर्घटना में सिर भले ही भूट जाए परंतु मोबाइल पर एक खरोंच नहीं बर्दाश्त कर पाएंगे।।
रोजमर्रा की बड़ी-बड़ी लड़ाइयों को अंग्रेजी का एक छोटा सा शब्द "सॉरी" कर देता है खत्म।
गलती होने पर बंदा कहे तो गुस्सा खत्म, यदि डॉक्टर कह दे तो बंदा ही खत्म।।
आम आदमी की मजबूरी बना देती है प्रत्येक साधारण से आदमी को भी अत्यंत चालू।
मन करे जब खाने का उसका सेब, तो केले का भाव पूछकर, खरीद लेता है वह आलू।।
गहरी नींद में सोने वाले को तेज आवाजों पर भी जब उसके कान न दे रहे हों उसका साथ।
उसके कान में धीरे से कह दीजिये कि उसका मोबाइल उसके पापा के पड़ गया है हाथ।।
कुछ लोग मोहब्बत भी करते हैं तो सरकारी काम की तरह, बगैर करे कोई हल्ला-गुल्ला।
वे न तो प्रेम की फाइल ही आगे बढ़ाते हैं, न किसी प्रीत का बंद ही करते हैं मामला।।
हो सकता है कि धरती पर आपको अन्न, जल व वायु कहीं न मिल पाये।
यह असंभव है कि बारात में चार लोग ज्ञान भरी बातें करते न मिल जाएँ।।
फेसबुक एक ऐसी इकलौती बुक है जिसे हर बच्चे को रोज खोलना है पड़ता।
जिसे खुलवाने के लिए माँ-बाप व टीचर को बच्चों के पीछे नहीं भागना पड़ता।।
जिंदगी में कितने भी दुख मिलें, आँसू बह जाने देना उन्हें मत रोकना।
सदैव याद रखना रुके हुए पाने में ही डेंगू वाले मच्छरों का पैदा होना।।
एक गुरु सबको समान शिक्षा है देता, चाहे हों उसके शिष्य एक या अनेक।
अपनी समझदारी भी माने रखती है वरना अर्जुन व दुर्योधन दोनों के गुरु थे एक।।
घर में हैं पत्नी के बेलन की मार से बचने का कभी नहीं लेना तुम *रिस्क*।
मार से बचने का सर्वोत्तम उपाय यह है कर दो उसको *रोटीमेकर गिफ्ट*।।
एक बार देने के बाद कुछ चीजें वापस नहीं मिलती चाहे वह हों *स्माल* या *लार्ज*।
मुख से निकली वाणी, कमान से निकला तीर व मोहब्बत में कराये गए *रिचार्ज*।।
अपनी चादर के अनुसार पैर फैलाने की बात आपको सदा तब याद आएगी।
जब चादर के बाहर पैर फैलाने से ठंड के मौसम में आपको ठंड लग जाएगी।।
अधिक बुद्धिमान व अधिक मूर्ख दोनों प्रकार के व्यक्ति होतें हैं एक समान।
किसी की भी बात नहीं सुनने का, दोनों में ही होता एक गुण समान।
इंसान जो पाना चाहता है उसे वह चीजें हर जगह दिखती।
पर यह सत्य है कि उसको अपनी ही गलती नहीं दिखती।।

uxj jktHkk"kk dk;kZUo;u lfefr ¼dk;kZy;&3½] y[kuÅ

Nekgh ixfr

संस्थान में दिनांक 25.06.2019 को इस वित्तीय वर्ष की प्रथम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास) बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक में लखनऊ स्थित नराकास (कार्यालय-3) के 69 सदस्य कार्यालयों के कार्यालय प्रमुख एवं उस कार्यालय के हिंदी विद्वाजनों ने भाग लिया। साथ ही संस्थान के राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों ने भी भाग लिया। इस बैठक की अध्यक्षता नराकास (कार्यालय-3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. अश्वनी दत्त पाठक एवं डॉ. ए. के. साह संस्थान के राजभाषा प्रकोष्ठ के प्रभारी एवं सचिव नराकास (कार्यालय-3) उपस्थित थे। इस बैठक में अक्टूबर 2108 से मार्च 2019 के बीच हिंदी में प्राप्त प्रतिवेदन की समीक्षा करने के उपरांत उनका प्रस्तुतीकरण डॉ. ए. के. साह द्वारा किया गया। प्रस्तुतीकरण के उपरांत हिंदी में उत्कृष्ट कार्य करने हेतु 10 कार्यालयों को पुरस्कृत किया गया साथ ही 3 संस्थानों को राजभाषा पत्रिका हेतु सम्मानित किया गया। इसके उपरांत नराकास (कार्यालय-3) के अध्यक्ष एवं संस्थान के निदेशक डॉ. अश्वनी दत्त पाठक ने संस्थान द्वारा हिंदी के कार्यों के बारे में किए जा रहे कार्यों को बताया। विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री अजय मलिक, उप निदेशक (कार्यान्वयन), राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, गाजियाबाद ने भाग लिया उन्होंने ने बताया की 69 कार्यालयों में से केवल 42 कार्यालय ही अभी तक राजभाषा विभाग में पंजीकृत हैं, जो की बहुत कम हैं जो कार्यालय अभी तक पंजीकृत नहीं हैं वह जल्द से जल्द अपने कार्यालय को पंजीकृत करवा लें। इस बैठक में कार्यालयी कार्यों एवं राजभाषा पत्रिका हेतु प्रथम एवं द्वितीय स्थान पाने वाले कार्यालय अध्यक्षों ने भी अपने विचार को रखा। बैठक का संचालन श्री अभिषेक कुमार सिंह, तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने किया था। साथ ही कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत 10 कार्यालयों एवं पत्रिका हेतु पुरष्कृत 3 कार्यालयों को अध्यक्ष महोदय द्वारा मोमेंटों प्रदान किया गया। साथ ही इस दौरान जिन 37 कार्यालयों ने हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया था, उनको प्रमाण पत्र दिया गया।

कार्यालयी कार्यों हेतु पुरस्कृत कार्यालयों की सूची

क्र.सं	कार्यालयों का नाम	स्थान
1	पुलिस उप महानिरीक्षक, ग्रुप केन्द्र, के.रि.पु.बल, बिजनौर, लखनऊ	I
2	सीएसआईआर – भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	II
3	अनुसंधान अभिकल्प और मानक संगठन, (रेल मंत्रालय), लखनऊ	III
4	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, उत्तर रेलवे, लखनऊ	IV
5	क्षेत्रीय पासपोर्ट कार्यालय, विपिन खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ	IV
6	केन्द्रीय विद्यालय, आर.डी.एस.ओ., लखनऊ	V
7	मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, पूर्वोत्तर रेलवे, लखनऊ	VI
8	भा.कृ.अनु.प.– राष्ट्रीय मत्स्य आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ	VII
9	उत्तर रेलवे, रेल इंजन कारखाना, लखनऊ	VIII
10	वेतन लेखा कार्यालय (अन्य श्रेणी), सैन्य चिकित्सा दल, लखनऊ	IX

पत्रिका हेतु पुरस्कृत कार्यालय एवं पत्रिका का नाम

1	**पराक्रमः** ग्रुप केंद्र, केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल,लखनऊ	I
2	**विष विज्ञान संदेशः** सीएसआईआर–भारतीय विषविज्ञान अनुसंधान संस्था, महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ	II
3	**कायाकल्पः** क्षेत्रीय पासपोर्ट कर्यालय, लखनऊ	III

'kCndk'k

A

Aid	सहायता
Aided	सहायता प्राप्त
Aim	लक्ष्य, उद्देश्य
Air base	विमान स्थल, हवाई अड्डा
Airconditioned sleeper class	वातानुकूलित शायिका श्रेणी
Airconditioning	वातानुकूलन
Aircraft	वायुयान
Aircrew	विमानकर्मी
Air field	हवाई क्षेत्र
Air force	वायु सेना
Air freight	हवाई माल भाड़ा, हवाई माल
Air hostess	विमान परिचारिका
Air mail	हवाई डाक
Airport	विमानपत्तन
Air route	वायु मार्ग, हवाई मार्ग
Air strip	हवाई पट्टी
Air traffic	हवाई यातायात
Air worthiness	उड़न योग्यता
Alarm	आपद संकेत, खतरे का संकेत
Alcohol	एल्कोहल
Alderman	पौर–मुख्य, नगर का शासक
Alias	उर्फ, उपनाम
Alien	अन्यदेशीय
Alienable	हस्तांतरणीय, बदलने के योग्य
Alienation	बिक्री, विरक्ति
Alignment	एकत्रीकरण, संरेखण, पंक्ति, रेखा
Allegation	अभियोग, आरोप, शिकायत
Alleged	कथित, निर्दिष्ट
Allegiance	निष्ठा, वफादारी
Alliance	एकरूपता, गठबंधन, मैत्री
Allied services	संबंद्ध सेवाएँ
Allied	संबंद्ध
All inclusive cost	सर्वसमावेशी लागत
All India Service	अखिल भारतीय सेवा
Allocation	आवंटन, बटवारा, निर्धारण
Allocation of business	कार्य नियतन
Allotment	आवंटन
Allotment letter	आवंटन–पत्र
Allotment of fund	निधि आवंटन
Allotment order	आवंटन आदेश
Allow	इजाजत देना, अनुमति देना
Allowable	मान्य, स्वीकार्य, अनुमति योग्य
Allowable expenses	अनुज्ञेय व्यय, अनुमति योग्य
Allow an appeal	अपील मंजूर करना
Allowance	भत्ता, छूट
Allowed time	अनुमति समय
All rights reserved	सर्वाधिकार सुरक्षित
All-risks policy	सर्व–जोखिम बीमा
Alphabetical indexing	वर्णानुसार सूचीयन
Alphabetical slip	अक्षर पर्ची
Alphabetic order	वर्णक्रम, वर्णानुक्रम
Amateur	शौकिया
Amend	संशोधित करना
Amendment	संशोधन
Amount	राशि
Analogous	सदृश, अनुरूप
Analysis	विश्लेषण
Analytical study	विश्लेषणात्मक अध्ययन
Analyzer	विश्लेषक
Animus	आशय, उद्देश्य, भाव
Annex	संलग्न करना
Annexure	संलग्नक
Anniversary	वर्षगाँठ, सालगिरह, बरसी
Annotation	टिप्पण लेखन, टिप्पणी, टीका
Announcement	उद्घोषणा, एलान
Annual Account	वार्षिक लेखा
Annual Report	वार्षिक प्रतिवेदन
Annual Review	वार्षिक समीक्षा
Annuity	वार्षिकी

Anologous post	अनुरूप पद
Anomaly	असंगति, अनियमितता
Anonymous	अनाम
Anti-corruption	भ्रष्टाचार–निरोध
Anticipated expenditure	प्रत्याशित व्यय
Anticipated income	प्रत्याशित आय
Anticipatory bail	अग्रिम जमानत
Antique	पुरानी चीजें, पुरातन अवशेष
Antiquity	पुराना समय, प्राचीन काल
Antirabic clinic	प्रत्यलर्क निदानालय
B	
Booking office	टिकट–घर
Borrow	उधार लेना
Boundary	सीमा
Brain drain	प्रतिभा पलायन
Branch	शाखा
Breach of discipline	अनुशासन–भंग
Breach of trust	विश्वास–भंग
Break down	ठप
Break in service	सेवा में व्यवधान
Break-up	अलग–अलग आंकड़े / विवरण
Breed	नस्ल
Breeder	प्रजनक
Breeding	प्रजनन
Brief	संक्षिप्त
Briefing	जानकारी, सार–समप्रेक्षण
C	
Colleague	सहकर्मी, सहयोगी
Collecting agency	वसूली प्रभार, संग्रहण प्रभार
Colonization	उपनिवेशन, बसाना
Columnist	स्तंभ–लेखक
Commemcement	प्रारंभ
Commendation	प्रशंसा, सराहना
Compensatory allowance	प्रतिपूरक भत्ता
D	
Drastic measures	कठोर कार्रवाई
Draw	आहरण, खिंचाव

Drawing	रेखाचित्र
Drought	अनावृष्टि, सूखा
E	
External audit	बाह्य लेखा परीक्षा
External auditor	बाह्य लेखा परीक्षक
Express	तुरंत, शीघ्र
F	
Fundamental principles	मूलभूत सिद्धांत
Furnish	देना
Further action	अगली कारवाई
Full bench	पूर्ण खंडपीठ
G	
Guardianship certificate	अभिभावकता प्रमाणपत्र
Guard of honour	सम्मान गारद
Guest house	अतिथि–गृह
Guidance	मार्गदर्शन
Guide	मार्गदर्शक, सलाहकार
Guidelines	मार्गदर्शन
Guiding principles	मार्गदर्शी सिद्धांत
Guild	समाज, संघ, श्रेणी, निकाय, मंडली
Guilt	अपराध
Guiltless	निरपराध, बेकसूर
H	
House rent	मकान किराया
House tax	गृहकर
Housing complex	आवासीय परिसर
Hold back	रोकना
Housing society	आवास समिति
I	
Integration	एकीकरण, समेकन, अखंडता
Integrity	सत्यनिष्ठा, ईमानदारी
Intensity	तीव्रता, उग्रता
Intensive	गहन, तीव्र, प्रखर
Inter se	परस्पर, आपस में
Interest	ब्याज
Interfere	हस्तक्षेप करना
Interim	अंतरिम

Interim grant	अंतरिम अनुदान
Interim relief	अंतरिम सहायता
Internal	आंतरिक
Internal audit	आंतरिक लेखा–परीक्षा
Internship	प्रशिक्षुता
Interrogate	पूछताछ करना
Interrupt	बाधा डालना
Intricate	जटिल, कठिन
Introduction	परिचय
Investigation	अन्वेषण, जाँच–पड़ताल
Invoice	बीजक, चालान, बिल
Involved	अंतर्निहित, शामिल, लिप्त
Inward journey	अन्तर्यात्रा
Inward register	आवक रजिस्टर
Inward returns	आवक विवरणियाँ
J	
Judgement	निर्णय
Judicial	न्यायिक
Judicious	विवेकसम्मत
K	
Key	आधारभूत, मूल, कुंजी
Key-board	कुंजी पटल, की बोर्ड
Key industry	आधारभूत उद्योग, मूल उद्योग
Key map	मूल नक्शा
Keynote address	आघार व्याख्यान
Kickback	रिश्वत
Kidnapping	अपहरण, अगवा
Kilovolt	किलोवोल्ट
Kin	संबंधी
KIndergarten teacher	बालवाड़ी शिक्षक
L	
Lien	दाव, पुनर्ग्रहणाधिकार
Life imprisonment	आजीवन कारावास
Limited liability	सीमित देयता
Linkage	सहलग्नता
Liquidation	भुगतान, परिसमापन, विघटन
Literate	साक्षर व्यक्ति, पढ़ा–लिखा
Livelihood	आजीविका, रोजगार, रोजी–रोटी
Livestock	पशुधन
M	
Muster roll	उपस्थिति नियमावली
Mutation	नामांतरण, दाखिल–खारिज
Mutual agreement	पारस्परिक करार
N	
Non-pensionable	ग़ैर–पेंशनी
Non-statutory	असांविधिक
Note sheet	टिप्पणी–पत्रक
Notice board	सूचना पट्ट
O	
Over-work	कार्याधिक्य
Over-writing	अधिलेखन, उपरिलेखन
Overall	समस्त
Overlapping	अतिव्यापी, अतिच्छादन
P	
Provision	प्रावधान
Public notice	सार्वजनिक सूचना
Public notification	सार्वजनिक अधिसूचना
Public relation	जन–संपर्क
Publication	प्रकाशन
Punish	दंड देना
Punishment	दंड, सजा
Pursue	पीछे लगे रहना
Q	
Quota countries	कोटा देश
Quotation	उद्धरण, भाव, दर, दर सूची
Quota utilisation	कोटा उपयोग
Quote	उद्धृत करना, दर बताना
R	
Rubber stamp	रबड़ की मोहर
Rules and regulation	नियम–विनियम
Rules of business	कार्य–संचालन नियमावली
Ruling	निर्णय, नियम, आदेश
Ruling party	शासक दल

S

Stenography	आशुलिपि, शार्ट–हैंड
Sterility	निष्फलता, बॉझ्यपन
Stipulate	अनुबंध करना
Stop press	छपते–छपते
Strange	अजीब, अद्वितीय
Stranger	अजनबी, अपरिचित
Study leave	अध्ययनार्थ छुट्टी
Submission	प्रस्तुतीकरण
Subrule	उप नियम
Subscriber	शुल्कदाता
Subsequent	बाद का
Subsidary	सहायक
Subsidary bodies	सहायक संस्थाएं
Subsidiary register	सहायक रजिस्टर
Sub-standard	अवमानक, घटिया, रद्दी
Substantive	मौलिक, स्वतन्त्र, सारभूत
Substitute	प्रतिस्थापित करना
Suggestion	सुझाव, प्रस्ताव

T

Terminal	समापनीय, आखिरी स्टेशन
Territory	राज्यक्षेत्र, देश, प्रदेश, राज्य
Terrorist	आतंकवादी
Theatre	रंगशाला
Threat	धमकी
Time table	समय–सारणी

U

Unwilling	अनिच्छुक
Unworthy	अपात्र, अनुचित
Up to date	अद्यतन, आधुनिक
Upright	खड़ा स्तम्भ, ईमानदार व्यक्ति
Upset	अस्तव्यस्त होना, गड़बड़ कर देना
Upward communication	ऊर्ध्वमुखी संचार

V

Vulture	गिद्ध
Vulviform	दर्रे के आकार का
Vying	प्रतिरोधी

W

Wind up	समापन, ठप्प होना, चाबी देना
Wipe out	मिटा देना, पूरी तरह से नष्ट हो जाना
Wireless	बेतार
Wireless phone	बेतार फोन, वायरलेस फोन
Wireless set	बेतार सेट
Wiring	वायरिंग, तार स्थापन
Wise	बुद्धिमान
Wit	वाक्–पटुता, बोध, बुद्धि
Withdrawal	वापसी, प्रत्याहरण
Withdrawal of motion	प्रस्ताव की वापिस
Withdrawal slip	प्रत्याहरण पर्ची
Withhold	रोक लेना
Within	अंदर, अंतर्गत
Without delay	अविलंब
Without permission	बिना अनुमति
Withstand	सहन करना, रोकना

X

Xylem	दारू
Xylograph	काष्ठ चित्र
Xyster	खुरचनी

Y

Yucky	घिनौना
Yule	बड़ा दिन
Yummy	बढ़िया, स्वादिष्ट, मजेदार

Z

Zotheca	निवास कक्ष
Zoic	जैव
Zymotic	खमीरी

Ildyudrk
¼vfHk"kd dekj flag ,o cã ildk'k½

आपके पत्र

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
कृषि भवन, डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद मार्ग, नई दिल्ली–110 001
Krishi Bhawan, Dr. Rajendra Prasad Road, New Delhi 110 001

9029/DPC
18/06/19

फा.सं.रा.भा. 3(2)/2019-हिन्दी

दिनांक 12 जून, 2019

परिपत्र

विषय : परिषद के अधीनस्थ संस्थानों में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए "राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार" योजना (2017-18) के संबंध में।

परिषद द्वारा वर्ष 1998-99 से अपने अधीनस्थ संस्थानों में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने हेतु **"राजर्षि टंडन राजभाषा पुरस्कार योजना"** चलाई जा रही है। इस योजना के अंतर्गत वर्ष 2017-18 के दौरान हिन्दी में अपना सर्वाधिक कार्य करने वाले बड़े संस्थानों, "क" और "ख" क्षेत्र के छोटे संस्थानों तथा "ग" क्षेत्र में स्थित संस्थानों को पुरस्कार प्रदान करने का निर्णय लिया गया है। पुरस्कार के लिए चुने गए संस्थानों का विवरण निम्नलिखित है:-

I	**बड़े संस्थानों का पुरस्कार**	**पुरस्कार**
✓	1. भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ	प्रथम पुरस्कार
	2. भारतीय कृषि सांख्यिकी अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली	द्वितीय पुरस्कार
II	**'क' और 'ख' क्षेत्र के छोटे संस्थानों/केंद्रों का पुरस्कार**	
	1. केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर	प्रथम पुरस्कार
	2 राष्ट्रीय समेकित नाशीजीव प्रबंधन अनुसंधान केन्द्र, पूसा, नई दिल्ली	द्वितीय पुरस्कार
III	**'ग' क्षेत्र में स्थित अन्य संस्थानों/केंद्रों का पुरस्कार**	
	1. केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, कोचीन	प्रथम पुरस्कार
	2. राष्ट्रीय प्राकृतिक रेशा अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, कोलकाता	द्वितीय पुरस्कार

उपर्युक्त संस्थानों को ये पुरस्कार भाकृअप के स्थापना दिवस समारोह में प्रदान किए जाएंगे जिसकी सूचना यथा समय दे दी जाएगी।

(एम.एल. गुप्ता)
उप-निदेशक (रा.भा.)

वितरण:

1. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीनस्थ सभी संस्थानों/निदेशालयों/केंद्रों के निदेशक (वैबसाइट के माध्यम से)।
2. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीनस्थ सभी संस्थानों/निदेशालयों/केंद्रों के उप-निदेशक (रा.भा.)/सहायक निदेशक (रा.भा.)हिन्दी अधिकारी/तकनीकी अधिकारी/हिन्दी अनुभाग के प्रभारी को सूचनार्थ प्रेषित (वैबसाइट के माध्यम से)।
3. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद मुख्यालय, कृषि भवन, कृषि अनुसंधान भवन I/II तथा एन.ए.एस.सी. परिसर स्थित समस्त अनुभाग/अधिकारी (वैबसाइट के माध्यम से)।
4. परियोजना निदेशक (डीकेएमए), भाकृअप, कृषि अनु.भवन-I, पूसा, नई दिल्ली-12 को भाकृअप की वैबसाइट में अपलोड करने हेतु।

Regd चिट्ठी

सेवा में,

डा० ए० के० शाह जी
प्रभारी राजभाषा प्रकोष्ठ एवं प्रसार व प्रशिक्षण अनुभाग
भाकृअनुप - भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान
लखनऊ-226002

विषय :- पत्रिका संख्या-10/16/88/2017-18 दिनांक 07/01/2019 के संबंध में,

महोदय,

उपरोक्त विषयक पत्र और 'इक्षु' राजभाषा पत्रिका वर्ष-7 अंक-1, जनवरी-जून 2018 प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

अगले अंक हेतु रचना मांगा गया है जो प्रेषित कर रहा। रचना मौलिक किसानों उपयोगी हो आशा है प्रकाशनार्थ विचार करेंगे।

उपरोक्त अंक किसानों उपयोगी, विद्यार्थी, वैज्ञानिक शोधकर्ताओं तथा राजभाषा व कृषि में रुचि रखने वाले भाईयों व बहनों के लिए उपयोगी है।

भाषा या प्रबंध या रोचक ढंग से गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ को रोचक ढंग से प्रदर्शित किया गया है।

कभी [illegible] संस्थान का शंखनाद है। डा० अश्विनी दत्त पाठक-निदेशक जी की लेखनी मार्गदर्शन कर रहा है।

डा० कमल कुमार शाह जी का 'इक्षु' सार बड़ा ही सारगर्भित है। मैं उनका आभार प्रकट करता हूँ। रचना एक से बढ़कर एक है। सामाजिक, प्रचार कार्य को बल प्रदान करने वाला है।

अतः इक्षु परिवार, पत्रिका समस्त लोगों के जीवन और कार्यों में सफलता की कामना करते हैं नववर्ष व कुंभ 2019 मंगलमय हो। इसी आशा और विश्वास के साथ।

संलग्न - (1) गन्ना या कुछ कहानी
(2) जैविक खेती पत्रिका

आपका ही
कृष्णा मुरारी सिंह किसान
ग्राम- बरका पो०- [illegible], थाना
[illegible] जिला- [illegible] बिहार 841...

समाचार प्रभाग

किसान की स्थिति सुधरेगी तो देश बनेगा सशक्तः राज्यपाल

पायनियर समाचार सेवा। लखनऊ

प्रदेश के राज्यपाल राम नाईक ने कहा है कि किसानों के लिये आज का दिन ऐतिहासिक एवं स्वर्ण दिवस है। प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि के माध्यम से उत्तर प्रदेश के लगभग 2 करोड़ किसानों के खाते में सीधे योजना की धनराशि पहुंचेगी। पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गांधी ने कहा था कि दिल्ली से भेजे गये एक रुपये में से केवल पन्द्रह पैसा ही लाभार्थियों तक पहुंचता है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने ऐसी व्यवस्था की है कि किसानों के खाते में सीधे पूरा पैसा पहुंचेगा। उन्होंने प्रधानमंत्री का धन्यवाद करते हुये अभिनन्दन भी किया। राज्यपाल रविवार को भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ में रविवार को प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना के कार्यक्रम का सजीव प्रसारण एवं किसान मेला आयोजन को संबोधित कर रहे थे।

राज्यपाल ने प्रधानमंत्री का धन्यवाद करते हुये कहा कि किसान आर्थिक रूप से सशक्त होगा तो देश की अर्थव्यवस्था भी सुदृढ़ होगी। भारत के किसानों में प्रतिभा की कमी नहीं है। 1965 में हम गेहूं आयात करते थे। आजादी के बाद आज देश की आबादी तीन गुना बढ़ गयी है पर किसानों का कमाल है कि हम खाद्यान्न का निर्यात कर रहे हैं। उत्पादन तो बढ़ा है पर अनुपात में किसानों की आर्थिक स्थिति में ज्यादा फर्क नहीं आया है, इसीलिये प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने किसानों की आय को दोगुना करने का लक्ष्य रखा है। प्रधानमंत्री द्वारा इस वर्ष के बजट में किसानों की तरह पशुपालकों एवं मछुआरों को भी सस्ता ऋण देने का निर्णय लिया गया है। उन्होंने कहा कि किसान खुशहाल होगा तो देश खुशहाल होगा। केन्द्रीय मंत्री डा. जेपी नड्डा ने कहा कि देश के लिये यह एक ऐतिहासिक क्षण है जिससे किसानों को नई दिशा और दृष्टि मिलेगी। सिंचाई योजना, मृदा परीक्षण योजना, फसल बीमा योजना आदि के साथ प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि वास्तव में एक सराहनीय कदम है। उन्होंने कहा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने किसानों की हालत को ध्यान में रखते हुये उन्हें मुख्यधारा में रखा है। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने अतिथियों का स्वागत करते हुये उन्हें अंग वस्त्र, प्रतीक चिन्ह व पुष्प गुच्छ भेंट किया। कार्यक्रम में कृषि विज्ञान केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. अखिलेश कुमार दुबे ने धन्यवाद ज्ञापित किया। इस अवसर पर प्रदेश के ऊर्जा मंत्री श्रीकांत शर्मा सहित बड़ी संख्या में कृषि विशेषज्ञ एवं कृषकजन उपस्थित थे।

राष्ट्रीय सहारा

सोमवार • 25 फरवरी • 2019

किसान खुशहाल होगा तो देश भी खुशहाल होगा : नाईक

लखनऊ (एसएनबी)। राज्यपाल राम नाईक ने कहा है कि किसानों के लिये आज का दिन ऐतिहासिक एवं स्वर्ण दिवस है। 'प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि' लागू होने से किसान आर्थिक रूप से सशक्त होगा, तो देश की अर्थव्यवस्था भी मजबूत होगी। देश के किसानों में प्रतिभा की कमी नहीं है। 1965 में जहां हम गेहूं आयात करते थे, वहीं नाज आबादी तीन गुना बढ़ने के बाद निर्यात कर रहे हैं। यह किसानों का ही कमाल है। उन्होंने कहा कि किसानों का उत्पादन तो बढ़ा है पर उसके अनुपात उनकी आर्थिक स्थिति में ज्यादा फर्क नहीं आया है। सीलिये पीएम ने किसानों की आय को दोगुना करने का लक्ष्य रखा है। किसान खुशहाल होगा, तो देश भी खुशहाल गा।

पीएम ने किसानों की हालत को देखते हुए उन्हें मुख्यधारा में रखा है : नड्डा

श्री नाईक यहां भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में ायोजित किसान मेला में बोल रहे थे। 'पीएम किसान म्मान निधि' योजना का प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा रखपुर में शुभारंभ करने का सजीव प्रसारण देखने के बाद सान मेले में श्री नाईक ने कहा कि चीनी उत्पादन में यूपी ज देश में सबसे आगे है। पूर्व में महाराष्ट्र में चीनी का ादन सर्वाधिक होता था। पूर्व में उन्होंने पेट्रोलियम मंत्री ते हुये पेट्रोल में ईथनॉल मिश्रण की योजना की शुरुआत थी, जो बंद हो गयी थी। वर्तमान केन्द्र सरकार ने पेट्रोल में ईथनॉल मिश्रित योजना को दोबारा शुरू कर दिया है। इससे जहां एक तरफ पेट्रोल का आयात कम होगा, वहीं दूसरी ओर किसानों को भी शीरा बेचने का लाभ मिलेगा। इससे उनकी आर्थिक स्थिति बेहतर होगी। उन्होंने किसानों को 'चरैवेति! चरैवेति!!' का मर्म समझाते हुये कहा कि किसान को सफलता पाने के लिये निरन्तर प्रयास करते रहना होगा। किसान मेले में आये विशिष्ट अतिथि केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री डॉ. जेपी नड्डा ने कहा कि यह हमारे लिये प्रसन्नता की बात है कि पीएम मोदी गोरखपुर से 'प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि' योजना का श्रीगणेश कर रहे हैं। इससे किसानों को नई दिशा और दृष्टि मिलेगी। सिंचाई योजना, मृदा परीक्षण योजना, फसल बीमा योजना आदि के साथ 'प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि' वास्तव में एक सराहनीय कदम है। पीएम श्री मोदी ने किसानों की हालत को ध्यान में रखते हुये उन्हें मुख्यधारा में रखा है प्रदेश के ऊर्जा मंत्री श्रीकांत शर्मा ने भी मेले में अपने विचार व्यक्त किये। संस्थान के निदेशक डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने अतिथियों का स्वागत करते हुये उन्हें अंग वस्त्र, प्रतीक चिह्न व पुष्प गुच्छ भेंट किया। पीएम द्वारा शुभारम्भ की गयी 'प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि' योजना के दूरगामी परिणाम होंगे। कार्यक्रम में कृषि विज्ञान केन्द्र के अध्यक्ष डॉ. अखिलेश कुमार दुबे ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

लखनऊ : एसकेडी अकादमी के बच्चों ने गन्ना संस्थान द्वारा आयोजित 68वें स्थापना दिवस पर कई प्रतियोगिताओं में भाग लिया। पेंटिंग में नौंवी कक्षा के महीप सिंह ने प्रथम व खुशी वर्मा ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। वहीं सातवीं कक्षा की श्रेया चौरसिया ने प्रथम, सुप्रिया पाठक द्वितीय और तनिष्का ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। अकादमी के निदेशक मनीष सिंह ने प्रतियोगिता में भाग लेने वाले बच्चों की सराहना की। वि.

---

the pioneer

LUCKNOW | WEDNESDAY | FEBRUARY 13, 2019

Chemical-free jaggery to hit markets soon as IISR transfers tech to entrepreneurs

PIONEER NEWS SERVICE ■ LUCKNOW

Chemical-free jaggery will soon be available in the state as Indian Institute of Sugarcane Research (IISR) has transferred its technology to entrepreneurs who want to set up units for the manufacture of the product cleansed without chemicals.

IISR media incharge AK Sah said the manufacturing units were being established in Gorakhpur, Ambedkarnagar and Farrukhabad by entrepreneurs to whom the technology has been transferred. "Normally, the jaggery available in markets is cleansed with soda and hydra for whitening. But these chemicals are corrosive and can cause diseases besides impacting the intestine," he pointed out.

"The jaggery prepared by IISR witnesses vegetable clarification that retains the vitamins and mineral content, making it good for health," he added.

Meanwhile, on the occasion of its 68th Foundation Day, a four-day Ikshu Fest and an international conference, 'Sugarcon-2019', is being organised jointly by SSRP and IISR on February 16.

Under Ikshu Fest, several interesting and informative competitions will be organised for students and women. 'Sugarcon-2019' is being organised to address the critical issues threatening the environmental and economic sustainability of sugar industry and green management interventions to improve the profitability and productivity of sugarcane vis-à-vis a reduction in its cost of production, which will witness participation by the scientists, industrialists and policy-makers of over 10-12 sugarcane producing countries of the world.

वार्षिकोत्सव मनाया

लखनऊ : टीडीएल इंटरनेशनल अकादमी की ओर से वार्षिकोत्सव का आयोजन किया गया। भारतीय संस्कृति के विभिन्न रंगों, प्रांतों की वेशभूषा और झांकियों ने सभी का मन मोह लिया। मुख्य अतिथि पूर्व मुख्य सचिव आलोक रंजन व राम गणेश जी ने बच्चों का उत्साह वर्धन किया। चेयरमैन अभिषेक यादव ने अपने विचार दिए। वि.

प्रतियोगिताओं में बच्चों ने दिखाया हुनर, हुए सम्मानित

विभिन्न प्रतियोगिताओं में विजेता छात्रों के साथ अतिथि

जासं, लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में चल रहे इक्षु महोत्सव में सोमवार को बच्चों ने अपना दम दिखाया। किसी ने पोस्टर बनाया तो किसी ने पुष्प गुच्छ प्रतियोगिता में हुनर दिखाया। यही नहीं बच्चों ने ऊंट व घोड़ा गाड़ी की सवारी का आनंद लिया।

चार दिवसीय इक्षु महोत्सव में सोमवार को विभिन्न स्कूलों के 150 से अधिक बच्चों ने कई प्रतियोगिताओं में भाग लिया। मुख्य रूप से वाद-विवाद, गायन व पुष्पगुच्छ बनाने की प्रतियोगिता में बच्चों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। बच्चों ने विभिन्न विषयों जैसे फेसबुक, व्हाट्सएप, पिकनिक, ट्रांसपोर्ट, फल, माता-पिता इत्यादि पर मात्र एक मिनट में अपने विचार व ज्ञान को प्रस्तुत कर सभी का दिल जीत लिया। संचालन कर रही डॉ. अनीता सावनानी ने बच्चों का उत्साह व जोश बढ़ाया। वहीं शुगरकॉन 2019 के तीसरे दिन सभी प्रतिभागियों ने आज संस्थान की प्रयोगशालाओं एवं शोध प्रक्षेत्रों का भ्रमण किया।

संडे नवभारत टाइम्स। नई दिल्ली/लखनऊ। 17 फरवरी 2019

'हम विश्व के सबसे बड़े चीनी उत्पादक राष्ट्र'

■ एनबीटी, लखनऊ : ब्राजील को पछाड़ कर भारत ने सबसे बड़े चीनी उत्पादक राष्ट्र का दर्जा हासिल किया है। यह अपने आप में बड़ी उपलब्धि है। पिछले दो साल से गन्ने के रेकॉर्ड उत्पादन के लिए भारतीय गन्ना शोध संस्थान बधाई का पात्र है। यह बात शनिवार भारतीय गन्ना शोध संस्थान के 68वें स्थापना दिवस के मौके पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के उप महानिदेशक डॉ. एके सिंह ने कही।

वह संस्थान में शुरू हुई चार दिवसीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी शुगरकॉन और इक्षु (ईख) महोत्सव का उद्घाटन करने आए थे। बतौर मुख्य अतिथि शामिल हुए डॉ. एके सिंह ने कहा कि गन्ने का जरूरत से ज्यादा उत्पादन होने से फसल नियोजन की तरफ भी ध्यान दिया जाना चाहिए। संस्थान के निदेशक डॉ. अश्विनी दत्त पाठक ने पिछले सालों की संस्थान उपलब्धियां नई-नई तक्नीक लोगों से साझा की। आने वाले दिनों में संस्थान किसानों को गुड़ बनाने की तकनीक सिखाने और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए पतंजलि जैसी कंपनियों के साथ एमओयू साइन करेगा। कार्यक्रम के दौरान चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. सुशील सोलोमन, वीएसआई पुणे के महानिदेशक डॉ शिवाजी राव देशमुख, राष्ट्रीय शर्करा संस्थान कानपुर के निदेशक डॉ. नरेंद्र मोहन, निदेशक ने अपने विचार रखे।

इस मौके पर डॉ. एके सिंह ने सौ से अधिक किसानों को गन्ने की उन्नत किस्मों के बीज बांटे। चार दिवसीय संगोष्ठी में चीन, श्रीलंका, थाईलैंड, ब्राजील और बेल्जियम से आए 23 वैज्ञानिक ग्रीन टेक्नॉलजी के विकास पर चर्चा करेंगे। इस दौरान संस्थान के 16 कर्मचारियों को सर्वश्रेष्ठ कर्मचारी का पुरस्कार दिया गया। इस दौरान गन्ना शोध परिषद, शाहजहांपुर के निदेशक जे सिंह, एसके शुक्ला, अमरेश चंद्रा, अनीता मौजूद रहे।

भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान के 68वें स्थापना दिवस समारोह पर हुई अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी

शुगरकॉन और इक्षु (ईख) महोत्सव में गन्ने की फसल के नियोजन पर हुई चर्चा।

'सॉलिड वेस्ट से भी सुधरता है मछलियों का स्वास्थ्य'

■ एनबीटी, लखनऊ : नैशनल ब्यूरो ऑफ फिश जेनेटिक रिसोर्सेस में चल रहे राष्ट्रीय उत्पादकता सप्ताह के पांचवें दिन शनिवार को सॉलिड वेस्ट को मछलियों के उत्पादन में बढ़ोतरी से कैसे जोड़ा जाए विषय पर चर्चा हुई। वैज्ञानिक शरद कुमार ने बताया कि सॉलिड वेस्ट मछलियों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में अहम भूमिका निभाते हैं। कार्यक्रम में डॉ. एके यादव सहित कई वैज्ञानिक मौजूद रहे।

नवभारत टाइम्स। नई दिल्ली/लखनऊ। मंगलवार, 19 फरवरी 2019

रहें स्वस्थ — शुगरकॉन 2019 संगोष्ठी में हुई ग्रीन टेक्नॉलजी पर चर्चा

'वजन घटाने में गन्ने का सिरका कारगर'

वैज्ञानिक एके शाह ने विजेता बच्चों को पुरस्कृत किया।

■ एनबीटी, लखनऊ : भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान (आईआईएसआर) में चल रही अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी शुगरकॉन-2019 के तीसरे दिन सोमवार को गन्ने से संबंधित ग्रीन टेक्नॉलजी पर चर्चा हुई। कार्यक्रम में शामिल हुए वांजी ग्वांजी इंस्टिट्यूट ऑफ शुगरकेन रिसर्च, चीन के निदेशक प्रफेसर यांग रू ली ने कहा कि गन्ने के प्रसंस्करण में मानव स्वास्थ्य के बारे में भी विचार करना चाहिए। साथ ही गन्ने से ऐसे उत्पाद बनाने चाहिए जो पूरी तरह मनुष्य को स्वस्थ रखें। इसमें गन्ने से बना सिरका और गुड़ अहम भूमिका निभा सकते हैं। गन्ने का सिरका रक्त वसा को नियंत्रित करता है। वहीं, वजन घटाने और बढ़े हुए लिवर को भी घटाने में काफी कारगर है। मधुमेह के रोगियों के लिए स्टीविया की पत्तियों का इस्तेमाल कर प्राकृतिक कैलोरी मुक्त उत्पाद भी बनाए जाएं। इसके अलावा संगोष्ठी में आए शोधार्थियों ने संस्थान की प्रयोगशालाओं और शोध प्रक्षेत्रों का दौरा किया।

इक्षु महोत्सव में बच्चों ने दिखाया हुनर : संस्थान में चल रहे इक्षु महोत्सव में सोमवार को अलग-अलग स्कूलों के 150 से अधिक बच्चों ने वाद-विवाद, गायन, आशुभाषण और गुलदस्ता बनाने की प्रतियोगिता में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। आशुभाषण प्रतियोगिता में बच्चों ने फेसबुक, वॉट्सअप, बाढ़, पिकनिक, ट्रांसपोर्ट, फल, डिनर, माता-पिता विषय पर मात्र एक मिनट में अपने विचार रखे। गन्ना चूसने की प्रतियोगिता में भी बच्चों ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया।

प्रोस्टेट की बीमारी से बचाएगी नई दवा

■ एनबीटी, लखनऊ : पचास की उम्र के बाद पुरुषों को होने वाली प्रोस्टेट की बीमारी से बचाने के लिए सीएसआईआर सीडीआरआई ने न्यूट्रास्यूटिक उत्पाद विकसित किया है। यह उत्पाद औषधीय पौधे के फल से तैयार किया गया है। संस्थान के निदेशक प्रफेसर तपस कुमार कुंडू ने बताया कि उत्पाद के लाइसेंसिंग समझौते पर सोमवार को संस्थान के 68 वें स्थापना दिवस के मौके हस्ताक्षर किए गए। निदेशक प्रफेसर तपस कुमार कुंडू ने बताया कि प्रोस्टेट की बीमारी बढ़ती उम्र के पुरुषों में होने वाली सबसे आम बीमारी है, जिसमें प्रोस्टेट ग्रंथि बढ़ जाती।

संस्थान में आयोजित स्थापना दिवस एवं सुगरकार्न

हिंदी कार्यशाला : 11 मार्च, 2019

हिंदी कार्यशाला : 20 मई, 2019

प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि एवं किसान मेला : 24 फरवरी, 2019

नराकास बैठक : 25 जून, 2019

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भाकृअनुप–भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

विजन

उत्कृष्ट, वैश्विक रूप से प्रतिस्पर्धात्मक तथा गन्ने की खेती के लिए एक अग्रणीय अनुसंधान संस्थान के रूप में कार्य करना।

मिशन

भारत की गन्ना एवं ऊर्जा की भावी आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु गन्ने के उत्पादन, उत्पादकता, लाभप्रदता तथा स्थायित्व को बढ़ाना।

अधिदेश

- गन्ने के उत्पादन एवं सुरक्षा तकनीकों के सभी पहलुओं पर मूलभूत एवं अनुप्रयुक्त शोध करना तथा उपोष्ण क्षेत्रों हेतु नवीन प्रजातियों के प्रजनन का कार्य करना
- गन्ने की उन्नत प्रजातियों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास हेतु राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर समन्वित शोध एवं निगरानी करना
- उन्नत तकनीकी का प्रसार एवं प्रशिक्षण।

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

150 YEARS OF CELEBRATING THE MAHATMA

army printing press
www.armyprintingpress.com
Lucknow (0522) 6565333

इक्षु राजभाषा पत्रिका वर्ष 8 अंक 1 जनवरी–जून, 2019